'HINDI KE BLOG AUR SAMKALIN VIMARSH'

A Thesis submitted in Partial Fulfilment of the Requirement
For the Degree of Doctor of Philosophy in Hindi

2020

Researcher

HIMANSHU RAI

16HHPH05

Supervisor

PROF. ALOK PANDEY

Department of Hindi, School of Humanities

University of Hyderabad

Hyderabad - 500046

Telangana

India

'हिन्दी के ब्लॉग और समकालीन विमर्श'

हैदराबाद विश्वविद्यालय की पीएच.डी. (हिन्दी) उपाधि हेतु प्रस्तुत
शोध-प्रबंध

2020

शोधार्थी

हिमान्शु राय

16HHPH05

शोध-निर्देशक

प्रो. आलोक पाण्डेय

हिंदी विभाग, मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय

हैदराबाद- 500046

तेलंगाना

भारत

DECLARATION

I **HIMANSHU RAI** (Registration no. **16HHPH05**) hereby declare that the thesis entitled **'HINDI KE BLOG AUR SAMKALIN VIMARSH' (हिन्दी के ब्लॉग और समकालीन विमर्श)** submitted by me under the guidance and supervision of Professor **ALOK PANDEY** is a bonafide plagiarism free research work. I also declare that it has not been submitted previously in part or in full to this or any other University or institution for the award of any degree or diploma. I hereby agree that my thesis can be deposited in shodhganga / Inflibnet.

04.10.2020

Signature of Supervisor

(Prof. ALOK PANDEY)

Himanshu Rai 04/10/2020

Signature of Student

HIMANSHU RAI

Regd. No. 16HHPH05

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled **'HINDI KE BLOG AUR SAMKALIN VIMARSH' (हिन्दी के ब्लॉग और समकालीन विमर्श)** submitted by **HIMANSHU RAI** bearing Regd. No. **16HHPH05** in partial fulfilment of the requirements for the award of **DOCTOR OF PHILOSOPHY** in **HINDI** is a bonafide work carried out by him under my supervision and guidance.

As for as I know, This thesis is free from plagiarism and has not been submitted previously in part or in full to this or any other University or institution for award of any degree or diploma.

Further, the student has the following publication(s) before submission of the thesis for adjudication and has produced evidence for the same in the form of acceptance letter or the reprint in the relevant area of his research:

A. Published research paper in the following publications :

1. 'STREE VIMARSH AUR HINDI KA BLOG LEKHAN'. (Jigyasa, ISSN 0974-7648), Vol. 12, No. V, May 2019
2. 'AADIWASI ASTITVA AUR HINDI KA BLOG LEKHAN'. (Śodha Pravaha, ISSN 2231-4113), Vol. 8, Issue II, February 2018

B. Research Paper presented in the following conferences :

1. HINDI BHASHA, SAHITY EVM BHARTIYA SANSKRITI VAISHVIK PARIDRISHYA (International), BADRUKA WANIJYA EVM KLA MAHAVIDHYALA HYDERABAD, 14-15/12/2018.
2. HINDI PATRAKARITA EVM HINDI KE BLOG (National), GOVERNMENT OF INDIA COMMISSION FOR SCIENTIFIC AND TECHNICAL TERMINOLOGY, HINDI VIBHAG UNIVERSITY OF HYDERABAD, 5-6 /04/2018.

Further the student has passed the following courses towards fulfilment of coursework requirement for Ph.D. :-

Course Code		Name	Credit	Result
1.	801	Critical Approaches to Research	4	Pass
2.	802	Research Paper	4	Pass
3.	826	the Ideological Background of Hindi Literature	4	Pass
4.	827	Practical Review of the Texts	4	Pass

The student has also passed M. Phil degree of this university. He studied the following courses in this programme.

Course Code		Name	Grade	Credit	Result
1.	701	Research Methodology	B	4	Pass
2.	722	Sociology of Literature	B+	4	Pass
3.	723	philosophy of history literature	B+	4	Pass
4.	726	Sahitya mediya aur sanskrauti	A	4	Pass
5.	750	Dissertation	B	16	Pass

Therefore, the student has been exempted from repeating Research Methodology course (as recommended by the Research Advisory Committee) in his Ph.D. programme.

04.10.2020
Supervisor

04/10/2020
Head of Department

Dean of the School

अनुक्रमणिका

अध्यायीकरण

भूमिका

प्रथम अध्याय- ब्लॉग- परिचय, अर्थ, परिभाषा और स्वरूप, पृष्ठ संख्या- 1-49

1.1 ब्लॉग का परिचय

1.2 ब्लॉग का अर्थ

1.3 ब्लॉग की परिभाषा

1.3.1 भारतीय विद्वानों के अनुसार

1.3.2 पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार

1.4 ब्लॉग का स्वरूप

1.5 तकनीकी पक्ष

द्वितीय अध्याय- हिंदी में ब्लॉग लेखन का इतिहास / विकास यात्रा पृष्ठ संख्या- 50-87

2.1 ब्लॉगिंग का इतिहास

2.2 हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास

2.3 हिंदी ब्लॉगिंग और साहित्य

2.3.1 साहित्यिक ब्लॉगर

2.3.2 गैर साहित्यिक ब्लॉगर

2.4 ब्लॉगिंग की संरचना

2.4.1 व्यक्तिगत ब्लॉग

2.4.2 सामूहिक ब्लॉग

तृतीय अध्याय - हिन्दी का समकालीन ब्लॉग लेखन : एक परिचय
पृष्ठ संख्या- 88-109

3.3.1 व्यक्तिगत ब्लॉग

3.3.1.1 'नौ दो ग्यारह'

3.3.1.2 एकोअहम्

3.3.1.3 समाजवादी जन परिषद

3.3.1.4 ताऊ डॉट इन

3.3.1.5 लोकरंग ब्लॉग

3.3.1.6 शब्दों का सफर

3.3.1.7 खेत खलिहान ब्लॉग

3.3.1.8 दालान ब्लॉग

3.3.1.9 साईं ब्लॉग

3.3.1.10 चक्रधर का चकल्लस

3.3.1.11 मनोज वाजपेयी

3.3.2 सामूहिक ब्लॉग

3.3.2.1 कबाड़खाना

3.3.2.2 नारी ब्लॉग

3.3.2.3 चोखेरबाली

3.3.2.4 भड़ास

चतुर्थ अध्याय- हिंदी के ब्लॉग और समकालीन विमर्श पृष्ठ संख्या- 110-249

4.1 विमर्श: शब्द का अर्थ एवं परिभाषा

4.1.1 विमर्श: शब्द का अर्थ

4.1.2 विमर्श: शब्द की परिभाषा

4.2 'हिंदी ब्लॉग और स्त्री विमर्श'

4.2.1 स्त्री विमर्श की परम्परा और हिन्दी का ब्लॉग लेखन

4.2.1.1 पाश्चात्य सन्दर्भ

4.2.1.2 भारतीय सन्दर्भ

4.2.2 आधुनिक काल में स्त्री

4.2.3 चयनित ब्लॉग में स्त्री छवि

4.2.4 नारी सशक्तिकरण और ब्लॉग

4.3 'हिंदी के ब्लॉग और दलित विमर्श'

4.3.1 दलित: शब्द का अर्थ

4.3.2 दलित: शब्द का अर्थ, विभिन्न विद्वानों के अनुसार

4.3.3 दलित विमर्श: अवधारणा और स्वरूप

4.3.4 दलित विमर्श: वर्ग एवं वर्ण का सवाल

4.3.5 सहानुभूति और स्वानुभूति का प्रश्न

4.3.6 विभिन्न ब्लॉगों में दलित छवि

4.3.7 दलित मुक्ति का प्रश्न और पूँजीवाद

4.3.8 दलित समस्या और कानून

4.3.9 दलित विमर्श: सीमाएँ एवं सम्भावनाएं

4.3.10 दलित चेतना का अस्तित्त्व बोध और कानून

4.3.11 दलित चेतना आर्थिक बनाम सामाजिक

4.4 'हिंदी ब्लॉग और आदिवासी विमर्श'

4.4.1 आदिवासी शब्द का अर्थ परिभाषा एवं स्वरूप

4.4.2 आदिवासी साहित्य की अवधारणा और हिंदी का ब्लॉग लेखन

4.4.3 आदिवासी साहित्य की कसौटी और हिंदी ब्लॉग

4.4.4 आदिवासी अस्मिता अस्तित्व का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

4.4.5 आदिवासी समाज का संकट, विस्थापन की समस्या और हिंदी के ब्लॉग

4.4.6 आदिवासी माओवाद की समस्या का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

4.4.7 आदिवासी दलित प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

4.4.8 आदिवासी भाषाओं का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

4.5 हिंदी ब्लॉग और सांप्रदायिकता

4.5.1 साम्प्रदायिकता और हिन्दू-मुस्लिम

4.5.2 सांप्रदायिकता, ब्रिटिश नीतियां और पाकिस्तान

4.5.3 साम्प्रदायिकता और धार्मिकता और

4.5.4 साम्प्रदायिकता और संस्कृति

4.5.5 साम्प्रदायिकता के कारण

4.5.6 भारत में सांप्रदायिकता के कारण

4.5.7 साम्प्रदायिकता के दुष्परिणाम

4.5.8 साम्प्रदायिकता रोकने के उपाय

4.6 हिंदी ब्लॉग और पर्यावरण विमर्श

4.6.1 पर्यावरण संरक्षण और धारणीय विकास

4.6.2 पर्यावरण आंदोलन का इतिहास

4.6.3 पर्यावरण संरक्षण और जनप्रतिनिधित्व राजनीति

4.6.4 पर्यावरण प्रदूषण और वैश्वीकरण

4.6.5 पर्यावरण प्रदूषण और समाधान के लिए किए गए वैश्विक प्रयास

पंचम अध्याय- हिंदी के ब्लॉग और अन्य विमर्श, पृष्ठ संख्या- 250-266

5.1 किन्नर विमर्श और ब्लॉग

5.2 वृद्ध विमर्श और ब्लॉग

5.3 मीडिया विमर्श और ब्लॉग

षष्ठम अध्याय - हिंदी ब्लॉग : चुनौतियाँ एवं संभावनाएं, पृष्ठ संख्या- 267-293

6.1 मुख्यधारा की पत्रकारिता और ब्लॉग

6.2 ब्लॉग की क्षमता

6.3 हिंदी ब्लॉगिंग की भविष्य में संभावनाएँ

6.4 ब्लॉग पत्रकारिता या वैकल्पिक मीडिया के रूप में एक चुनौती

6.5 हिंदी फाँट की समस्या

6.6 ब्लॉग पर मौजूद सामग्री की विश्वसनीयता

6.7 इंटरनेट साक्षरता

6.8 भाषायी कौशल

6.9 हिंदी टाइपिंग

6.10 हिंदी ब्लॉगिंग की भाषा

उपसंहार, पृष्ठ संख्या-294-306

संदर्भग्रंथ- पृष्ठ संख्या, 307-313

शोध आलेख, पृष्ठ संख्या- 314-324

शोध सेमिनार, पृष्ठ संख्या- 325-327

भूमिका

'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं'

इस पंक्ति में गोस्वामी तुलसीदास स्वतंत्रता पर विचार करते हुए कहते हैं कि स्वाधीनता ही सर्वोपरि है, क्योंकि पराधीन व्यक्ति सपने में भी सुखी नहीं हो सकता।

पराधीनता हमें कई रूपों में देखने को मिलती है जिसको मुख्य रुप से दो भागों में बांट सकते हैं आंतरिक और बाह्य। यहाँ बाह्य पराधीनता से तात्पर्य बाह्य तथा आवश्यक संसाधनों के लिए दूसरों की अधीनता से है और आंतरिक पराधीनता का तात्पर्य वैचारिक पराधीनता से है जो कि अधिक कष्टदायी होती है, क्योंकि यदि कोई व्यक्ति वैचारिक रूप से स्वतंत्र नहीं है तो स्वतंत्र दिखता हुआ व्यक्ति भी गुलाम ही कहलाता है,जिसके संदर्भ में प्लेटो का मानना है कि वैचारिक गुलामी मृत्यु से भी भयावह होती है। इसलिए स्वतंत्रता के सन्दर्भ में विचार के महत्व को स्पष्ट करते हुए संत तुलसीदास कहते हैं कि जब विचार करेंगे चिंतन करेंगे तभी हम अपनी पराधीनता को पहचान और समझ पाएंगे और उसको दूर करने के लिए प्रयत्न करेंगे।

वैचारिक पराधीनता को दूर करने वाले साधनों में सोशल मीडिया एक मील का पत्थर माना जाता है। यह एक ऐसा प्लेटफॉर्म है जो प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचारों को निर्बाध गति से अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है जहाँ हम अपने विचारों को अपनी सुविधा और सहजता के अनुसार अभिव्यक्तकर सकते हैं। यद्यपि वैचारिक स्वतंत्रता मुख्यधारा की मीडिया में भी संभव है लेकिन मुख्यधारा की मीडिया में यह स्वतंत्रता ज्यादातर समाज के प्रभावशाली वर्गों को ही प्राप्त है अर्थात सभी वर्गों के लिए संभव नहीं है किंतु संचार क्रांति के इस दौर में प्रत्येक व्यक्ति इंटरनेट या किसी न किसी संचार माध्यमों से जुड़ा हुआ है और उनका प्रयोग करता है। अतः सोशल मीडिया के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को वैचारिक स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त हो जाता

है वर्तमान में सोशल मीडिया का बहुआयामी विकास हुआ है जिसमें सोशल मीडिया के कुछ प्रमुख आयाम निम्नलिखित हैं।

व्हाट्सएप- इसमें संदेश को तीव्र गति से प्रचारित-प्रसारित करने का काम बड़ी ही सहजता से किया जाता है। इस वजह से कम समय में किसी भी सन्देश को ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहचानें का काम किया जाता है। परन्तु कभी-कभी इन संदेशों की सत्यता की जांच किये बगैर आमजन तक सन्देश पहुँचा दिया जाता है जिसका नकारात्मक प्रभाव भी देखने को मिलता है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि इसमें (व्हाट्सएप में) जाँच-परख का कोई प्रमाणिक आधार या रिफरेंस देने की अभी तक व्यवस्था नहीं बन पाई है जिस कारण अप्रमाणिक खबर भी तीव्र गति से प्रसारित होती रहती है, जिसका समाज में नकारात्मक प्रभाव देखने को मिलता है।

व्हाट्सएप में डाटा चोरी के भी आरोप लगते रहे हैं। कभी कभी ऐसा सुनने में आता है कि आपके व्हाट्सएप पर एक लिंक आया है और आपने उस लिंक को ओपन किया तथा लिंक भरा, परिणाम स्वरुप आपकी पर्सनल डिटेल चोरी हो जाती हैं और कभी-कभी तो बैंक से पैसे भी ट्रांसफर होने की खबरें भी सुनाई पड़ती हैं।

इंस्टाग्राम- यह चित्रात्मक अभिव्यक्ति का साधन है। इसमें मुख्य रूप से फोटो और वीडियो अपलोड किया जाता है। कुछ लोग थोड़ी बहुत लेखन का कार्य भी करते हैं परन्तु इसकी ख्याति फोटो और वीडियो के रूप में ही प्रचलित है।

ट्विटर - ट्विटर में शब्द सीमा नियत होती है। इसमें पहले 140 शब्दों की सीमा हुआ करती थी जिसे बाद में बदलकर दो गुनी यानी 280 कर दिया गया है। बहरहाल, चीनी, जापानी और कोरियाई भाषा में लिखने वाले लोगों के लिए अक्षरों की सीमा अभी भी 140 ही रहेगी क्योंकि इन भाषाओं में लिखने के लिए बेहद कम कैरेक्टर की जरूरत होती हैं।

ट्विटर पर लिखे पोस्ट को खोजने में असुविधा होती है जो पोस्ट पहले लिखी गई रहती है वह सबसे नीचे चली जाती है और जो पोस्ट सबसे बाद में लिखी जाती है वह सबसे ऊपर रहती है। हालाँकि इसमें एक सुविधा दी गई है जिसके अंतर्गत हम कोई भी तीन पोस्ट को पिन कर सकते हैं अर्थात आप अपने किसी भी तीन पोस्ट को अपने प्रोफाइल पर जब तक चाहे तब तक के लिए सबसे ऊपर रख सकते हैं। इसके अंतर्गत आपको जो पोस्ट अच्छी लगती है या आप जिस पोस्ट को ज्यादा लोगों तक पहुँचाना या दिखाना चाहते हैं उसको पिन कर सकते हैं, लेकिन कभी-कभी इसका नकारात्मक प्रभाव भी हमें ट्रोल के रूप में देखने को मिलता है।

ट्रोल के अंतर्गत ट्विटर यूजर को एक समस्या का सामना करना पड़ता है। वह यह है कि आप के नाम तथा आपके फोटो का प्रयोग करके उसका गलत इस्तेमाल किया जाता है इसको फेंक या पैरोडी अकाउंट भी कहते हैं। इसके अंतर्गत किसी के विचार या लेखन पसंद न आने पर ट्रोलर्स (नकारात्मक टिप्पणी करने वाले लोग) फेक अर्थात पैरोडी अकाउंट का इस्तेमाल कर आपके विचार और लेखन को नकारात्मक दिशा देने का प्रयास करते हैं।

फेसबुक- फेसबुक में यूजर्स (उपभोक्ताओं) के लिए पांच हजार की सीमा निर्धारित की गई है। अर्थात पांच हजार लोग ही आपसे जुड़ सकते हैं, फेसबुक पर डाटा शेयरिंग अर्थात आपके डाटा को पब्लिक करने सम्बन्धी आरोप आज भी लगते रहते हैं, इसके अंतर्गत जो पर्सनल डीटेल्स आप फेसबुक पर एकाउंट बनाते समय भरते हैं जैसे आपका परिचय, पसंद-नापसंद आदि यह सब जानकारी थर्ड पार्टी तक पहुँच जाती है।

बदलती नीतियों की वजह से फेसबुक के नए संस्करण रिलीज होने के बाद उसकी प्राइवेसी सेटिंग भी बदल जाती है और वह स्वत: डिफॉल्ट पर आ जाती है। इसके अंतर्गत जो डिटेल्स आप फेसबुक में जुड़े हुए मित्रों तक ही शेयर करना चाहते हैं या शेयर करना नहीं चाहते हैं ऐसी सेटिंग आप अपने फेसबुक अकाउंट में निश्चित करते हैं लेकिन जब फेसबुक का नया

संस्करण आता है अर्थात जब फेसबुक अपडेट होता है तो आपकी सारी सेटिंग डिफाल्ट में चली जाती है। (पब्लिक फॉर्म में हो जाती है) इस तरह जाने-अनजाने में उपभोक्ता की गोपनीय जानकारी दूसरों तक पहुँच जाती है उपरोक्त माध्यमों की भाँति ब्लॉग भी वैचारिक स्वतंत्रता को अवसर प्रदान करता है किन्तु इसका स्वरूप सोशल मीडिया के अन्य माध्यमों की अपेक्षा अकादमिक तथा शैक्षिक जगत के अनुरूप है।

सोशल मीडिया के उपरोक्त माध्यमों का स्वरूप इस प्रकार से निर्मित किया गया है जिसमें वैचारिक अभिव्यक्ति के साथ-साथ मनोरंजन का तत्त्व भी सम्मिलित है जिस कारण ब्लॉग से इतर माध्यमों पर अभिव्यक्ति सरल तथा मनोरंजनात्मक है। जबकि ब्लॉग के स्वरूप में मनोरंजन के तत्त्वों की प्रधानता के स्थान पर गंभीरता को प्रधानता दी गयी है जिसके कारण ब्लाग गंभीर विचारकों तथा शिक्षाविदों की पहली पसंद है। गंभीरता के कारण ही ब्लाग लेखन एवं चिंतन साहित्यिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण बन जाता है। यही कारण है की शोधार्थी ने ब्लॉग को साहित्यिक विकास का आयाम मानते हुए शोध-कार्य को स्वरूप प्रदान किया है जिसकी रूप-रेखा इस प्रकार है।

प्रस्तुत शोध –प्रबन्ध को विषय-वस्तु के अनुरूप अध्ययन एवं विश्लेषण की दृष्टि से पाँच अध्यायों में विभक्त किया है। ये पाँच अध्याय निम्नलिखित हैं :-

प्रथम अध्याय में मैंने 'ब्लॉग-परिचय, अर्थ, परिभाषा, स्वरूप' को सात भागों में यथा- ब्लॉग का परिचय, ब्लॉग का अर्थ, ब्लॉग की परिभाषा, भारतीय विद्वानों के अनुसार, पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार, ब्लॉग का स्वरूप, तकनीकी पक्ष में विभाजित कर उसका विवेचन किया गया है।

द्वितीय अध्याय में 'हिंदी में ब्लॉग लेखन का इतिहास / विकास यात्रा' के अंतर्गत ब्लॉगिंग का इतिहास, हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, हिंदी ब्लॉगिंग और साहित्य, ब्लॉगिंग की संरचना, व्यक्तित्गत ब्लॉग, सामूहिक ब्लॉग में विवेचन करने का प्रयास किया है।

तृतीय अध्याय में 'हिंदी का समकालीन ब्लॉग लेखन ; एक परिचय' के अंतर्गत व्यक्तिगत ब्लॉग और सामूहिक ब्लॉग यथा- एकोअहम्, समाजवादी जन परिषद, ताऊ डॉट इन, लोकरंग ब्लॉग, शब्दों का सफर, खेत खलिहान ब्लॉग, दालान ब्लॉग, साईं ब्लॉग, तीसरा खंभा, चक्रधर का चकल्लस, कबाड़खाना, नारी ब्लॉग, चोखेरबाली ब्लॉग,भड़ास आदि ब्लॉगों के अंतर्गत पर विचार-विमर्श करनें का प्रयास किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में 'हिंदी के ब्लॉग और समकालीन विमर्श', के अंतर्गत विमर्श: शब्द का अर्थ एवं परिभाषा, हिंदी के ब्लॉग और दलित विमर्श,'हिंदी ब्लॉग और स्त्री विमर्श','हिंदी के ब्लॉग और आदिवासी विमर्श', हिंदी ब्लॉग और सांप्रदायिकता, हिंदी ब्लॉग और पर्यावरण विमर्श के सन्दर्भों का विवेचन करने का प्रयास किया गया है।

पंचम अध्याय में 'हिंदी के ब्लॉग और अन्य विमर्श' के अंतर्गत किन्नर विमर्श और ब्लॉग, वृद्ध विमर्श और ब्लॉग, मीडिया विमर्श और ब्लॉग के विविध सन्दर्भों को विवेचित और विश्लेषित करने का प्रयास किया है।

षष्ठम अध्याय में 'हिंदी ब्लॉग : चुनौतियाँ एवं संभावनाएं' के अंतर्गत मुख्यधारा की पत्रकारिता और ब्लॉग, ब्लॉग की क्षमता, हिंदी ब्लॉगिंग की भविष्य में संभावनाएँ, ब्लॉग पत्रकारिता या वैकल्पिक मीडिया के रूप में एक चुनौती, हिंदी फॉण्ट की समस्या, ब्लॉग पर मौजूद सामग्री की विश्वसनीयता, इंटरनेट साक्षरता, भाषायीकौशल, हिंदी टाइपिंग, हिंदी ब्लॉगिंग की भाषा पर विचार करते हुए भाषा की अभिव्यक्ति पर चर्चा करने का प्रयास किया है।

शोध-प्रबंध के अध्ययन के दौरान साहित्यिक समाजशास्त्रीय, वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपागमों का सहारा लिया गया है। इन उपागमों के आलोक में विषय को सरल तथा उसकी प्रस्तुती प्रभावात्मक करने में सुविधा हुई है। इन उपागमों के साथ तुलनात्मक, आलोचनात्मक, विवेचनात्मक, विवरणात्मक तथा व्याख्यात्मक पद्धतियों का प्रयोग करके विषय को तार्किक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। शोध-प्रबंध अपने पूर्व किये गये कार्य जो की शोधार्थी के द्वारा प्राप्त हो पाए है उनके अवलोकन के अनुरूप किया गया है। यह शोध-प्रबन्ध हिंदी भाषा के आधुनिक विषय ब्लॉग पर लिखा गया है अतः पुस्तकों के साथ-साथ चयनित ब्लॉग प्रस्तुत शोध की प्रमुख सामग्री है।

शोध-कार्य अपने आप में इस दृष्टि से भिन्न है की उसमें सामान्य विचार की अपेक्षा ब्लॉगों को साहित्यिक सामग्री के रूप में देखा गया है तथा उन्हें आधुनिक हिंदी के स्वरूप के निर्धारक तत्त्व के रूप में स्वीकार करके प्रबंध को प्रस्तुत किया गया है।

शोध-प्रबंध का उद्देश्य

हमेशा से समाज साहित्य को प्रभावित करता आया है। समाज में चल रहे विमर्शों के अनुरूप साहित्य का सृजन एक निश्चित प्रक्रिया है। ब्लॉग लेखन की एक आधुनिक तथा तकनीकी पद्धति है। हम कह सकते हैं कि ब्लॉग के आविष्कार ने हिंदी लेखन को एक नयी गति तथा पाठकों को उपलब्ध करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसीलिए अगर ब्लॉग को हम तकनीकी साहित्य कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

ब्लॉग भी साहित्य की भांति सामाजिक संदर्भों तथा विमर्शों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है। यही कारण है कि प्रस्तुत शोध का उद्देश्य समकालीन विमर्शों के ब्लॉग पर प्रभाव को स्पष्ट करना है। चूँकि ब्लॉग अभिव्यक्ति का एक तकनीकी माध्यम है अतः तकनीक के

माध्यम से साहित्यिक अभिव्यक्ति में आने वाली चुनौतियों को भी समाज के सम्मुख प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

विषय की नवीनता तथा उद्देश्य के अनुरूप समाज में चल रहे विमर्शों को प्रस्तुत करने में विश्लेषणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है तथा उन विमर्शों को चयनित ब्लॉगों की सामग्री के अनुसार तुलनात्मक तथा व्याख्यात्मक विधि का प्रयोग करते हुए प्रस्तुत किया गया है।

उपलब्धियाँ एवं संभावनाएँ

1 प्रस्तुत शोध के माध्यम से विमर्श को तकनीकी की दुनिया में विचार-विमर्श करने के लिए एक नया मंच प्राप्त हो रहा है।

2 तकनीकी की दुनिया में विमर्श को स्थान मिलने से विमर्श की पहुँच उन लोगों तक अनायास पहुँच गयी है जिनके हाथ में स्मार्टफोन मौजूद है, बस एक क्लिक की दूरी तय करनी है।

3 प्रस्तुत शोध के माध्यम से शोधार्थियों के लिए एक नया मंच मिलेगा जिससे शोधार्थी ब्लॉगों की दुनियाँ के बारे में जानकारी के साथ-साथ उनकी रचना प्रक्रिया को समझ पाएंगे।

4 इस शोध के माध्यम से विभिन्न ब्लॉगों और उन पर पोस्ट किये गये सामग्री के कंटेंट को एक आलोचनात्मक दृष्टि से देख पाएंगे और नई – नई संभावनाओं की तलाश कर पाएंगे।

5 प्रस्तुत शोध-कार्य हिंदी साहित्य के लिए एक नया विषय है जिससे आगे आने वाले शोधार्थियों का इस दिशा में मार्ग प्रशस्त होगा और हिंदी ब्लॉगिंग के लिए भी यह कार्य एक नई दिशा देने का प्रयास करेगा।

कृतज्ञता-ज्ञापन

प्रस्तावित शोध-कार्य के चयन से लेकर शोध-कार्य की पूर्णता की यात्रा में मेरे शोध-निर्देशक प्रो. आलोक पाण्डेय की प्रेरणा और सुझाव पाकर ही मैं इस क्षेत्र में शोध-कार्य करने के लिए तत्पर हुआ। उन्होंने मेरी हर कठिनाई दूर की और उचित मार्गदर्शन तथा शोध-प्रबंध को परिपूर्ण कराने हेतु हर सम्भव सहयोग किया, उन्हें कोटि-कोटि धन्यवाद।

आकाश की तरह जिनका स्नेह और प्रेम मिला पूज्य पिता श्री राजेश राय और माँ आशा राय के आशीर्वाद से इस शोधकार्य को पूर्ण करने में सक्षम हो पाया हूँ, उन्हें सादर प्रणाम!

हैदराबाद विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के प्रो. सच्चिदानंद चतुर्वेदी, प्रो. गजेंद्र कुमार पाठक के साथ-साथ सभी अध्यापकों का विशेष धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने समय-समय पर अपने बहुमूल्य सुझावों के द्वारा मेरे मार्ग की कठिनाइयों को दूर करके शोध कार्य को पूर्ण करने में अप्रतिम सहयोग किया।

दिल्ली विश्वविद्यालय की प्रो. कुमुद शर्मा और प्रो. कैलाश नारायण तिवारी का आभार व्यक्त न करना मेरी कृतघ्नता होगी क्योंकि उनके स्नेह और अनुकम्पा के बिना कार्य पूर्ण कर पाना कथमपि संभव नहीं था। मोतिहारी महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय के प्रो. अरुण कुमार भगत का विशेष आभार व्यक्त करना चाहता हूँ जिनके विद्वतापूर्ण मार्गनिर्देशन ने सदैव मेरा मार्ग-प्रशस्त किया है।

मैं अपने साथी ब्रजेश कुमार मिश्र (प्रभु) का विशेष तौर पर आभार व्यक्त करना चाहूँगा जिन्होंने मुझे आध्यात्मिक और मानसिक ऊर्जा प्रदान की और समय-समय पर मेरा सहयोग किया। साथ ही मेरे अग्रज अनिल विश्वकर्मा और मेरे अनुज साथी शेषांक चौधरी और विनायक उनियाल का धन्यवाद करना चाहूँगा जिन्होंने मेरा बड़ा सहयोग किया उसके लिए मैं उनका

आभार व्यक्त करता हूँ । शोध-प्रबंध के सामग्री संकलन में हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय ग्रंथागार, दिल्ली विश्वविद्यालय के कला संकाय के ग्रंथालयों में उपलब्ध सामग्री ने मुझे शोध-कार्य में मदद की । इन ग्रंथालयों की समुचित सुव्यवस्था एवं कर्मचारियों के सहयोग के कारण शोध से सम्बन्धित अत्यंत महत्वपूर्ण सामग्री संकलन में सहायता मिली ।

अंत में मैं अपने शोध-निर्देशक के अनवरत आशीष के लिए कृतज्ञ हूँ, जिनकी शुभाकांक्षाओं एवं आशीर्वाद का प्रसाद मेरे शोध-कार्य की सिद्धि बन सका । साथ ही अपने सहपाठी मित्रों के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ जिनके साथ जीवन के महत्वपूर्ण वर्ष बिताए ।

...धन्यवाद
हिमान्शु राय
हिंदी-विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय

प्रथम अध्याय

ब्लॉग-परिचय, अर्थ, परिभाषा, स्वरूप

प्रथम अध्याय- ब्लॉग-परिचय, अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

1.1 ब्लॉग का परिचय

1.2 ब्लॉग का अर्थ

1.3 ब्लॉग की परिभाषा

1.3.1 भारतीय विद्वानों के अनुसार

1.3.2 पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार

1.4 ब्लॉग का स्वरूप

1.5 तकनीकी पक्ष

1.1 ब्लॉग का परिचय

मनुष्य अपने आस-पास और दूर-सुदूर के बारे में जानने को सदैव इच्छुक रहा है। मीडिया, समाचार पत्र या ब्लॉग के पीछे मनुष्य की यही अवधारणा रही है। वह कुछ अपनी कहना चाहता है और दूसरों की कुछ सुनना चाहता है। यह मनुष्य का स्वाभाविक धर्म है। कहा जाता है कि जानकारी देना और जानकारी पाना मनुष्य का स्वभाव है। यह स्वभाव विभिन्न रूपों में प्रकट होता है, जिससे ब्लॉग का जन्म होता है।

प्राचीन काल में जब छापने की मशीन और इंटरनेट इत्यादि संसाधन नहीं थे तब राजाओं के आदेशों को प्रकाशित करने का कार्य शिलालेखों तथा स्तंभ लेखों के द्वारा किया जाता था ताकि राजा की नीतियों को जनसाधारण तक पहुँचाया जा सके। भारत में अशोक के शिलालेख आज भी उस काल की पत्रकारिता अवशेष के रूप में विद्यमान हैं।

इस तरह धीरे-धीरे छापेखाने की मशीन सामने आई तो इन समाचारों का संकलन करके छापने का कार्य आरंभ हुआ। फिर टेलीविजन आया तो इन समाचारों का संकलन करके इसे दृश्य-श्रव्य माध्यम में हमारे सामने प्रस्तुत किया जाने लगा। आगे चलकर इंटरनेट आया जिसने सूचना के क्षेत्र में एक नई क्रांति को जन्म दिया जिसका परिणाम यह हुआ कि विश्व में कहीं भी कोई घटना घटती है तो उसकी जानकारी इन माध्यमों के द्वारा आसानी से और यथाशीघ्र एक दूसरे तक पहुँचाई जा सकती है।

इन माध्यमों के आरंभिक दौर में अनेक बाधाएं एवं समस्याएं उत्पन्न हुई। सभी देशों में वहाँ की तत्कालीन सरकारों ने मीडिया और समाचार पत्रों की स्वतंत्रता को नियंत्रित करने का प्रयास किया। लगभग सभी देशों का वह वर्ग जिसका संबंध शासन तंत्र से था उन सभी ने अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक ढांचे को अपने

ढंग से चलाना चाहा । इसीलिए उन लोगों ने समाचार के सभी साधनों जैसे टेलीविजन समाचार, पत्र-पत्रिकाओं आदि की स्वतंत्रता पर आक्रमण शुरू किया ।

टेलीविजन व समाचार-पत्र इत्यादि का मूलोद्देश्य दलित तथा शोषित वर्गों के हितों की रक्षा करना था इसीलिए उन पर तमाम बंदिशें लगने लगी । इन तमाम बंदिशों को पार करता हुआ समाचार पत्र व टेलीविजन आगे बढ़ता गया और अपने दायित्व को निर्वाह करता गया ठीक यही कार्य आज ब्लॉग कर रहा है । आज ब्लॉग इसी दायित्त्व के निर्वहन करने के नवीन माध्यम के रूप में हमारे सामने उपस्थित है । जहाँ हम स्वतंत्र रूप में अपनी भावाभिव्यक्ति कर सकते हैं ।

भूमंडलीकरण के इस दौर में मानव समाज के समक्ष अनेक संकट मौजूद हैं । आज विश्व ऐसे परिदृश्य से गुजर रहा है जो शोचनीय है, जिसकी तरफ आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने पहले ही इंगित किया था -"ज्यों-ज्यों हमारी वृत्तियों पर सभ्यता के नए-नए आवरण चढ़ते जाएंगे त्यों-त्यों एक ओर तो कविता की आवश्यकता बढ़ती जाएगी, दूसरी ओर कवि-कर्म कठिन होता जाएगा ।"[1]

भारत में मानव समाज की विकास यात्रा में पत्र-पत्रिकाओं का बड़ा योगदान रहा है। वर्तमान में अनेक संकट मानव-समाज के समक्ष हैं । भूमंडलीकरण के इस दौर में भारत को अपना दायित्व सफलतापूर्वक निभाना है । इस सन्दर्भ में पं. अम्बिका प्रसाद वाजपेयी अपने एक लेख 'समाचार पत्रों का इतिहास' में प्रसिद्ध हिंदी कवयित्री महादेवी वर्मा के कथन को रेखांकित करते हैं - 'पत्रकारिता एक रचनाशील विधा है, इसके बगैर समाज को बदलना संभव नहीं है । अतः पत्रकारों को अपने दायित्व और कर्तव्यों का निर्वाह निष्ठापूर्वक करना चाहिए क्योंकि उन्हीं के पैरों के छालों से इतिहास लिखा जाएगा ।' पत्रकारिता का मुख्य दायित्व है

[1]रामचंद्र शुक्ल संचयन, सं. नामवर सिंह,साहित्य अकादेमी प्रकाशन,प्रथम संस्करण:1988, पृष्ठ संख्या- 21

कि सरकार की नीतियों के क्रियान्वयन की सत्यता की पड़ताल करती रहे और जनता की भावनाओं को प्रकाशित करके सरकार तक पहुँचाए जिससे सरकार जनता की भावनाओं के अनुरूप सरकारी व प्रशासनिक नीतियों का निर्धारण कर सके।

गौरतलब है कि पहले की पत्रकारिता में जो मिशन और जन कल्याण की भावना थी जिसकी वजह से पत्रकारिता को 'लोकतंत्र का चौथा स्तंभ' कहा जाता था, वह मिशन और जन कल्याण की भावना अब धीरे-धीरे नष्ट होती जा रही है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि मीडिया जन-कल्याण से आत्म-कल्याण की तरफ बढ़ता जा रहा है।

आज का मीडिया मिशन के रूप में नहीं बल्कि व्यवसाय के रूप में काम कर रहा है। किसी भी व्यवसाय में पैसा कमाना प्रमुख उद्देश्य होता है और इसलिए जनकल्याण गौण उद्देश्य होता जा रहा है। इस संबंध में डॉ. संध्या गर्ग का मानना है कि, - "जो भी हो आज ब्लॉगिंग मीडिया के नए हथियार के रूप में निरंतर विकसित हो रहा है और आम आदमी की आवाज इसमें सुनाई दे रही है। हो सकता है कि इस प्रसिद्ध शेर की पंक्ति बदल कर शीघ्र ही ऐसे सुनाई देने लगे कि जब तोप मुकाबिल हो तो ब्लॉग लिखो।"[2]

हिंदी जगत के लिए ब्लॉगिंग एक नया विषय है। ब्लॉग इंटरनेट पर उपलब्ध एक स्वतंत्र ई-पत्रिका की तरह है, जिसमें रोज हर घंटे कुछ न कुछ लिखा जाता है। इसमें ब्लॉगर ही संपादक, प्रकाशक, एडिटर सब कुछ होता है। वह चाहे तो कोई पोस्ट हटा सकता है, चाहे तो कोई पोस्ट जोड़ सकता है।

यह बिल्कुल व्यक्तिगत होता है लेकिन इस पर सोशल मीडिया की तरह तत्काल टिप्पणी दे सकते हैं। अपने विचार रख सकते हैं, अपनी संवेदनाएं अपने अनुभव बांट सकते हैं

---

[2]डॉ. मनीष कुमार मिश्रा (संपा.) हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप,व्याप्ति और सम्भावनाएं, डॉ. संध्या गर्ग का लेख – 'आम आदमी का अपना अखबार : ब्लॉग', युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2011, पृष्ठ संख्या-190

। इस संदर्भ में ब्लॉगर राकेश कुमार सिंह लिखते हैं,- “ब्लॉग की कोई औपचारिक परिभाषा गढ़ी नहीं गई है, हालांकि हर ब्लॉगर के पास ब्लॉगिंग की कोई न कोई परिभाषा जरूर है। किसी के लिए यह एक ऐसी डायरी है जिसका पन्ना कोई फाड़ नहीं सकता और इस प्रकार इसमें एक ऑनलाइन अभिलेखागार बनने की पर्याप्त संभावना दिखती है। कुछ के लिए यह पत्रकारिता का अद्भुत माध्यम है; एक ऐसा माध्यम जो अब तक उपलब्ध तमाम माध्यमों से ज्यादा अवसर युक्त है, जहाँ अब तक की तमाम मानक लेखन शैलियों और भाषा से इतर मनचाहा ईजाद और इस्तेमाल करने की बेइंतहां आजादी है; लेखक, रिपोर्टर और संपादक सब ब्लॉगर खुद होता है।”[3]

विकिपीडिया के अनुसार, “ब्लॉग, वर्ल्ड वाईड वेब (www) पर प्रकाशित एक चर्चा या सूचनात्मक वेबसाइट है, जिसमें सतत, अक्सर अनौपचारिक डायरी-स्टाइल पाठ प्रविष्टियां शामिल हैं।” [4]

इसी संदर्भ में ब्लॉगर आकांक्षा यादव ‘ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी’ के हवाले से लिखती हैं-“एक इंटरनेट वेबसाइट जिसमें किसी की लचीली अभिव्यक्ति का चयन संकलित होता है और जो हमेशा अपडेट होती रहती है।”[5] उसे ब्लॉग कहा जाता है।

ब्लॉगर रविशंकर श्रीवास्तव (रवि रतलामी) लिखते हैं - “ब्लॉग वेब-लाँग का संक्षिप्त रूप है, जो अमेरिका में ‘1997’ के दौरान इंटरनेट में प्रचलन में आया। प्रारंभ में कुछ लोग ऑनलाइन जर्नल्स के लॉग (log-यानी रोज में रोजनामचा जैसा कुछ- जैसा कि पुलिस की डायरी में होता है) प्रकाशित किए गए थे, जिसमें इंटरनेट के भिन्न क्षेत्रों में प्रकाशित समाचार,

[3]डॉ. अनिता मन्ना/ डॉ.मनीष मिश्रा, (संपा.) वेब मीडिया और अभिव्यक्ति के खतरे, राकेश कुमार सिंह का लेख – हिंदी चिट्ठाकारी : एक और नई चाल ? , हिंदी-युग्म, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या - 262

[4]www.wikipedia.org,Date-08/01/2019,Time-10:05pm

[5]संवेद वाराणसी, संपादक ; कमला प्रसाद मिश्र, इलाहाबाद, अंक 15-16, संयुक्तांक, वर्ष 2012, पृष्ठ संख्या -151

जानकारी इत्यादि लिंक होते थे, तथा लॉग लिखने वालों की संक्षिप्त टिप्पणियां भी उनमें होती थीं। इन्हें ब्लॉग कहा जाने लगा।"[6]

1.2 ब्लॉग का अर्थ

ब्लॉग के लिए हिंदी में चिट्ठा शब्द का प्रयोग किया जाता है। हिंदी में इसे चिट्ठा नाम देने का श्रेय हजारी प्रसाद द्विवेदी को जाता है। यह व्यक्तिगत या विशेष व्यक्ति समूहों से सम्बद्ध होता है। जिसमें व्यक्तिगत और सामूहिक जाल पृष्ठ होते हैं। जिन्हें दैनंदिन डायरी की तरह लिखा जाता है। सामान्य रूप से ब्लॉग को परिभाषित करें तो ब्लॉग एक वेबसाइट है, जहाँ आप अपने विचारों को लेखों और चित्रों के माध्यम से इंटरनेट पर प्रकाशित कर सकते हैं। ब्लॉग पर आप किसी भी प्रकार के लेख लिख सकते हैं। जो आपके जीवन से जुड़ा हो भी सकता है या नहीं भी, आप बिल्कुल स्वतंत्र हैं। किसी को अच्छा लगेगा तो वह आपका लेख पढ़ेगा और अच्छा नहीं लगेगा तो नहीं पढ़ेगा आगे बढ़ जाएगा। यहाँ (ब्लॉग लेखन में) ना ही कोई लिखने के लिए मजबूर है और ना ही पढ़ने के लिए। अतः ब्लॉग लेखन पूर्णतया स्वतंत्र लेखन है। 'ब्लॉग' लिखने वालों को ब्लॉगर कहा जाता है और 'ब्लॉग' रखने की प्रक्रिया को ब्लॉगिंग कहते हैं।

आजकल इंटरनेट पर 'ब्लॉग' और 'ब्लॉगरों' की संख्या में दिनोंदिन वृद्धि होती जा रही है जिससे ब्लॉगिंग की लोकप्रियता का अंदाजा लगाया जा सकता है। आज के तकनीकी युग में ब्लॉग संचार का एक सशक्त और सर्वसुलभ सकारात्मक माध्यम बनकर इंटरनेट पर उभर रहा है। ब्लॉग में ऐसी सुविधा है कि हम उसमें अपने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक

[6]डॉ. मनीष कुमार मिश्रा (संपा.) हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप, व्याप्ति और सम्भावनाएं, रविशंकर श्रीवास्तव (रवि रतलामी) का लेख – 'ब्लॉगिंग- परिचय व इतिहास', युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2011, पृष्ठ संख्या-01

तथा सांस्कृतिक सभी तरह के विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। साथ ही साथ हम अपने पत्र, विज्ञापन व ज्ञान का भी आदान-प्रदान कर सकते हैं।

आजकल तो लोग ब्लॉग पर अपनी शिकायतें भी दर्ज कराते हैं और दूसरों को शिकायतें भेजते भी हैं परिणामस्वरूप प्रतिक्रिया भी आती है। यह आपसी संपर्क का एक सशक्त माध्यम भी बनता जा रहा है। इसके माध्यम से लोग एक दूसरे के संपर्क में रहते हैं। ब्लॉग हमें दुनिया को जोड़ने के साथ-साथ निजी संपर्क का जरिया भी प्रदान कर रहा है। इस संदर्भ में प्रोफेसर सतीश अर्जुन घोरपड़े ने ठीक ही लिखा है,- "वसुधैव कुटुंबकम ने सही अर्थो में इसी सूचना तकनीकी के माध्यम से पूर्णत्व ग्रहण किया है।"[7]

ब्लॉग संचार और संप्रेषण के नए साधनों का एक समुच्चय बनता जा रहा है जिसकी अपनी एक अलग पहचान है। इसमें समाचार पत्रों व मीडिया की तरह कोई संपादक-कैंची नहीं होती है। यहाँ पर लेखक ही संपादक, प्रकाशक, मालिक सर्वेसर्वा एक ही व्यक्ति होता है और वह ब्लॉगर होता है।

ब्लॉग में किसी भी प्रकार का आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक धार्मिक व सांस्कृतिक दबाव नहीं होता है जो उसे किसी विषय पर तटस्थ राय देने से रोक सके। ब्लॉगिंग वह पत्रकारिता है जो मिशन है व्यवसाय नहीं। ब्लॉग की इस प्रक्रिया में रजिस्टर्ड होने की औपचारिकताएं भी नहीं है। छापेखाने या अन्य लागत जैसी कोई आर्थिक लागत (पूँजी) जैसी कोई समस्या भी नहीं है। बस कंप्यूटर सीखकर 'ब्लॉग' बनाना है। ब्लॉग में किसी भी सामाजिक मुद्दे जैसे शोषण, भ्रष्टाचार, बाल विवाह, बाल मजदूरी, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न पर हम अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं।

---

[7] डॉ. मनीष कुमार मिश्रा (संपा.) हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप,व्याप्ति और सम्भावनाएं, प्रो. सतीश अर्जुन घोरपड़े का लेख – 'हिंदी के प्रचार प्रसार में हिंदी ब्लॉगिंग का योगदान', युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2011,पृष्ठ संख्या - 221

इसी प्रक्रिया में आजकल ‘मीटू’ अभियान जोरों से चल रहा है और इसके सकारात्मक परिणाम भी देखने को मिल रहे हैं। अतः इस तरह के किसी भी मुद्दे पर आप अपनी बेबाक राय लिख सकते हैं। अपनी बात आमजन से लेकर सरकार तक पहुँचा सकते हैं। इसके लिए आपको कहीं जाने की जरूरत नहीं है। घर बैठे हों या विदेश में हों या कहीं भी हों आप अपनी बात बड़ी आसानी से विश्व के लोगों तक पहुँचा सकते हैं। यह ब्लॉगिंग की सबसे बड़ी ताकत है। इस संदर्भ में प्रोफेसर सतीश अर्जुन घोरपड़े लिखते हैं,- “भारतीयों के साथ साथ प्रवासी भारतीय अपने मित्रों से ट्विटर, फेसबुक तथा हिंदी ब्लॉगिंग के माध्यम से अपनी भावनाओं का आदान-प्रदान करते हुए दिखाई देते हैं। इनमें से आज हिंदी ब्लॉग हिंदी पाठकों का नया मंच बन गया है जहाँ हम अपनी भावनाओं को आसानी से व्यक्त कर सकते हैं।”[8]

अतः ‘ब्लॉग’ ने पाठक और लेखक के बीच की दूरियां खत्म की हैं। ‘ब्लॉग’ के पाठक पूरी दुनिया से मिलते हैं। ‘ब्लॉग’ के माध्यम से हम किसी भी विषय में विश्व की किसी भी भाषा में अपने विचार प्रकट कर सकते हैं,जो इंटरनेट पर पढ़ने के लिए सर्वदा उपलब्ध रह सकता है। इससे भाषा के साथ-साथ विलुप्त हो रही संस्कृति का भी संरक्षण होगा।

भाषा संस्कृति की वाहक होती है और ब्लॉगिंग के माध्यम से हर ब्लॉगर अपनी मातृभाषा में अपने विचार व्यक्त कर सकता है। इससे जो अंचल की भाषाएं हैं वह भी संरक्षित रहेंगी तथा उन भाषाओं के माध्यम से वहाँ की स्थानीय संस्कृति भी जीवित रहेगी। न सिर्फ जीवित रहेगी बल्कि विश्व में उस संस्कृति का प्रचार-प्रसार भी करती रहेगी। इस तरह उस भाषा के विकास में भी गति आयेगी और वह संस्कृति भी बची रहेगी। उदाहरण के तौर पर

[8] डॉ. मनीष कुमार मिश्रा (संपा.) हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप,व्याप्ति और सम्भावनाएं, प्रो. सतीश अर्जुन घोरपड़े का लेख- ‘हिंदी के प्रचार प्रसार में हिंदी ब्लॉगिंग का योगदान’,युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2011,पृ.संख्या-221

देखें तो अगर कोई भोजपुरी में 'ब्लॉग' लिखेगा, कोई मैथिली में, कोई हरियाणवी में, तो इससे हिंदी की अन्य भारतीय भाषाएँ समृद्ध होगी।

इस सन्दर्भ में ताऊ रामपुरिया की भाषा देखिए, - "इब राज भाटिया जी और योगिन्द्र मोदगिल जी ने गाँव के चोधरी को कहा कि इस बटेऊ से सवाल पूछने का मौका ताऊ को भी दिया जाना चाहिए। आखिर गांव की इज्जत का सवाल है ! चौधरी ने उनका एतराज मंजूर कर लिया !..."[9] डॉ. अनीता मन्ना और डॉ. मनीष कुमार मिश्रा भी कुछ ऐसा ही लिखते हैं,- "भारत में इंटरनेट के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ धीरे-धीरे 'ब्लॉगिंग' भी अपनी जड़े भारतीय भाषाओं में जमा रही है।"[10]

निश्चित तौर पर 'ब्लॉगिंग' एक ऐसी विधा है जिसके माध्यम से हम अपनी भाषा और साहित्य को समृद्ध कर सकते हैं, इंटरनेट पर रखकर सर्वसुलभ कर सकते हैं। इससे हमारी भाषा और संस्कृति में उन्नयन के साथ-साथ विश्व पटल पर हमारी भाषा का सशक्तिकरण भी होगा। गूगल जैसे सर्च इंजन की उस समस्या से निजात मिलेगा जिसमें अपनी भाषा में कोई चीज खोजो तो परिणाम शून्य आता है।

इस तरह हमें निराशा हाथ लगती है। क्योंकि गूगल यह बताता है कि अमुक भाषा में यह रचना उपलब्ध नहीं है। वहीं अंग्रेजी में खोजो तो जरूर कुछ ना कुछ मिल जाता है। बात यह है कि जब इंटरनेट पर सामग्री रखेंगे नहीं तो मिलेगी कैसे? इसे हम सकारात्मक रूप में देखें तो यह हिंदी ब्लॉगिंग के लिए एक सुनहरा अवसर है, जहाँ हिंदी ब्लॉगिंग के माध्यम से हम इंटरनेट पर अधिक से अधिक जानकारी को संरक्षित कर सकते हैं।

---

[9] अभय कुमार दुबे (संपा.) , हिंदी आधुनिकता एक पुनर्विचार खंड 3, राकेश कुमार सिंह का लेख - 'हिंदी ब्लॉगिंग या चिट्ठाकारी : एक और नई चाल', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2014, पृष्ठ संख्या -822

[10] डॉ. मनीष कुमार मिश्रा (संपा.) हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप, व्याप्ति और सम्भावनाएं, डॉ. (श्रीमती) अनीता मन्ना, डॉ. मनीष कुमार मिश्रा का लेख – 'हिंदी ब्लांगिंग: स्वरूप, व्याप्ति और सम्भावनाएं', युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2011, पृष्ठ संख्या - 161

हिंदी ब्लॉगिंग पूर्णतया सरल, सहज और किफ़ायती साधन है। जिसके माध्यम से आमजन से लेकर खास जन तक सभी लोग अपने विचार ब्लॉग पर रख सकते हैं। सूचना क्रांति के इस दौर में ब्लॉग एक नए माध्यम के रूप में देखा जा रहा है क्योंकि,- "ब्लॉगिंग वैश्विक है। रचनाकार को यह अतिरिक्त लाभ है कि उसकी रचना विश्व स्तर पर पढ़ी जाती है। ब्लॉगिंग से एक नए 'ब्लॉग समाज' का निर्माण हो रहा है।"[11]

इसमें पाठक वर्ग को प्रश्न पूछने का अधिकार है और साधारणतः ब्लॉगर उत्तर देने का प्रयास भी करते हैं। 'ब्लॉगर' अपने विचारों को सर्वोत्तम रूप में इंटरनेट पर प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। आजकल तो कई बड़े अभिनेता और राजनेताओं ने भी अपने-अपने ब्लॉग बनाए हैं जिसके माध्यम से वे अपनी रुचियों और विचारों को आम जनमानस तक पहुँचाने का काम करते हैं। राजनेता लोग अपने राजनीतिक विचारों को अपने समर्थकों तक पहुँचाने के लिए ब्लॉग का बड़े स्तर पर सहारा ले रहे हैं। इस संदर्भ में लालकृष्ण आडवाणी का 'दृष्टिकोण' ब्लॉग सर्वाधिक लोकप्रिय रहा है जो अब पुस्तक रूप में 'दृष्टिकोण ब्लॉग पर बातें' नाम से प्रकाशित है।

ब्लॉग परंपरागत मीडिया का एक विकल्प बनकर हमारे सामने नए रूप में आया है, जहाँ पर विषयों की भरमार है। ब्लॉग पर राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक व साहित्यिक सभी तरह के विचारों का लेखन कर सकते हैं। इतना ही नहीं तकनीकी पर भी ब्लॉग लिखे जा रहे हैं। साथ ही साथ विज्ञान, दर्शन, विज्ञापन इन सभी विषयों पर भी ब्लॉग लेखन बड़े पैमाने पर हो रहा है। हर वर्ग के पाठक के लिए ब्लॉग लेखन की सुविधा मौजूद है। यही कारण है कि पाठकों के लिए ब्लॉग पर अपने-अपने काम की कोई न कोई सामग्री जरूर मिल जाती है।

---

[11] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, पवन चन्दन का लेख – 'प्रकाशन की समस्या का अंत है हिंदी- ब्लॉगिंग', हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या-91

अतः निश्चित तौर पर 'ब्लॉग' एक स्वतंत्र माध्यम है जहाँ हम अपने विचारों को अपनी भाषा में बेबाक रूप में अभिव्यक्त कर सकते हैं।

1.3 ब्लॉग की परिभाषा

जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य अनेक प्रकार से समाज में अपनी अभिव्यक्ति दर्ज करने का प्रयास करता है। इसके लिए मनुष्य नए-नए आयाम गढ़ता रहता है। जैसे वह जन्म लेते ही रो-कर अपनी अभिव्यक्ति विश्व के सामने प्रस्तुत करता है। इशारों में बोलकर, लिखकर, छापकर तथा स्थापत्य के नमूने रचकर और कलाकृतियों का सृजन करके मनुष्य अपनी अभिव्यक्ति दर्ज कराता रहा है। इसी कड़ी में 'ब्लॉग' एक नवीन अभिव्यक्ति का माध्यम बन कर हमारे सामने उपस्थित हुआ है। इसके माध्यम से मनुष्य अपने विचारों और संवेदनाओं को विविध तरीके से विश्व के सामने पहुँचाने का कार्य करता है।

इस तरह ब्लॉगिंग इंटरनेट पर उपलब्ध तमाम माध्यमों में से सबसे प्रभावी व असरदार माध्यम है। इस संदर्भ में ब्लॉगर बालेंदु शर्मा 'दाधीच' लिखते हैं,- "ब्लॉगिंग शब्द अंग्रेजी के वेब-लॉग (इंटरनेट आधारित टिप्पणियां) से बना है, जिसका तात्पर्य ऐसी डायरी से है, जो किसी नोटबुक में नहीं बल्कि इंटरनेट पर रखी जाती है। पारंपरिक डायरी के विपरीत वेब आधारित यह डायरी (ब्लॉग) सिर्फ अपने तक सीमित रखने के लिए नहीं है, बल्कि सार्वजनिक पठन-पाठन के लिए उपलब्ध है। चूकिं आपकी इस डायरी को विश्व भर में कोई भी पढ़ सकता है, इसलिए यह आपको अपने विचारों,अनुभवों या रचनात्मकता को दूसरों तक पहुँचाने का जरिया प्रदान करती है और सबकी सामूहिक डायरियों (ब्लॉगमंडल) को मिलाकर देखें तो यह निर्विवाद रूप से विश्व का सबसे बड़ा जनसंचार-तंत्र बन चुका है। उसने कहीं पत्रिका का रूप लिया है, कहीं अखबार का, कहीं पोर्टल का तो कहीं ज्वलंत मुद्दों पर चर्चा के

मंच का। उसकी विषय वस्तु की भी कोई सीमा नहीं...इंटरनेट पर मौजूद अनंत ज्ञान कोष में ब्लॉग के जरिए थोड़ा-थोड़ा व्यक्तिगत योगदान देने की लाजवाब कोशिश हो रही है।" [12]

1.3.1 भारतीय विद्वानों के अनुसार

'ब्लॉग' सार्वजनिक आत्माभिव्यक्ति का खुला मंच है। यह ऐसा माध्यम है जहाँ आप अपनी अभिव्यक्ति के साथ-साथ संवाद भी कर सकते हैं, अपना महिमामंडन भी कर सकते हैं। इसमें भाषा शैली और अंतर्वस्तु का कोई दबाव नहीं है। इसमें आप अपने विचारों और अनुभव को अभिव्यक्ति दे सकते हैं। जैसे व्यक्तिगत दुख दर्द को भी व्यक्त कर सकते हैं तथा सामंती माहौल की वजह से जो अभिव्यक्ति दब जाती थी उसे भी आप ब्लॉगिंग के माध्यम से आवाज दे सकते हैं।

इस संदर्भ में ब्लॉगर नीलिमा लिखती हैं,-"चिट्ठे या ब्लॉग, इंटरनेट पर चिट्ठाकार का वह स्पेस है जिसमें वह अपनी सुविधा व रूचि के अनुसार सामग्री को प्रकाशित कर सार्वजनिक करता है। इस चिट्ठे का तथा इसकी हर प्रविष्टि का जिसे पोस्ट कहते हैं एक स्वतंत्र वेब-पता होता है। सामान्यतः पाठकों को इन पोस्टों पर टिप्पणी करने की सुविधा होती है। यदि चिट्ठाकार स्वयं इस पते को मिटा न दे तो यह सामग्री इस वेब पते पर सदा-सर्वदा के लिए अंकित हो जाती है अंतरजाल के सूचना प्रधान हैवी ट्रैफिक-जोन से परे व्यक्तिगत स्पेस में व्यक्तिगत विचारों और भावों की निर्द्वंद्व सार्वजनिक अभिव्यक्ति को ब्लागिंग कहा जाता है।"[13] ब्लॉगर जयप्रकाश के विचार भी नीलिमा के विचार से मिलते - जुलते हैं। वे लिखते हैं,- "ब्लॉग आम आदमी की किसी भी विषय पर उसकी निजी अभिव्यक्ति है। मन में उठ रही

---

[12] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, बालेन्दु शर्मा दाधीच का लेख – 'ब्लॉगिंग : ऑनलाइन विश्व की आजाद अभिव्यक्ति', हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या- 239

[13] अभय कुमार दुबे (संपा.) , हिंदी आधुनिकता एक पुनर्विचार खंड 3, राकेश कुमार सिंह का लेख - 'हिंदी ब्लॉगिंग या चिट्ठाकारी : एक और नई चाल', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण - 2014, पृष्ठ संख्या -813

उथल-पुथल, जिज्ञासा, दिल की बात को सीधे-सपाट ढंग से इंटरनेट पर लिखकर प्रकट कर देना ही ब्लॉग लेखन है। ब्लॉग एक ऐसा मंच है, जहाँ अभिव्यक्ति किन्ही सीमाओं, वर्जनाओं, आचार संहिताओं, भावनाओं या किसी अनुशासन में कैद नहीं है। यह एक स्वतंत्र, खुला और सीधा-सपाट मंच है जहाँ न तो अभिव्यक्ति के लिए समय की सीमा है, न ही लिखने के लिए कोई बंधन।"[14]

अतः ब्लॉग एक नवीन विधा है। जो साहित्य से कई मामलों में ज्यादा सशक्त माध्यम है। ब्लॉग जगत एक ऐसा प्लेटफॉर्म है जहाँ सभी विचारधाराओं के लिए जगह है। यहाँ दक्षिणपंथी अपने राष्ट्रवादी विचारों से दुनिया को लुभा सकते हैं, तो वामपंथी भी अपनी भड़ास निकाल सकते हैं। दलित अपनी आवाज उठा सकते हैं, तो ब्राह्मण भी अपने धर्म का प्रचार प्रसार कर सकते हैं। यहाँ जात-पात, ऊँच-नीच, भाषा-शैली, प्रांत-अंचल आदि से मुक्त होकर स्वतंत्र अभिव्यक्ति कर सकते हैं। यह कार्य हम केवल हिंदी ब्लॉगों पर ही नहीं बल्कि किसी भी भाषा के ब्लॉग में अपनी अभिव्यक्ति खुले रूप में व्यक्त कर सकते हैं। इससे हम कार्टून, कविता, कहानी, व्यंग्य, गजल, रिपोर्ताज, यात्रा वृत्तान्त, उपन्यास से लेकर अनेक विधाओं को ब्लॉग में रख सकते हैं। इस संदर्भ में ब्लॉगर उमाशंकर मिश्र लिखते हैं,- "मुख्यधारा के मीडिया में जन मुद्दों को स्थान न मिल पाने की भड़ास है ब्लॉग।"[15] आज रोजी-रोटी कमाने की लालसा में लोग अन्य देशों में चले गए हैं। इन प्रवासी भारतीयों को अपनी भाषा में पढ़ने-लिखने, समाचार सुनने साथ ही ऐसे मंच जहाँ वे अपनी भाषा में

---

[14] मनीष कुमार मिश्रा (संपा.) हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप, व्याप्ति और सम्भावनाएं, डॉ. चन्द्रप्रकाश का लेख – 'ब्लॉग : अवधारणा, संभावनाए और सीमाएं' युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2011, पृष्ठ संख्या - 164

[15] अविनाश वाचस्पति, रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, उमाशंकर मिश्र का लेख – 'नागरिक पत्रकारिता का मजबूत स्तम्भ बन सकता है ब्लॉग', हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या- 223

साहित्यिक चर्चा कर सके ऐसे मंचों का बड़ा अभाव रहता है। इतना ही नहीं इन्हें सांस्कृतिक कार्यक्रमों और विधि विधानों की जानकारी का भी अभाव रहता है, उनके बच्चों को उनकी मातृभाषा में शिक्षा कैसे सुलभ हो ? इन सब की पूर्ति करने में ब्लॉग सक्षम हो रहा है।

ब्लॉग के माध्यम से यह सब कार्य बड़े ही तीव्र गति से हो रहा है। इसके माध्यम से प्रवासी भारतीय भारत की सभी खबरों से रु-ब-रु होकर भारत के सुख - दुःख में शरीक हो रहे हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारतीय संस्कृति को विश्व में फैलाने में ब्लॉग बड़ी भूमिका निभा रहा है।

किसी भी नए कार्य की शुरुआत में थोड़ी कठिनाइयाँ तो आती हैं। लेकिन जैसे-जैसे परिपक्वता बढ़ती जाती है कठिनाइयां दूर होती जाती हैं। हिंदी ब्लॉगिंग भी अभी इसी राह पर चल रहा है। ब्लॉगिंग का भविष्य उज्ज्वल दिख रहा है। दिनों दिन ब्लॉगरों की संख्या बढ़ती जा रही है। साहित्यिक प्रतिभा के लोगों की संख्या में लगातार इजाफा हो रहा है। कहीं कहीं विचारों की भिन्नता की वजह से छोटे-मोटे विवाद भी उत्पन्न होते जा रहे हैं, लेकिन जैसे-जैसे परिपक्वता बढ़ेगी विवाद भी समाप्त हो जायेंगें और ब्लॉग एक प्रभावशाली माध्यम बन जाएगा। इस संदर्भ में ब्लॉगर दिविक रमेश कहते हैं,- "हिंदी-ब्लॉगिंग अभी, मेरी निगाह में, शिशु है, जिसे परवरिश की दरकार है। इसे बहुत स्नेह चाहिए और प्रोत्साहन भी।"[16]

आजादी के पहले आम जनता ने जो स्वप्न देखे थे, जिन मूल्यों की तलाश में आज़ादी के दीवानों ने अपने प्राणों की बाजी लगाई थी कि आजादी मिलने पर सबको बराबर का अधिकार मिलेगा,सबकी बात सुनी जाएगी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। आजादी के बाद भी मूल्यों का ह्रास हुआ। आम आदमी जस का तस पड़ा रह गया। आम आदमी की चिंताओं

[16]अविनाश वाचस्पति, रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, डॉ. दिविक रमेश का लेख – 'हिंदी ब्लॉगिंग को अभी परवरिश की दरकार है', हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या-297

को पूँजीवादी व्यावसायिक मीडिया भी तवज्जो नहीं दे रहा है। आज का मीडिया प्रसिद्ध हस्तियों की खबर छाप रहा है। मीडिया का पूरा फोकस राजनेताओं और अभिनेताओं के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। ऐसे में आम आदमी को अपनी बात कहने का एक नया हथियार मिला है। वह हथियार ब्लॉगिंग है, जिसकी लोकप्रियता दिनों दिन बढ़ती जा रही है। इस संदर्भ में ब्लॉगर 'एडवोकेट' रणधीर सिंह 'सुमन' लिखते हैं,- "हिंदी-पत्रकारिता कभी व्रत हुआ करती थी, अब वह वृत्ति बन गई है और इसमें वृत्ति की विकृतियां भी आ रही हैं ऐसे में ब्लॉग का समानांतर मीडिया के रूप में प्रतिष्ठित होना एक नई सामाजिक क्रांति का सूचक है।"[17]

ब्लॉग के माध्यम से स्थानीय गतिविधियों का प्रचार-प्रसार बड़े ही प्रभावशाली ढंग से किया जा रहा है। जैसे किसी भी स्थानीय समस्या को रोचक ढंग से उठाया जा रहा है। जिससे आमजन का ध्यान इस समस्या की ओर आकृष्ट हो रहा है। इस संदर्भ में जगदीश्वर चतुर्वेदी कहते हैं,- "ब्लॉग मध्यवर्गीय युवाओं के लेखन का दर्पण है...समग्रता में देखें तो वेबसाइट और ब्लॉग ने प्रसिद्ध मीडिया गुरुमार्शल मैक्लुहान की धारणा को ही साकार किया है। मैक्लुहान ने लिखा था कि अब प्रत्येक व्यक्ति प्रकाशक हो सकता है।"[18]

इस तरह हम देख रहे हैं कि हिंदी ब्लॉगिंग ने स्थानीय गतिविधियों को व्यक्त करने में बड़ी भूमिका निभाई है। मध्यवर्ग की गतिविधियों को भी सशक्त रूप में अभिव्यक्ति दी है। यदि आज ब्लॉग के माध्यम से आम जन स्थानीय गतिविधियों और समस्याओं को मुखरित कर रहें हैं तो कल वे स्थानीय पंचायत, नगर पालिका, राज्य सरकार, केंद्र सरकार, की योजनाओं में होने वाली विभिन्न अनियमितताओं और घोटालों को भी अपने ब्लॉग के

---

[17]अविनाश वाचस्पति, रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, एडवोकेट रणधीर सिंह सुमन का लेख – 'बाज़ारवाद के इस दौर में हिंदी-ब्लॉगिंग की भूमिका', हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या - 201

[18] मीडिया समग्र (भाग-10) ब्लॉग संस्कृति तमाशबीनों की दुनिया, जगदीश्वर चतुर्वेदी, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2013, पृष्ठ संख्या – 46-47

माध्यम से प्रकाश में ला सकते हैं। अतः ब्लॉगर वही काम कर रहा है जो काम पत्रकारिता कर रही थी बल्कि इसमें एक बड़ा लाभ यह है कि पत्रकारिता में संपादक की कैची चल जाती थी लेकिन ब्लॉग में ऐसा कुछ नहीं है। इस संदर्भ में जगदीश्वर चतुर्वेदी लिखते हैं,-"आज समाज में कानूनन जितने अधिकार सुविधाएं और सम्मान दर्जा किसी पत्रकार को प्राप्त है, कानून में सारी सुविधाएं मान्यताएं और कानूनी संरक्षण ब्लॉगर को मिलने चाहिए। ब्लॉगर तो पत्रकार है। वह किसी अन्य लोक का प्राणी नहीं है। ब्लॉगिंग पत्रकारिता है, वह मात्र आत्माभिव्यक्ति का रूप नहीं है।"[19]

ब्लॉगिंग ऐसा माध्यम है जो भौगोलिक सीमाओं से मुक्त है इसमें किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं रहता है। ब्लॉगर बेखौफ अभिव्यक्ति और टिप्पणियाँ दे सकता है। यह किसी भी प्रकार की आचार संहिता या अनुशासन से बद्ध नहीं है। इस संदर्भ में ब्लॉगर अविनाश वाचस्पति लिखते हैं,- "ध्वस्त हो रहे जीवन मूल्यों, सामाजिकता, जनसेवा की भावना को पूरी रचनात्मक, सकारात्मकता के साथ आपस में साझा करना ही ब्लागिंग है।"[20]

जब जिम्मेदारियाँ बढ़ती है तो चुनौतियाँ भी बढ़ती हैं। इसीलिए ब्लॉगर को विश्वसनीयता भी बनाए रखना है। विश्वसनीयता के लिए ब्लॉगर को तटस्थता पर विशेष ध्यान देना पड़ेगा। लोकतंत्र में निष्पक्षता बहुत मायने रखती है। किसी भी माध्यम की सार्थकता तभी तक है जब तक उस माध्यम को सकारात्मक उद्देश्य के लिए प्रयोग किया जाता है। अन्यथा झूठ-मूठ का प्रोपेगेंडा फैलाने पर उस माध्यम की सार्थकता नष्ट हो जाती है। अतः ब्लॉग पर प्रोपोगेंडा फैलाने का प्रयास करेंगे तो ब्लॉग से लोगों का विश्वास उठ जाएगा।

---

[19] मीडिया समग्र (भाग-10) ब्लॉग संस्कृति तमाशबीनों की दुनिया, जगदीश्वर चतुर्वेदी, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2013, पृष्ठ संख्या - 30

[20] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, अविनाश वाचस्पति का लेख – 'पारस्परिक संवाद का सशक्त माध्यम है हिंदी- ब्लॉगिंग', हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या- 143

इसलिए ब्लॉगिंग में विश्वसनीयता पर विशेष ध्यान देना पड़ेगा तभी यह आम नागरिक की आव़ाज बनेगा और इसकी विश्वसनीयता भी बनी रहेगी। इतना ही नहीं 'ब्लॉग' मुख्य धारा की मीडिया का ईमानदार विकल्प बनकर हमारे सामने आ सकेगा।

इस संदर्भ में ब्लॉगर गिरीश पंकज लिखते हैं,-"ब्लॉग क्या है, एक नया लोकतंत्र है। अपनी बात कहने का मंच है, जैसे नाट्यशास्त्र को पंचम वेद कहा गया, उसी तरह मैं ब्लॉगिंग को लोकतंत्र का पाँचवा स्तंभ मानता हूँ।"[21] इस संदर्भ में ब्लॉगर खुशदीप सहगल भी यही बात लिखते हैं "ब्लॉगिंग में आज देश के लोकतंत्र का पाँचवा खम्भा बनने की पूरी क्षमता है।"[22] ब्लॉगर प्रमोद ताम्बट भी हिंदी-ब्लॉगिंग को परिवर्तन के एक ताकतवर हथियार के रूप में देखते हैं। वे बाजारीकरण में मीडिया की लाचारी को देखते हैं कि किस तरह मीडिया बड़े-बड़े कारपोरेट घरानों की कठपुतली बन गया है, और अपने मिशन को साकार नहीं कर पा रहा है। ऐसे समय में प्रमोद ताम्बट भी ब्लॉग को पांचवा खम्भा मानने के पक्ष में खड़े दिखाई देते हैं। वे लिखते हैं,- "बाजारवाद के इस निर्मम दौर में जब लोकतंत्र का चौथा खंभा कही जाने वाली पत्रकारिता और मीडिया-मंडी बड़े-बड़े कारपोरेट घरानों के हाथों की कठपुतली बनी, दंभपूर्ण बुद्धिजीविता के शिकार पत्रकार-मीडिया पुरुषों से घिरी हुई है, ब्लॉगजगत मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों के बीच एक किस्म के लोकतांत्रिक स्तंभ के रूप में उभरकर सामने आने की कोशिश कर रहा है। इसे नि:संदेह पांचवे खम्भे की उपमा दी जा सकती है।"[23]

[21] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, गिरीश पंकज का लेख – 'मानवीय सर्जना का नवोन्मेष है हिंदी- ब्लॉगिंग', हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या-136

[22] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, खुशदीप सहगल का लेख – 'ब्लॉगिंग की ताकत ', हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या-103

[23] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, प्रमोद ताम्बट का लेख – 'हिंदी-ब्लॉगिंग को परिवर्तन के ताकतवर हथियार के रूप में ढालने की जरुरत है', हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या-137

आज जहाँ एक ओर पेड-न्यूज़ का कारोबार है तो दूसरी और बड़ी-बड़ी प्रचार एजेंसियां हैं जो किसी खास व्यक्ति की छवि आम जनता में बनाने और बिगाड़ने का कारोबार कर रही हैं। ऐसे दौर में आम जनमानस को ब्लॉग की बहुत जरूरत है। इसे और ज्यादा लोकप्रिय करने का कार्य मीडिया बखूबी कर सकता है। इसे सरल व सुविधाजनक बनाने का कार्य बड़ी-बड़ी कंपनियां भी कर सकती हैं, जिससे बच्चे से लेकर बूढ़े तक सभी आसानी से ब्लागिंग कर सके। इस संदर्भ में ब्लॉगर रूपचंद्र शास्त्री (मयंक) का मानना है,- "साहित्य के पुरोधागण ब्लॉग को चाहे जितना भी कोस ले, पर भाषा साहित्य और संस्कृति की भूमि को जितना उर्वर इस नए माध्यम के द्वारा बनाया जा रहा है, उतना साहित्य के अन्य माध्यमों के द्वारा नहीं।"[24] रविंद्र प्रभात जी रूपचंद्र शास्त्री की बातों पर बल देते हुए यहाँ तक कहते हैं कि,- "हिंदी ब्लॉगिंग को प्राथमिक कक्षा से एक विषय के तौर पर लिया जाए, जिसका उत्तरोत्तर कक्षाओं में विस्तार किया जाए।"[25] निश्चित तौर पर भाषा साहित्य और संस्कृति की भूमि को जितना उर्वर ब्लॉग के द्वारा बनाया जा सकता है उतना किसी और माध्यम के द्वारा नहीं। उदाहरण के तौर पर हम त्रिलोचन और निराला जैसे समर्थ कवियों की रचनाओं को देख सकते हैं, जिसे आलोचकों और प्रकाशकों ने वह सम्मान नहीं दिया जिसके वे हकदार थे। हालांकि बहुत बाद में जाकर उनकी रचनाओं को लोगों ने समझा और सम्मान दिया। अतःब्लॉगिंग आज के समाज की जरूरत है। ब्लॉगर अनूप शुक्ल के शब्दों में कहें तो,- "अभिव्यक्त की बेचैनी ब्लॉगिंग का प्राण तत्व है और तात्कालिकता इसकी मूल प्रवृत्ति है। विचारों की सहज अभिव्यक्ति ही ब्लॉग की ताकत है।"[26]

---

[24] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, रवींद्र प्रभात का लेख – 'ब्लॉग पर साहित्य की सार्थकता ', हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या- 272

[25] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, रवींद्र प्रभात का लेख – 'ब्लॉग पर साहित्य की सार्थकता ', हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या - 274

[26] 'हंस' मासिक हिंदी पत्रिका, संपादक संजय सहाय, सितंबर 2018, अंक:2, अक्षर प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ संख्या - 27

ब्लॉगर अलबेला खत्री ने ब्लॉगिंग की आवश्यकता को महसूस करते हुए 'परिकल्पना' के एक साक्षात्कार में कहा कि,- "साहित्य अकादमी की तरह ब्लॉग अकादमियां भी बननी चाहिए, जिस प्रकार देहात तथा अहिंदी भाषी क्षेत्रों में प्रकाशित होने वाले हिंदी-प्रकाशनों को विशेष मदद मिलती है, उसी तर्ज पर दूर-दराज तथा अहिंदी भाषी क्षेत्रों के ब्लॉगरों को विशेष सहायता मिलनी ही चाहिए।"[27]

1.3.2 पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार

'Dictionary of media and communications में ब्लॉग को इस तरह परिभाषित किया गया है,- "blog is a website with a regular update list of commentary and links to information on the Internet. A blog often serves as a publicly accessible journal for an individual or community for individuals and tends to reflect the distinct character and personality of the sites user. Blog are set up with easy to use authoring tools."[28]

अतः ब्लॉग पर व्यक्ति का व्यक्तित्व सहज रूप से सामने आता है। उसे किसी बनावटीपन की जरूरत नहीं पड़ती। इस कारण ब्लॉग को अभिव्यक्ति का एक नया माध्यम ही नहीं बल्कि उन्मुक्त अभिव्यक्त के सशक्त माध्यम के रूप में जाना जाता है, और इसने अपने आप को इस रूप में स्थापित भी कर लिया है। Encyclopedia Britannica के अनुसार,"Blog, in full weblog, online journal where an individual, group, or

---

[27] अविनाश वाचस्पति, रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, अलबेला खत्री का साक्षात्कार – 'साहित्य अकादमी की तरह ब्लॉगिंग अकादमी भी बने, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या - 314

[28] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात (संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, केवल राम का लेख – 'हिंदी-ब्लॉगिंग,रचनात्मक अभिव्यक्ति के विविध आयाम', हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या - 94

corporation presents a record of activities, thought, or beliefs. Some blogs operate mainly as news filters, collecting various online sources and adding short comments and internet links. Other blogs concentrate on presenting original material. In addition, many blogs provide a forum to allow visitors to leave comments and interact with the publisher. 'To blog' is the act of composing material for a blog. Materials are largely written, but pictures, audio, and videos are important elements of many blogs. The "blogosphere" is the online universe of blogs."[29]

'ब्लॉग लेखन' आज लगभग पचास हजार के करीब पहुँच गया है। इसके कारण क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। जैसे किसी भी संदेश को विश्व के किसी भी कोने में पहुँचाने के लिए सिर्फ सेकेंडो का समय लगता है। यह निजी समाचार पत्र या मीडिया की तरह काम करता है। यहाँ ब्लॉगर को अपने संदेश भेजने और छापने के लिए किसी मीडिया के यहाँ जाने की जरूरत नहीं पड़ती बल्कि ब्लॉगर खुद समाचार पत्र या मीडिया का मालिक होता है।

'ब्लॉग' में निजी स्वतंत्रता होती है इस संदर्भ में हिंदी ब्लॉगर और कथाकार उदय प्रकाश लिखते हैं,- "निजी स्वतंत्रता के आधुनिक विचार के लिए भी ब्लॉग की दुनिया में जगह है। ब्लॉग के माध्यम से कितने सार्थक काम और बहसें हो रही हैं, यह एक अलग मुद्दा है, लेकिन ब्लॉग लेखक को एक निजी किस्म की स्वतंत्रता देता है। उस स्पेस का इस्तेमाल लेखक अपने तरीके से निर्बंध होकर कर सकता है।"[30]

---

[29] www.britannica.com, 27/12/2018, 11:35am

[30] Amstel Ganga.org/ब्लॉग लेखन और चिट्ठा लेखन, 19/12 /2018, 12:01am

1.4 ब्लॉगिंग का स्वरूप

हिंदी ब्लॉगिंग में सभी प्रकार की पोस्ट लिखी जा सकती है। इसमें कविता, कहानी से लेकर शिक्षा, राजनीति, धर्म, रीति-रिवाज तथा व्यक्तिगत अनुभव इन सभी विषयों पर ब्लॉगिंग की जा रही है। हिंदी के बड़े साहित्यकार राजेंद्र यादव ने एक बार ब्लॉग के संदर्भ में कहा कि,- "ब्लॉग उन लोगों के मन की भड़ास निकालने का साधन है जिनको प्रिंट मीडिया में छपने का मौका नहीं मिला।"[31]

परिणामस्वरूप इसी भाव से लोगों ने ब्लॉग पर प्रतिक्रिया रखनी शुरू कर दी लेकिन ब्लॉग ने अपने को समृद्ध किया। इस पर बड़े ही आत्मीय स्तर के सरल व सहज संस्मरण लिखे जा रहे हैं, जो ब्लॉग की लोकप्रियता बढ़ाने का कार्य कर रहे हैं। उदाहरण के तौर पर ब्लॉगर विनीत कुमार के अपने माता-पिता पर लिखे संस्मरण हों या फिर अपने आत्मीय लोगों पर लिखे गए संस्मरण हो, उनकी सहजता सरलता और आत्मीयता ब्लागिंग का प्राण तत्व बनती जा रही है। यह ब्लॉगिंग की बड़ी उपलब्धि है।

ब्लॉग, फेसबुक और ट्विटर की बात करें तो फेसबुक और ट्विटर का जो निचोड़ होता है उसे हम ब्लॉग रूपी गोलक में सहेज कर रखते है। फेसबुक और ट्विटर की अपेक्षा ब्लॉग में पोस्ट रखने के कई फायदे होते हैं। जैसे आपको अपनी कोई पोस्ट खोजनी है तो, फेसबुक और ट्विटर पर पोस्ट खोजने में आपको समय लगेगा लेकिन ब्लॉग में सहज रूप में आप अपना पोस्ट खोज सकते हैं। फेसबुक और ट्विटर के बरक्स ब्लॉगिंग की बात करें तो फेसबुक और ट्विटर से ब्लॉगिंग को कोई खतरा नहीं है। फेसबुक और ट्विटर पर हम ज्यादा लिखते हैं लेकिन उसमें जो सबसे अच्छा होता है, उसको हम ब्लॉग रूपी गोलक में सजाकर

[31] 'हंस' मासिक हिंदी पत्रिका, संपादक संजय सहाय, सितंबर 2018, अंक:2, अक्षर प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ संख्या - 29

रखते हैं। ब्लॉग पर लिखी गई सामग्री की बात करें तो ब्लॉग की आलोचना तो होती है लेकिन ब्लॉग में स्तरीय लेखन भी होता है। इसमें संपादक के न रहने से कबाड़ से लेकर कंचन तक सभी चीजें शामिल रहती हैं। यही ब्लॉग की कमजोरी भी है और ताकत भी। अब पाठक पर निर्भर करता है कि ब्लॉग में गोते लगाकर वह क्या चुनता है? पत्थर या मोती। हिंदी के ब्लॉगर और लेखक केवल एक विषय या एक क्षेत्र से नहीं हैं, बल्कि वे साहित्य, पत्रकारिता, समाज, राजनीति, अध्यात्म आदि क्षेत्रों से जुड़े हुए हैं। वे लोग अपने विचार और अनुभव ब्लॉग पर व्यक्त कर रहे हैं।

हिंदी ब्लॉग की बड़ी खासियत यह है कि इन विचारों और अनुभवों से हम लाभान्वित होने के साथ-साथ तुरंत प्रतिक्रिया भी दे सकते हैं। यह एकतरफा संप्रेषण ना होकर दोतरफा संप्रेषण होता है। इससे ब्लॉग लेखक को जो टीका टिप्पणी मिलती है, उससे ब्लॉगर अपने ब्लॉग लेखन में सुधार भी करता है और अपने ज्ञान में वृद्धि भी करता है। इस तरह एक तरफ ब्लॉगर विचारों के आदान-प्रदान से सही मार्ग की तरफ बढ़ने का प्रयास करता है तो दूसरी तरफ ब्लॉगर और पाठक में एक आत्मीय संबंध भी स्थापित होता है।

ब्लॉग लेखन में कुछ सावधानी बरतनी चाहिए। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि आपके लेखन से कोई मर्माहत न हो। आपकी पोस्ट किसी को नकारात्मक रूप से प्रभावित ना करें। ब्लॉग लेखन करते समय इन सब बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए। वही लिखे जो प्रेरणादायक हो। किसी के बारे में अगर आप की बुरी राय है, तो उसे व्यक्त नहीं करना चाहिए। जो आपको अच्छा लगता है उसी विषय पर लिखना चाहिए।

ब्लॉग लेखन में हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि ब्लॉग के पाठक सिर्फ अपने देश में नहीं बल्कि विदेश में भी होते हैं, इसलिए ब्लॉग लेखन बड़ी ही सावधानीपूर्वक करना चाहिए,

लेकिन अगर आप ब्लॉग पर किसी भी व्यक्ति की तीखी आलोचना भी करते हैं, तो वह व्यक्ति आप पर मानहानि का दावा नहीं कर सकता है। कानूनी रूप से यह अवैध माना जाता है।

इस संदर्भ में ब्लॉगर जगदीश्वर चतुर्वेदी लिखते हैं,- "ब्लॉग की संरचना मासमीडिया के विकल्प मॉडल पर आधारित है। अतः उस पर मीडिया के नियमों को लागू करना संभव नहीं है। मीडिया के एथिक्स को ब्लॉगर के एथिक्स नहीं समझना चाहिए। दोनों की दुनिया अलग है। मीडिया में प्रसारित और प्रकाशित किसी गलत टिप्पणी पर कानूनी कार्यवाही की जा सकती है,जबकि ब्लॉग लेखन में ऐसा करना सही नहीं होगा। ब्लॉग पर गलत अथवा भ्रमित करने वाली पोस्ट या टिप्पणी को पहले तो रोका नहीं जा सकता अथवा किसी भी किस्म के दिशा-निर्देशों को ब्लॉग पर लागू करना संभव नहीं है। इसका प्रधान कारण है कि ब्लॉग की संरचना ठीक ठीक वैसी नहीं है, जैसी मीडिया की है। अतः ब्लॉगर के लिए बनाए दिशानिर्देश बहुत दूर तक मदद नहीं करते।"[32]

अतः ब्लॉग पर कोई बात लिखना, खासतौर पर जो बात पसंद नहीं है, वह मानहानि नहीं होती है। हाल ही में प्रभाष जोशी, राजेंद्र यादव, नामवर सिंह आदि के लेखन पर ब्लॉगरों में तीखी बहस हुई। लेकिन उस बहस का कोई अलग अर्थ निकालकर मानहानि का दावा करें तो यह भूल होगी।

किसी के बारे में लिखना गलत बात नहीं है, और लिखते समय लेखक किस भाषा का प्रयोग करेगा वह लेखक पर निर्भर करता है। इसका फैसला कानून नहीं करेगा। अगर कोई लेखक गाली की भाषा में लिखना चाहता है, तो यह निर्णय उसका है। अब पाठक का फर्ज है कि उस पर प्रतिक्रिया दे या न दे। पाठक अपनी भाषा में जवाब दे या मर्माहत भाषा में, इस

---

[32]मीडिया समग्र (भाग-10) ब्लॉग संस्कृति तमाशबीनों की दुनिया, जगदीश्वर चतुर्वेदी, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2013, पृष्ठ संख्या-47

हक का सम्मान ब्लॉग संपादक को भी करना चाहिए। वर्तमान समय में अनेक विषयों पर ब्लॉग लिखे जा रहे हैं, जैसे 'वीडियो ब्लॉग' इसमें किसी भी प्रोग्राम का वीडियो बनाकर डाल दिया जाता है, तो उसे वीडियो ब्लॉग कहते हैं, 'म्यूजिक ब्लॉग'-इसमें म्यूजिक या संगीत बनाकर डाल दिया जाता है और यह म्यूजिक ब्लॉग हो जाता है।

'पॉडकास्ट ब्लॉग'- इसमें रेडियो कार्यक्रम की तरह अपनी टिप्पणियों को रिकॉर्ड करके ऑडियो फाइल में डाल दिया जाता है और यह 'पॉडकास्ट ब्लॉग' कहलाता है। 'प्रोजेक्ट ब्लॉग' इसमें किसी परियोजना विशेष से जुड़े लोग आपस में विचारों का आदान प्रदान करते हैं। इसी तरह कोई कंपनी यदि अपने उत्पादों या सेवाओं का प्रचार-प्रसार करने के लिए अपने कर्मचारियों के बीच विचारों का आदान प्रदान करती है तो उसे 'कारपोरेट ब्लॉग' कहा जाता है। आजकल तो माइक्रोब्लॉगिंग का चलन तेजी से बढ़ रहा है, इसमें संक्षिप्त रूप में संदेश भेजने का कार्य किया जाता है इस श्रेणी में ट्विटर बड़ी भूमिका निभा रहा है।

ट्विटर ब्लॉगिंग की गति में तीव्रता प्रदान करने का काम बखूबी कर रहा है। ट्विटर में 140 शब्दों की सीमा में आप अपनी बात को रख सकते हैं। ट्विटर ने लोकप्रियता के नए-नए आयाम गढ़े हैं। ट्विटर ने कई तरह की उपयोगी भूमिका अपने नाम दर्ज कराई हैं।

पिछली भारतीय सुनामी और अभी के जापानी भूकंप में ट्विटर के जरिए हजारों लाखों लोगों ने अपनी सलामती के संदेश और दुआएं रियल टाइम में भेजे थे। इतना ही नहीं आजकल बड़ी-बड़ी कंपनियां अपने उत्पाद के प्रचार के लिए ट्विटर का इस्तेमाल करती हैं।

राजनेता भी अपने विचारों को जनमानस में फैलाने के लिए ट्विटर का बखूबी इस्तेमाल करते हैं। अभिनेता अपने फिल्मों के प्रचार प्रसार के लिए ब्लॉग और ट्विटर को एक प्रभावशाली माध्यम के रूप में प्रयोग करते हैं। ट्विटर को हम अपने मोबाइल फोन व लैपटॉप की सहायता से इंस्टैंट मैसेंजर, ई-मेल द्वारा ट्विट भेज सकते हैं। इसका आगमन

(ट्विटर) 2006 ई. में हुआ और इसे लोकप्रिय माइक्रोब्लॉगिंग के रूप में जाना जाता है। आजकल किसी भी घटना पर लोग अपनी तत्काल टिप्पणी के लिए ट्विटर माध्यम का ही प्रयोग कर रहे हैं।

'मो ब्लॉग' को मल्टीमीडिया ब्लॉग कहा जाता है। जिसमें हम किसी सेल फोन या अन्य मोबाइल डिवाइस से पाठ, फोटो, वीडियों या ऑडियों भेजने का कार्य करते हैं। इसी तरह 'इंक-ब्लॉगिंग' है। इंक-ब्लॉगिंग मल्टीमीडिया ब्लॉगिंग का ही दूसरा रूप है। इसमें हाथ से लिखी गई पांडुलिपि को स्कैन करके इंटरनेट के माध्यम से ब्लॉग पर पोस्ट किया जाता है। इससे हमारी पांडुलिपि इंटरनेट पर हजारों साल तक एक अभिलेख के रूप में सुरक्षित पड़ी रहती है।

इसके अतिरिक्त यूट्यूब, इंस्टाग्राम, विकीपीडिया जैसी परियोजनाएं भी ब्लॉग की तर्ज पर विकसित हुई हैं। यूट्यूब पर कोई भी अपनी ओर से वीडियो डाल सकता है। इसी तरह इंस्टाग्राम एक ऐसा वेब है जिसमें हम अपने द्वारा खींची गई तस्वीरों को इंटरनेट पर डाल सकते हैं। इसी तर्ज पर विकसित विकिपीडिया आज के समय में सर्वाधिक लोकप्रिय वेबसाइट है। इसके माध्यम से किसी भी विषय की सामान्य जानकारी हम आसानी से प्राप्त कर सकते हैं तथा कोई भी व्यक्ति अपनी जानकारी विकिपीडिया पर पोस्ट भी कर सकता है। यह इतना सरल है कि आम आदमी से लेकर खास आदमी तक कोई भी पोस्ट को पढ़ सकता है और अपनी पोस्ट विकिपीडिया पर डाल भी सकता है। इस तरह हम 'ब्लॉग' के विविध रूपों को इंटरनेट पर देख सकते हैं।

ब्लॉग के माध्यम से हम अर्थोपार्जन भी कर सकते हैं। इसका एक बड़ा जरिया विज्ञापन है। 'गूगल ऐडसेंस' 'विड वार्ताईजर' 'एड्ब्रिट' और रेवेन्यूपाइलट आदि कई

ऑनलाइन सेवाएं हैं जो ब्लॉग पर विज्ञापन देती हैं। ज्यादातर ब्लॉगर गूगल की 'ऐडसेंस' सेवा को अपनाते हैं।

इस विज्ञापन सेवा को अपने विज्ञापन ब्लॉग पर लगाने के पहले इसका सदस्य बनना पड़ता है। अधिकतर इस तरह की जितनी सेवाएं होती हैं, उनकी सदस्यता मुफ्त में ही मिलती है। इन सेवाओं में पहले सदस्य बनना पड़ता है, फिर यह सेवाएं आपको कुछ 'कोड' प्रदान करती हैं, जिसे ब्लॉग के मुख्य पृष्ठ पर लगाना होता है। यह कोड उपयोगिता के ब्लॉग (जो ब्लॉगर अपने ब्लॉग पर यह कोड लगाता है) के कंटेंट को पढ़कर उसी कंटेंट के हिसाब से विज्ञापन ब्लॉग पर भेजती हैं।

उदाहरण स्वरुप यदि ब्लॉग सिनेमा के बारे में है तो सिनेमा से संबंधित विज्ञापन ही उस ब्लॉग पर दिखेगा। जब उस ब्लॉग का (जिस ब्लॉग पर विज्ञापन कोड लगा है) कोई पाठक उस विज्ञापन पर क्लिक करेगा तो कुछ रकम ब्लॉगर के ऐडसेंस खाते में जमा होगी। यह प्रक्रिया ऐसे ही चलती रहती है। इस तरह कुल जमा रकम की एक निश्चित सीमा पहुँच ने के बाद गूगल चेक के माध्यम से वह रकम ब्लॉगर को भेज देता है। इस तरह एक ब्लॉगर अपने ब्लॉग से अर्थोपार्जन भी कर सकता है।

यहाँ एक शर्त भी होती है। वह यह है कि यदि ब्लॉग का पाठक जो ब्लॉग पढ़ रहा है, वह विज्ञापन के ऐड पर क्लिक करेगा तभी ब्लॉगर के खाते में रकम ट्रांसफर होगी अन्यथा ब्लॉगर को पैसे नहीं मिलेंगें। अतः ब्लॉग को व्यवसाय बनाना चाहते हैं तो आपको अपने ब्लॉग पर नियमित रूप से लिखना चाहिए तभी पाठक आपके ब्लॉग की ओर आकर्षित होंगे। यदि आप नियमित तौर पर ब्लॉग लेखन नहीं करेंगे तो पाठकों की संख्या में कमी होने लगेगी, जिससे आपके व्यवसाय में गिरावट आने लगेगी। इस तरह ब्लॉग लेखन से हम सृजनात्मक शक्ति बढ़ाने के साथ-साथ अर्थोपार्जन भी कर सकते हैं।

1.5 तकनीकी पक्ष

हिंदी ब्लॉगर को ब्लॉगिंग के तकनीकी पक्ष की भी थोड़ी जानकारी होनी चाहिए। ऐसा नहीं है कि इसके लिए किसी विशेष तकनीकी ज्ञान या कंप्यूटर दक्षता की आवश्यकता होती है, बल्कि इंटरनेट और कंप्यूटर की सामान्य जानकारी से ही हम ब्लॉगिंग कर सकते हैं। इंटरनेट पर ब्लॉग बनाने के लिए बहुत सारे मंच मौजूद हैं । जैसे- 'वर्डप्रेस.कॉम' टम्बलर.कॉम' और 'ब्लॉगर.कॉम' प्रमुख है । इसी तरह कुछ तकनीकी शब्द भी हैं जिसे ब्लॉगर को जानना आवश्यक है । जैसे 'वेबपेज होस्टिंग', 'वेबफीड', 'डोमेननेम', 'टैग' आदि तकनीकी शब्दावली हैं।

'वेब पेज होस्टिंग' में किसी वेबपेज को संचित (save) करने के लिए जगह (space) का आवंटन होता है। वेब पेजों को ऐसे कंप्यूटर सर्वर से संचित किया जाता है, जो 24 घंटे इंटरनेट से जुड़े रहते हैं। इसके सर्वर बहुत ताकतवर कंप्यूटर होते हैं। इनकी हार्ड ड्राइव बहुत अधिक जगह (space) वाली होती है। हर एक सर्वर का एक अलग IPaddress होता है।

'वेब फीड या समाचार फ़ीड' डेटा का एक प्रारूप है । इसके द्वारा पाठक के लिए ब्लॉग की अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराई जाती है। वेब फीड को सामान्यतः आर-एस-एस या एटम के रूप में माना जाता है। पहले इसमें सूचना प्राप्त करने की सुविधा आई फिर आर-एस-एस(RSS)/ATOM फीड की तकनीकी आई। RSS का फुल फॉर्म 'Really simple syndication' है। यह फीड नई सूचनाओं को हेडलाइन रूप में पाठक तक पहुँचाने का कार्य करता है और पाठक उस हेडलाइन को क्लिक करके पूरे लेख को पढ़ सकता है।

'टैग' - विषय की संक्षिप्त व्याख्या के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। ये वे शब्द हैं जिसके द्वारा पाठक सर्च इंजन के माध्यम से ब्लॉग पर या वेबसाइट पर पहुँचते हैं। अगर पोस्ट के विषय से संबंधित कुछ शब्द लिखने से छूट गए हैं, तो उन्हें टैग में लिखा जा सकता है।

इंटरनेट पर ब्लॉगर, वर्डप्रेस एवं टंबलर आदि प्रमुख ब्लॉगिंग साइट्स हैं। लेकिन ज्यादातर ब्लॉगर अपना ब्लॉग अकाउंट 'blogger.com' और 'word press.com' पर ही खोलते हैं। 'blogger.com' पर अपना ब्लॉग बनाने के लिए सबसे पहले आपको गूगल अकाउंट से लॉग इन करना पड़ता है। लॉग इन करने के बाद डैशबोर्ड खुलता है और वहाँ पर आपको अपनी डिटेल भरनी होती है। फिर ब्लॉग का शीर्षक देना होता है। आपका ब्लॉग यदि हिंदी में है तो ब्लॉग का शीर्षक हिंदी में लिखा जाता है और फिर ब्लॉग में पता भरा जाता है। इस तरह आपका ब्लॉग तैयार हो जाता है।

ब्लॉगिंग शब्दावली

ब्लॉगिंग शब्दावली में हिंदी ब्लॉगिंग ने अपनी अलग शब्दावली गढ़ी है। ब्लॉगर को ब्लॉगिंग करते समय इन शब्दावलियों की जानकारी आवश्यक होती है। जैसे-

1 पोस्टिंग - ब्लॉग लिखने के बाद प्रकाशन करने की विधि को पोस्टिंग कहा जाता है।

2 टिप्पणियां - ब्लॉगर द्वारा प्रकाशित आलेख को पढ़कर पाठक द्वारा जो टीका टिप्पणी की जाती है। अर्थात जो फीडबैक दिया जाता है, उसे टिप्पणी कहते हैं।

3 ऐडसेंस - गूगल के विज्ञापनों को अपने ब्लॉग पर लगाने के लिए एक गैजेट होता है, जिसे ऐडसेंस कहते हैं।

4 ब्लॉग अर्काइव - ब्लॉग पर उपलब्ध सामग्री को ब्लॉग अर्काइव कहते है।

5 लेबल्स - पोस्ट के साथ दर्ज किए गए लेबल विषय दर्शाने के लिए एक गैजेट के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं इसे लेबल्स कहते हैं।

6 फीड - जैसे कि RSS या ATOM फीड है।

7 सर्च ब्लॉग - ब्लॉग पर उपलब्ध सामग्री को सर्च इंजन की सहायता से खोजा जाता है, इसे ही सर्च ब्लॉग कहते हैं।

8 फॉलोअर्स - ब्लॉग का अनुसरण करने वालों की जो लिस्ट होती है, वे फॉलोअर्स के अंतर्गत आते हैं। जो आप के ब्लॉग को पढ़ते हैं, पसंद करते हैं, और उस पर टिप्पणी करते हैं।

9 डैशबोर्ड - किसी भी खाते में प्रवेश करते ही हम सबसे पहले डैशबोर्ड पर पहुँचते हैं। यहीं से आगे की क्रियाओं को संचालित करने का कार्य किया जाता है।

10 अलेक्सा रैंकिंग - इसके माध्यम से ब्लॉग पर आए ट्रैफिक के आधार पर वैश्विक मूल्यांकन के साथ वास्तविक वस्तु स्थिति यानी रैंकिंग से अवगत कराने का कार्य अलेक्सा करता है।

11 लेआउट - ब्लॉगर अपने ब्लॉग के पेज पर रंग रूप को मिलाने का जो प्रयोग करता है। अपने ब्लॉग को रंग-बिरंगे तरीके से एक नया लुक देता है। जो साज सज्जा करता है उसी प्रक्रिया को लेआउट कहा जाता है।

12 टेंप्लेट - ब्लॉग को सजाने के लिए टेंप्लेट का चयन किया जाता है।

13 साइन इन - ब्लॉग में प्रवेश करने के लिए साइन इन का प्रयोग किया जाता है।

14 साइन आउट- ब्लॉग से बाहर निकलने के लिए साइन आउट प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है।

15 साइन अप - नया खाता खोलने के लिए साइन अप का प्रयोग किया जाता है।

16 ब्लॉग्स वेकअप - गूगल द्वारा बंद किए गए ब्लॉग को वापस पाने के लिए ब्लॉग वेकअप का प्रयोग किया जाता है।

17 एग्रीगेटर - एक सॉफ्टवेयर है जो विभिन्न ब्लागों पर दी जा रही सामग्री को एक ही स्थान पर उपलब्ध कराने का कार्य करता है।

18 मॉडरेटर - सामूहिक ब्लॉग के संपादक को मॉडरेटर कहा जाता है।

19 टेंप्लेट डिज़ाइनर - ब्लॉगर के द्वारा उपलब्ध कराई गई थीम का प्रयोग इसके अंतर्गत किया जाता है। इसे ही टेंप्लेट डिजाइनर कहा जाता है।

20 पेज तत्व - इसमें ब्लॉग के ले-आउट से संबंधित कार्य किए जाते हैं।

21 स्टेटस - किसी एक पोस्ट या ब्लॉग पर किस दिन कितने पाठक आए और कहां से आए। इन सब की जानकारी स्टेटस के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है।

निष्कर्ष रूप में कहें तो ब्लॉग के माध्यम से अनेक प्रतिभाशाली लेखकों को अपनी प्रतिभा दिखाने का मौका मिल रहा है। जहाँ पहले अनेक लेखकों को अपनी प्रतिभा दिखाने का मौका नहीं मिलता था आज उन्हें यह मौका ब्लॉग के माध्यम से मिल रहा है। ये सभी वे लेखक हैं जो पहले प्रकाशकों के दफ्तर के चक्कर काटते रहते थे और प्रकाशक को अपनी रचनाएं दिखाते थे। प्रकाशक उन्हें मौका नहीं देते थे। इसके कई कारण भी थे। समय का अभाव तथा रचना में रुचि का न होना आदि। हिंदी के बड़े साहित्यकार राजेंद्र यादव ने एक बार ब्लॉग के संदर्भ में कहा था – 'ब्लॉग उन लोगों के मन की भड़ास निकालने का साधन है जिनको प्रिंट मीडिया में छपने का मौका नहीं मिला।'

आज प्रकाशक ब्लॉग के माध्यम से उत्तम रचना और रचनाकार को जानकर उस ब्लॉगर से स्वयं सम्पर्क करते हैं, और उनकी रचना के बारे में विचार विमर्श करते हैं तथा रचना को छापने का कार्य भी करते हैं।

ब्लॉग के माध्यम से हिंदी भाषा की भी तरक्की दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। केंद्रीय हिंदी संस्थान में पिछले कुछ वर्षों में भारतीय छात्रों के अलावा विदेशी छात्रों ने भी बड़ी संख्या में प्रवेश लिया है। इतना ही नहीं हिंदी की लोकप्रिय किताबों को कई विदेशी भाषाओं में अनुवाद भी किया जा रहा है।

यह कार्य ब्लॉग के माध्यम से सहज,सरल और तीव्र गति से हो रहा है। वहीं दूसरी तरफ इलेक्ट्रॉनिक माध्यम का झुकाव भी हिंदी की तरफ बढ़ रहा है। जहाँ पहले हिंदी माध्यम के युवा नौकरियों के लिए तरसते थे, वही आज हिंदी काल सेंटरों में, प्रकाशन घरों में अनुवादकों की तथा विदेशों में हिंदी के शिक्षकों की मांग दिन पर दिन बढ़ रही है। बड़ी-बड़ी मल्टीनेशनल कंपनियां हिंदी जानने वालों को नौकरी दे रही हैं, और अपने हैंडसेट व वीडियो गेम्स जैसे अनेक उपकरणों को हिंदी में भी लांच कर रही हैं।

अतः यह कहना गलत नहीं होगा कि ब्लॉग रूपी पंख के सहारे हिंदी साहित्य संपूर्ण विश्व में एक नई उड़ान भर रहा है। इसे प्रो. संजय पु. शेड माके के शब्दों में कहें तो ‘ब्लॉग ने हिंदी रूपी हीरे को भारत की खान से बाहर निकाल कर समस्त विश्व के गले का हार बनने के लिए एक अवसर दिया है’।

इस तरह हिंदी ब्लॉगिंग ने हिंदी के नए लेखको को जन्म दिया है तथा ब्लॉगिंग के माध्यम से संपूर्ण विश्व में हिंदी के लेखकों और पाठकों के बीच एक आत्मीय संबंध स्थापित हुआ है। इस तरह वेब की दुनिया से जुड़कर हिंदी एक नई चाल में ढल रही है। जहाँ हिंदी भाषा के विविध रूप जैसे- आंचलिक भाषाओं से लेकर स्थापित भाषाओं के अनेक रूप हिंदी ब्लॉगर ने विश्व के सामने रखे हैं, जिसका परिणाम यह है कि आज हिंदी ब्लॉगर अपने अंचल से निकल कर देश में ही नहीं बल्कि अंतरराष्ट्रीय मंच पर भी अपनी जगह बना रहा हैं। राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी के प्रचार-प्रसार का जो काम सरकारी संस्थाएं करती हैं उन कार्यों को

भी ब्लॉगर बखूबी अंजाम दे रहा हैं तथा हिंदी ब्लॉगिंग के माध्यम से प्राचीन एवं लुप्त हो रही रचनाओं को पुनः संरक्षित करने का कार्य भी ब्लॉगर कर रहे हैं जिससे हमें अतीत की झलक वर्तमान में भी दिखाई दे रही है।

द्वितीय अध्याय

हिंदी में ब्लॉग लेखन का इतिहास / विकास यात्रा

2.0 हिंदी में ब्लॉग लेखन का इतिहास / विकास यात्रा

2.1 ब्लॉगिंग का इतिहास

2.2 हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास

2.3 हिंदी ब्लॉगिंग और साहित्य

2.3.1 साहित्यिक ब्लॉगर

2.3.2 गैर साहित्यिक ब्लॉगर

2.4 ब्लॉगिंग की संरचना

2.4.1 व्यक्तिगत ब्लॉग

2.4.2 सामूहिक ब्लॉग

2.0 हिंदी में ब्लॉग लेखन का इतिहास / विकास यात्रा

2.1 ब्लॉगिंग का इतिहास

ब्लॉगिंग 'परम स्वतंत्र न सिर पर कोई' जैसी स्वच्छंद विधा है, जहाँ ब्लॉगर ही सब कुछ होता है। वह अपने पसंद के विषय पर लेख लिख सकता है। लेख की भाषा अपने अनुसार सरल, जटिल या चलताउ भी रख सकता है। ब्लॉगर अपने लेख का कलेवर अपनी सुविधा के अनुसार छोटा या बड़ा भी कर सकता है। वह जब चाहे अपनी पोस्ट को एडिट करे या डिलीट करे। यह सब ब्लॉगर के हाथ में होता है।

अतः ब्लॉगगिंग 'अहंब्रह्मास्मि' है। नामवर सिंह ब्लॉगिंग की इस आजाद और अनंत दुनिया के दूसरे पहलुओं के सन्दर्भ में इलाहाबाद ब्लॉगर संगोष्ठी 2009 में आयोजित सेमिनार में कहते हैं- "अचानक पाबंदियों के टूटने से भी दम घुटने लगता है, अनंत आजादी कई बार अराजक स्थिति पैदा करती है। इसलिए चिट्ठाकारी पर जब भी हम बात करते हैं तो स्वतंत्रता और स्वच्छंदता के बीच के फर्क को समझना होगा। चिट्ठाकारी में जो कुछ भी कर रहे हैं उसके साथ हर हाल में जिम्मेदारी का एहसास भी होना चाहिए। आदमी जब बोलता है तो कुछ भी बक देता है, लेकिन लिखते वक्त हम ऐसा नहीं कर सकते। बोलने से जीभ नहीं कटती लेकिन लिखने से हाथ कट जाता है। हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि आजाद अभिव्यक्ति के नाम पर जो कुछ भी चिट्ठाकारी की दुनिया में लिखा जा रहा है, इसके बीच एक स्टेट मशीनरी भी है। आने वाले समय में ये राज्य लिखने के मामले में दखल करें इससे पहले ही चिट्ठाकारों को चाहिए कि वह अपनी जिम्मेदारी को समझते हुए स्वयं अनुशासित हों।"[33]

[33] हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप,व्याप्ति और सम्भावनाएं, संपादक; डॉ. मनीष कुमार मिश्रा,युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-51

नामवर सिंह की बातों को आगे बढ़ाते हुए महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय के कुलपति रहे विभूति नारायण राय लिखते हैं,- "हमें पता है कि जब स्टेट इस तरह के किसी भी मामले में दखल करती है तो उसका रवैया किस तरह का होता है? ऐसे मसले में ब्यूरोक्रेसी नियंत्रण के नाम पर किस तरह का व्यवहार करती है, ये सब हमें समझना होगा।"[34]

ब्लॉगर को ब्लॉगिंग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उसके लेखन से कोई आहत न हो, किसी को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक या सांस्कृतिक क्षति न हो। वही लिखें जो अच्छा हो, सकारात्मक हो, समाज को सही दिशा प्रदान करने वाला हो। ऐसा कुछ भी न लिखें जो कुमार्ग की तरफ ले जाने वाला हो, रास्ते से भटकाने वाला हो, ऐसे लेखन से ब्लॉगर को परहेज करना चाहिए अन्यथा स्टेट नियंत्रण के नाम पर ब्लॉगर पर पहरा लगा सकता है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल अपने 'हिंदी साहित्य के इतिहास' की भूमिका में विचार करते हुए लिखते हैं,- "जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही 'साहित्य का इतिहास' कहलाता है...किसी विशेष समय में लोगों में रुचिविशेष का संचार और पोषण किधर से और किस प्रकार हुआ।"[35] आचार्य रामचंद्र शुक्ल इस बात की तरफ संकेत करते है कि जनता की चित्तवृत्ति बदलेगी तो साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होगा इसलिए इस बदलाव की परंपरा की पड़ताल करना, उनका सामंजस्य बैठाना तथा किसी विशेष समय में

[34] हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप,व्याप्ति और सम्भावनाएं, संपादक; डॉ. मनीष कुमार मिश्रा,युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-51

[35] हिंदी साहित्य का इतिहास,आचार्य रामचंद्र शुक्ल,मालिक एंड कंपनी,जयपुर,प्रथम संस्करण:2009, भूमिका,पृष्ठ संख्या- 21

लोगों में रूचि विशेष का संचार और पोषण किधर से और किस प्रकार हुआ है, उन सभी कारणों की पड़ताल करनी चाहिए और उनके साथ सामंजस्य बैठाना चाहिए।

यहाँ हम देखते है कि रामचंद्र शुक्ल इस बात को मानते हैं कि किसी विशेष समय में लोगों में रुचि विशेष का संचार और पोषण होता है और उस व्यवस्था के संचार और पोषण के साथ सामंजस्य बिठाना पड़ता है। ठीक उसी प्रकार ब्लॉग में देखें तो विशेष समय में लोगों में रुचिविशेष का संचार और पोषण हो रहा है। अतः हमें भी ब्लॉग की व्यवस्था के साथ सामंजस्य बिठाना चाहिए क्योंकि ब्लॉग अपने समय में लोगों में रुचि विशेष का संचार और पोषण करने के समर्थ साबित हो रहा है।

इस संदर्भ में ब्लॉगर जय कुमार झा लिखते हैं,- "साहित्य का असल उद्देश्य सामाजिक विकास तथा संवेदनाओं का विस्तार ही है और आज यह काम ब्लॉग-जगत के द्वारा बखूबी किया जा रहा है।"[36]

इन्हीं की बातों को आगे बढ़ाते हुए डॉक्टर रूपचंद्र शास्त्री मयंक कहते हैं,- "भाषा, साहित्य और संस्कृति की भूमि को जितना उर्वर इस नए माध्यम के द्वारा बनाया जा रहा है, उतना साहित्य के अन्य माध्यमों के द्वारा नहीं।"[37] युवा ब्लॉगर कौशलेंद्र भी जय कुमार झा और डॉक्टर रूपचंद्र शास्त्री 'मयंक' के पक्ष में ही खड़े दिखाई दे रहे हैं वे तो यहाँ तक कहते हैं कि,- "ब्लॉग साहित्य अपने उद्देश्यों को पूरा कर पाने में सक्षम हो चुका है। वे उद्देश्य जो किसी साहित्य के होने चाहिए... रही बात प्रमाण-पत्र की तो, उसकी मैं आवश्यकता इसलिए नहीं समझता कि एकलव्य के पास कोई डिग्री नहीं थी...अब रही बात स्वीकृति की और मान्यता

---

[36] हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति,संपादक;अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात,हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-272

[37] हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति,संपादक;अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात,हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-272

की। सक्षमता को किसी स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होती और जन सामान्य से बड़ी कोई मान्यता नहीं होती। सूर, कबीर, तुलसी, रसखान आदि लोकमान्य पहले हुए, साहित्य मान बाद में हुए।"[38]

कौशलेंद्र की बातों से यह स्पष्ट होता है कि ब्लॉग अपने उद्देश्य को पूरा करने में समर्थ हो चुका है। इसे साहित्य के आचार्यों से प्रमाणपत्र लेने की आवश्यकता नहीं है। यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार सूर, कबीर, तुलसी, रसखान आदि लोगों को जनमानस में पहले स्वीकृति मिली और साहित्य में बहुत बाद में स्वीकार्यता दी।

अतः ब्लॉग को जनसामान्य की स्वीकृति मिल चुकी है और एक न एक दिन साहित्य में भी स्वीकृति मिल ही जाएगी क्योंकि ब्लॉग के हित में सभी का हित समाया हुआ है। इसे दूसरे शब्दों में कहें तो ब्लॉग के हित से आजकल की पीढ़ी का हित जुड़ा हुआ है। कोई भी शक्ति, कोई भी तिरस्कार और कोई भी कालजयी साहित्य ब्लॉग के अनुकरण को कुंद नहीं कर सकता है। इस संदर्भ में व्यंग्यकार और हिंदी के प्रतिष्ठित ब्लॉगर अविनाश वाचस्पति लिखते हैं,- "साहित्य वह जिससे सबका हित सधे, चाहे वह साहित्यकार हो, ब्लॉगर हो या पाठक हो, कार में बैठा हुआ हो अथवा बेकार हो, पैदल चल रहा हो या साइकिल पर सवार हो, पढ़ रहा हो या पेट को भरने की उधेड़बुन में लगा हो।"[39] अतः जिससे सबका हित सधे, वही साहित्य है। चाहे वह पुस्तक पढ़ने वाला हो या अखबार पढ़ने वाला हो, चाहे वह रेडियो सुनने वाला हो या राम कथा सुनने वाला हो सबका हित जहाँ हो वही साहित्य है, जैसे पेड़ सभी को छाया प्रदान करते हैं ठीक उसी प्रकार साहित्य और ब्लॉग सभी को उत्तम विचार प्रदान करते हैं।

---

[38] हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, संपादक; अविनाश वाचस्पति, रविन्द्र प्रभात, हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-272-273

[39] हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, संपादक; अविनाश वाचस्पति, रविन्द्र प्रभात, हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-273

इस संदर्भ में हिंदी के वरिष्ठ ब्लॉगर रविंद्र प्रभात कहते हैं कि,- "हम आप जिसे साहित्य कहते हैं, यदि साहित्य केवल वही है, तो यह तय है कि आज के भ्रष्ट और पतनशील राजनीतिक दौर में जितना कारगर और तात्कालिक हस्तक्षेप ब्लॉग कर रहा है कर पा रहा है, उतना साहित्य के द्वारा संभव नहीं है।"[40]

हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास बड़ा ही रोचक रहा है। सर्वप्रथम यह 'ऑनलाइन डायरी' के रूप में 1990 से शुरू होता है जिसका विस्तार रूप हमें ब्लॉग में देखने को मिलता है। कहा जाता है कि ब्लॉग और वेबलॉग एक दूसरे के पर्याय हैं। यह भी कहा जाता है कि वेबलॉग का विस्तार ही ब्लाग है। इसका ऑनलाइन डायरी से गहरा संबंध है। ऑनलाइन डायरी का अस्तित्व 1990 से शुरु होता है और 1992 में 'वर्ल्ड वाइड वेब' के पितामह Tim Berners Lee ने अपना पहला वेब पेज CER पर जारी किया था, जिसमें ऑनलाइन जारी की गई वेब साईड की जानकारी दी गई थी।

फरवरी 1996 में Dev Winer ने एक और वेब पेज जारी किया जो 24 घंटे की कालक्रम विवरण को प्रस्तुत करने वाली एक लोकतांत्रिक परियोजना थी। अप्रैल 1997 में Deve Winer ने स्वतंत्र रूप से विचारों का आदान-प्रदान करने वालों के लिए एक पेज जारी किया जिस पर कोई भी लिख सकता था और अब वह पुराना वेबलॉग पेज आज ऑनलाइन आ गया है। Jorn Barger द्वारा प्रयुक्त वेबलॉग टर्म के प्रयोग के बाद धीरे-धीरे कुछ तकनीकी विकास को पार करते हुए 1997 तक यह प्रक्रिया ब्लॉग रूप में पहुच गयी। इस तरह ब्लॉगिंग की शुरुआत 'जॉन बार्गर' वेबलॉग से मानते हैं। कुछ लोगों का मानना है कि 1994 में जस्टिन हाल ने पहली बार ऑनलाइन डायरी लिखना शुरू किया था वहीं से ब्लॉग लेखन की शुरुआत होती है।

---

[40] हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति,संपादक;अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात,हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-275

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर केवल राम लिखते है,- “1999 में ब्लॉगिंग में गति आई और Brigitte Eaton द्वारा ब्लॉग को समर्पित Eatonweb नाम का पहला पोर्टल जारी किया। इस पोर्टल पर दैनिक जीवन की गतिविधियां दिनांक के साथ क्रमवार साझा की जाती थी... अगस्त 1999 में Pyra द्वारा ब्लॉगर नामक प्लेटफार्म सभी के लिए Release किया गया। अगस्त 1999 में ही गूगल द्वारा निःशुल्क ब्लॉग पोस्ट डाट कॉम नाम से ब्लागिंग सेवा शुरू की गयी।”[41]

अतः ब्लॉगिंग का सफर बड़ा ही रोचक रहा है। तमाम बाधाओं को पार करता हुआ अपने पथ पर आगे बढ़ता रहा तथा दिन पर दिन अपने आप को साज संवारकर आज एक मजबूत स्थिति में पहुँच गया है जहाँ ब्लॉग की अपनी एक अलग पहचान है।

2.2 हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास

हिंदी ब्लॉगिंग की शुरुआत 21 अप्रैल 2003 से मानी जाती है। यह दिन हिंदी चिट्ठाकारिता के लिए ऐतिहासिक दिन था, जब आलोक कुमार ने ‘नौ दो ग्यारह’ ब्लॉग लिखा था। इस ब्लॉग पोस्ट में आलोक कुमार लिखते हैं,- “चलिए अब ब्लॉग बना लिया है तो कुछ लिखा भी जाए। वैसे ब्लॉग की हिंदी क्या होगी? पता नहीं। पर जब तक पता नहीं है तब तक ब्लॉग ही रखते हैं, पैदा होने के कुछ समय बाद ही नामकरण होता है न।”[42] इस तरह हम देखते हैं कि 21 अप्रैल 2003 की एक छोटी सी शुरुआत आज कितना बड़ा रूप ले ली है। हालाँकि विनय जैन ने अपने अंग्रेजी ब्लॉग ‘हिंदी’ पर हिंदी में पहली पोस्ट 19 अक्टूबर 2002 में ही लिखी थी जिसमें हिंदी में एक कड़ी दी गई थी। इस संदर्भ में रविंद्र प्रभात कहते हैं

---

[41] हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप,व्याप्ति और सम्भावनाएं, संपादक; डॉ. मनीष कुमार मिश्रा,युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-90

[42] हिंदी आधुनिकता एक पुनर्विचार खंड 3,संपादक;अभय कुमार दुबे,वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2014,पृष्ठ संख्या-811-812

कि,- “हिंदी में पहला ब्लॉग बनाने का श्रेय गया अलोक कुमार को ही, जिन्होंने 21 अप्रैल 2003 का ‘नौ दो ग्यारह’ बनाया।”[43]

ब्लॉग लेखन के आरंभिक कारणों की पड़ताल करते हुए सिद्धार्थ शंकर त्रिपाठी लिखते हैं,- “ब्लॉग को विश्व के आम लोगों में भारी लोकप्रियता उस समय मिली, जब अफगानिस्तान पर अमेरिका हमले के दौरान एक अमेरिकी सैनिक ने अपने युद्ध-संबंधी अनुभव को ब्लॉग के माध्यम से दैनिक आधार पर प्रकाशित करना प्रारंभ किया। उस समय एंड्रयू सुलीवान के ब्लॉग को आठ लाख से अधिक लोगों ने खोला व पढ़ा। पाठकों की इतनी बड़ी संख्या प्रिंट माध्यम की अनेक प्रतिष्ठित प्रकाशनों से आगे निकल गई थी। देखते ही देखते 1997-98 केवल दर्जनभर ब्लॉगों से प्रारंभ होने वाला सहज अभिव्यक्ति का नया माध्यम केवल चार वर्षों में दस लाख का आंकड़ा पार कर गया।”[44]

इसी तरह 2003 से प्रारंभ हुए चिट्ठों की संख्या में दिनोंदिन बढ़ोत्तरी होती गई। आज कुल हिंदी-चिट्ठों की संख्या लगभग साठ हजार के आसपास है। ब्लॉग में लगभग सभी क्षेत्रों के लोगों की हिस्सेदारी दिनोंदिन बढ़ती जा रही है, चाहे वे साहित्यकार हो, कलाकार हो, खिलाड़ी हो या राजनीतिज्ञ हो सभी के ब्लॉग गूगल पर मौजूद हैं। बस आपको हिंदी ब्लॉगर्स पर सर्च करने की जरुरत है। ब्लॉगर्स का नाम लिखकर सर्च पर क्लिक करते ही सारे ब्लॉगर्स के प्रवेश द्वार खुल जाएंगे, उस पर क्लिक करके आप ब्लॉग आसानी से पढ़ सकते हैं।

इस संदर्भ में ब्लॉगर रविंद्र कुमार प्रभात लिखते हैं,- “2009 में जो कुछ भी हुआ, उसे हिंदी चिट्ठाजगत ने किसी भी माध्यम की तुलना में बेहतर ढंग से प्रस्तुत करने की पूरी कोशिश की है। चाहे बाढ़ हो या सूखा या फिर मुंबई के आतंकवादी हमलों के बाद की परिस्थितियां

[43] हिंदी आधुनिकता एक पुनर्विचार खंड 3,संपादक;अभय कुमार दुबे,वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2014,पृष्ठ संख्या-811

[44] हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति,संपादक;अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात,हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-105

चाहे नक्सलवाद हो या अन्य आपराधिक घटनाएं चाहे पिछला लोकसभा चुनाव हो अथवा कई राज्यों के विधानसभा चुनाव या सांप्रदायिकता, चाहे फिल्में हो या संगीत, चाहे साहित्य हो या कोई अन्य मुद्दा, तमाम ब्लॉगों पर इनकी बेहतर प्रस्तुती हुई है।"[45]

अतः 2003-04 में ब्लॉगिंग का बहुत ज्यादा विकास नहीं हो पाया, किंतु वर्ष 2004 के उत्तरार्ध में रवि रतलामी ने एक लेख लिखा- 'अभिव्यक्ति का नया माध्यम ब्लॉग' जिसे पढ़कर लोगों ने ब्लॉग को जाना और इसमें दिलचस्पी लेना शुरू किया। वर्ष 2006 में हिंदी-चिट्ठों की संख्या बढ़ी और अनेक महत्वपूर्ण ब्लॉग लिखे गए। वर्ष 2007 में हिंदी-चिट्ठों की संख्या ज्यादा नहीं थी लगभग तीन हजार के आसपास थी, लेकिन 2008 तक आते-आते ब्लॉगों की संख्या दस हजार के आसपास पहुँच गई। इस वर्ष अनेक सार्थक व विषय परख ब्लॉगों की संख्या भी बढ़ी। इसके पीछे बालेंदु दाधीच का भी बड़ा योगदान था, इन्होंने अक्टूबर 2007 में 'कादंबिनी पत्रिका' में एक लेख लिखा था, जिसका नाम था 'ब्लॉग बने तो बात बने' इस लेख को पढ़कर अनेक क्षेत्रों से लोग ब्लॉग लेखन में आए। इस लेख में बालेन्दु दाधीच लिखते हैं,- "ब्लॉग का लेखक ही संपादक है और वही प्रकाशक भी हैं। यह ऐसा माध्यम है, जो भौगोलिक सीमाओं और राजनीतिक-सामाजिक नियंत्रण से लगभग मुक्त है, यहाँ अभिव्यक्ति न कायदों में बंधने को मजबूर है, न अलकायदा से डरने को, न समय की यहाँ समस्या है, न सर्कुलेशन की, यानी ब्लॉग बने तो बात बने।"[46]

2.3 हिंदी ब्लॉगिंग और साहित्य

हिंदी ब्लॉगिंग और साहित्य का संबंध दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। आज इंटरनेट पर हिंदी के वेबसाइटों की संख्या में दिनोंदिन बढ़ोत्तरी होती जा रही है। परिणाम स्वरूप हिंदी

[45] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर(उ.प्र.), प्रथम संस्करण: 2011,पृष्ठ संख्या-11-12

[46]हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास,रवीन्द्र प्रभात,प्रकाशक,हिंदी साहित्य निकेतन,बिजनौर(उ.प्र.),प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-11

साहित्य के लोगों की संख्या में दिन-प्रतिदिन इजाफ़ा होता जा रहा है तथा सचित्र लेखन और कार्टून विधाओं का भी निरंतर विकास होता जा रहा है। इस तरह ब्लॉग पर लगभग सभी विधाओं का साहित्य लिखा जा रहा है। यहाँ पर कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, संस्मरण और रेखाचित्र के साथ-साथ समकालीन साहित्य की जानकारी भी उपलब्ध कराई जा रही है।

ब्लॉग पर हिंदी साहित्य से जुड़े पाठक अपनी रचनाएं पोस्ट करते हैं और उन रचनाओं में अपनी इच्छाओं के अनुरूप लेखन कार्य करते है क्योंकि ब्लॉग का लेखक स्वतंत्र लेखक होता है। यहाँ ब्लॉगर को अपनी रचना पर तत्काल टिप्पणी भी मिल जाती है। इससे ब्लॉगर अपनी रचना की कमियों और खूबियों के बारे में भी जान सकता है, जबकि एक साहित्य के लेखक के लिए यह बड़ा मुश्किल काम होता है।

उदाहरण के तौर पर यह मान ले कि प्रदीप सौरभ ने कोई उपन्यास लिखा है, और जब वह उपन्यास प्रकाशित होगा और पाठकों तक पहुंचेगा और पाठक अपनी सुविधानुसार उसे खरीदेंगे तब पढेंगे। इसके बाद प्रतिक्रिया देने की स्थिति में होंगे तो प्रतिक्रिया देंगे और उन्हें प्रतिक्रिया देने के लिए भी लेखक को चिट्ठी लिखकर भेजना पड़ेगा तब लेखक तक प्रक्रिया पहुंचेगी जो की बड़ी ही जटिल प्रक्रिया है, जिसमे इस बात की गारंटी नहीं है की प्रतिक्रिया समय से पाठक तक पहुँच ही जाएगी। इसके बरक्स ब्लॉग में इतनी जटिल प्रक्रिया बिलकुल नहीं है। ब्लॉग का पाठक अपने पढ़े हुए पर तत्काल प्रतिक्रिया दे सकता है। ब्लॉगिंग की संरचना बड़ी ही सरल और सहज है, जिस कारण पाठक तत्काल प्रतिक्रिया दे सकता है।

आजकल तो स्मार्टफोन का दौर है जहाँ लगभग सभी के हाथ में मोबाइल फोन मौजूद है यानी सभी के हाथों में साहित्य उपलब्ध है। अब यह समस्या नहीं है कि पाठक 500 तक की एक किताब खरीदेगा फिर पढ़ेगा। आज की स्थिति इसके ठीक उलट है। आज आपको साहित्य पढ़ने के लिए एक क्लिक करने की आवश्यकता है और साहित्य आपके सामने

मौजूद हो जाएगा। इसे सूचना क्रांति का वरदान कहेंगे कि ब्लॉग के माध्यम से 24 घंटे आपके समक्ष साहित्य उपलब्ध है। इसके लिए आपको पुस्तकालय में जाने की जरूरत नहीं है, बस आपके पास एक स्मार्टफोन होना चाहिए जिसमे इंटरनेट सुविधा उपलब्ध हो।

आज छोटे-छोटे बच्चों से लेकर वृद्ध लोग भी स्मार्ट फोन का प्रयोग कर रहे हैं। यानी बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक के हाथों में साहित्य मौजूद है। आज यह सब संभव हो पा रहा है ब्लॉग के माध्यम से जहाँ न छपने – छपाने की दिक्कत है न साथ ढोने की। घर बैठे पूरे विश्व का साहित्य पढ़ सकते हैं। यह साहित्य प्रिंट मीडिया के साहित्य की तुलना में ज्यादा सुरक्षित है और इसके रखरखाव की तुलना करें तो ब्लॉग का साहित्य प्रिंट मीडिया के साहित्य की तुलना में लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है, इसके लिए आपको कोई पुस्तकालय बनाने की आवश्यकता नहीं है। इसे ऑनलाइन लाइब्रेरी में सुरक्षित रखा जा सकता है।

इसकी सार्थकता के संदर्भ में हिंदी के चर्चित ब्लॉगर प्रेम जनमेजय लिखते हैं,- "ब्लॉग तो एक माध्यम है और आप यह भी जानते हैं कि जैसे पत्रिकाओं में बकवासी साहित्य भी प्रकाशित होता है, वैसे ही ब्लॉग भी बहुतों के लिए दिल-बहलाव का माध्यम है- कुछ भी, चिंतन विहीन, सतही भी बहुत आता है। अब उद्देश्य स्वान्तः सुखाय नहीं रहा, इसके केंद्र में मनुष्य की सामूहिक चिंताएं आ गई हैं और व्यक्तिगत मनोविनोद, जय-पराजय, सुख-दुःख से ऊपर सामूहिक प्रेम, बंधुत्व स्वतंत्रता और समानता का साहित्य इस पर प्रस्तुत किया जा रहा है। नए मूल्यों के अनुरूप वर्ग, वर्ण और जातियों के बीच की दूरियां घटाई जा रही हैं- तो ऐसे साहित्य किताब के माध्यम से आए या फिर ब्लॉग के माध्यम से, क्या शिकायत हो सकती है?"[47] हिंदी ब्लॉगिंग में महिलाओं के इतिहास पर विचार करें तो ज्यादातर महिलाएं वर्ष 2007 या उसके बाद सक्रिय रूप में ब्लॉगिंग करना शुरू की। इन्होनें टिप्पणियां के माध्यम से

---

[47] हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति,संपादक;अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात,हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण:2011,पृष्ठ संख्या-270

भी एक सकारात्मक बहस में हिस्सा लिया हालांकि इनकी संख्या पुरुष ब्लॉगर की तुलना में कम थी लेकिन वे सभी सार्थक ब्लॉगिंग कर रही थी जैसे पूर्णिमा वर्मन, प्रत्यक्षा सिन्हा, सारिका सक्सेना, नीलिमा, रचना बजाज, सुजाता, निधि श्रीवास्तव, दीना मेहता, मानुषी चटर्जी, रचना जैसी कई बेहतरीन महिला ब्लॉगर शुरुआती दौर में सक्रिय रूप से ब्लागिंग कर रही थीं। इसके अलावा डॉ. कविता वाचकनवी भी शुरुआती दौर की महिला ब्लॉगर रही हैं।

इन सभी संदर्भों से अलग वरिष्ठ ब्लॉगर रवि रतलामी 'पद्मजा' को हिंदी की प्रथम महिला ब्लॉगर मानते हैं वे लिखते हैं,- "हिंदी की पहली महिला ब्लॉगर इंदौर की पद्मजा थीं, जिनके ब्लॉग का नाम था 'कही-अनकही' यह ब्लॉग अब उपलब्ध नहीं है शायद पद्मजा ने इसे मिटा दिया है । फिर भी इसे इंटरनेट आर्काइव पर यहाँ http://web।archive।org/web/http://padmaja.blogspot।com/ देख सकते हैं ।"[48] अतः प्रथम महिला ब्लॉगर कौन है? इसे लेकर सामंजस्य नहीं है।

शुरुआती दौर की प्रसिद्ध महिला ब्लॉगर और मशहूर कवयित्री डॉक्टर कविता वाचकनवी का कहना है कि,- "याहू की बंद हो चुकी ब्लॉग सर्विस (याहू 360 ब्लॉग सेवा) में मैं सबसे पहले शामिल हुई। सन 2006 के उत्तर मध्य में मेरा 'अथ' नाम का वहाँ ब्लॉग था और भी बहुत लोगों के थे पूर्णिमा वर्मन, प्रोफेसर ऋषभदेव शर्मा, रामायण संदर्शन नाम से हमारे ही द्वारा संचालित एक और ...आदि ढेरों ब्लॉग थे। उन दिनों अक्षरग्राम की सेवा हुआ करती थी और सभी लोग उस पर अपनी चर्चाएं शंकाए, संसाधनों की जानकारी आदि से जुड़े मुद्दों पर संवाद आदि किया करते थे।"[49]

---

[48] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-21

[49] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-22

गौरतलब है कि याहू ने 2008 में याहू 360 ब्लॉग सेवा बंद कर दी थी, उसके बाद याहू मेष भी आया। याहू मेष के बंद हो जाने के बाद 'स्पेसेज लाइव' आया जोकि माइक्रोसॉफ्ट की ब्लॉग सर्विस है। यह वर्तमान समय में मौजूद है। इस तरह याहू, मेष, स्पेसेज लाइव आते गए और लोग लिखते गये ब्लॉग बनते गए। इस कड़ी में प्रथम महिला ब्लॉगर कौन है? इसका ठीक-ठीक पता लगाना मुश्किल जान पड़ता है, लेकिन महिला लेखन की बात करें तो महिलाएं सभी विषयों पर खुलकर लिख रही हैं। साहित्यिक लेखन भी कर रही थी, इनके लेखन में घर-परिवार, समाज, स्त्री-पुरुष संबंध ज्यादा निखर कर आया है। राजनीति और व्यवसाय पर लेखन थोड़ा कम हुआ है, लेकिन इनका लेखन बड़ा ही सार्थक लेखन रहा है।

इस संदर्भ में ब्लॉगर रश्मिप्रभा लिखती हैं,- "आपको हर विषय पर प्रविष्टिया मिल जाएंगी नारियों के ब्लॉग पर, किंतु महिला ब्लॉगरों के लेखन में साहित्यिक झुकाव ज्यादा नजर आता है और पारिवारिक, घरेलू तथा सामाजिक समस्याओं, स्त्री-संबंधी समस्याओं पर हमारा लेखन ज्यादा केंद्रित होता है, राजनीतिक व्यवसायिक मुद्दे पर कम।"[50]

चर्चित महिला ब्लॉगर आकांक्षा यादव महिलाओं के लेखन को एक मजबूत स्थिति के रूप में देखती हैं। वे उन्हें (महिलाओं को) स्वतंत्र रूप में अपनी बात कहने में सक्षम पाती हैं। उनका मानना है कि यह लेखन तमाम तरह की रुढ़ियों से मुक्त एक सक्रिय लेखन हैं, जो जनमानस को एक सकारात्मक दिशा देने का कार्य कर रहा हैं। जहाँ सभी तरह की बेड़ियों से मुक्त नारी अपनी आवाज विश्व पटल पर पहुँचा रही है। नारी के विचार समाज को एक नई सोच और नई दिशा दिखाने का कार्य कर रहे हैं।

[50] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-22

आकांक्षा यादव का मानना हैं कि नारी का लेखन किसी मायने में पीछे नहीं है, नारियां सभी विषयों पर खुलकर लिख रही हैं तथा नए-नए विषयों पर भी सार्थक लेखन कर रही हैं, जो समाज को सही दिशा में ले जाने का कार्य कर रहे हैं। वे लिखते हैं कि,- "ब्लॉगिंग के क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति मजबूत है, वे तमाम विषयों पर अपनी रुचि के हिसाब से लिख रही हैं, तमाम महिला ब्लॉगर तो इससे परे प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में भी सक्रिय हैं, पर ब्लॉग का एक सबसे बड़ा फायदा है कि यहाँ कोई सेंसर नहीं है, ऐसे में आपको जो चीज अपील करें, उस पर स्वतंत्रता से विचार प्रकट कर सकती हैं, इस क्षेत्र में महिलाओं का भविष्य उज्जवल है, क्योंकि यहाँ कोई रूढ़िगत बाधाएं नहीं हैं।"[51] महिला ब्लॉग लेखन को गंभीर, सार्थक और स्वछंद बनाने के लिए अलग से नारी ब्लॉग की स्थापना की गई है, जहाँ सिर्फ महिलाएं ही ब्लॉगिंग कर सकती हैं। यह ब्लॉग एक कमेटी ब्लॉग है। जिसकी सदस्य नारियां हैं, जो ब्लॉग लेखन का कार्य करती हैं। यह एक सम्मिलित प्रयास है, जिसके माध्यम से जनमानस तक अपनी बात पहुँचाने का कार्य किया जा रहा है। इस ब्लॉग पर पुरुष लेखन का कार्य नहीं कर सकता है इसमें सिर्फ महिलाएं ही लेखन कार्य कर सकती हैं। एक दूसरा ब्लॉग भी है इसका नाम है 'चोखेर बाली' यह भी नारी ब्लॉग है लेकिन इसमें छूट दी गई है। इस पर कोई भी ब्लॉगर लेखन कार्य कर सकता है चाहे वह महिला हो या पुरुष सभी लेखन कर सकते हैं। इस तरह के और भी कई ब्लाग हैं लेकिन साझा ब्लॉग तो मेरी नजर में दो ही हैं।

दुनिया भर के ब्लॉगरों की संख्या तथा भारत में ब्लॉगरों की संख्या और उनके मुख्य व्यवसाय की पड़ताल करते हुए जगदीश्वर चतुर्वेदी 'टेक्नोराटी' के हवाले से लिखते हैं कि,- "टेक्नोराटी द्वारा 2008 में जारी आंकड़ों के हिसाब से पूरी दुनिया में ब्लॉगरों की संख्या 13.3 करोड़ पहुँच गई है। भारत में लगभग 32 लाख लोग ब्लॉगिंग कर रहे हैं। हिंदी में भी ब्लॉगिंग

[51] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-23

लेखन जनप्रियता अर्जित कर रहा है। हिंदी में ब्लॉगिंग लेखन में बड़ी संख्या में युवा, लेखक, पत्रकार और बुद्धिजीवी आ रहे हैं, पुराने और वरिष्ठ लेखक भी ब्लॉग पर पढ़ना सीख रहे हैं, हो सकता है वे भी कुछ समय के बाद आने लगें। अनेक साहित्यिक पत्रिकाएं भी इन दिनों उपलब्ध हैं। कुछ ब्लॉग हैं जहाँ जमकर बहसें हो रही हैं। अभिव्यक्ति के वैविध्य के साथ हिंदी ब्लॉग जगत समृद्ध हो रहा है।"[52]

'ब्लॉग' किसी भी मुद्दे को बड़े जन-समुदाय तक ले जाने की ताकत रखता है और उनसे एक संवाद भी कायम करता है। इसमें अक्सर ऐसा होता है कि हम किसी से मिले नहीं रहते हैं लेकिन हमारे लेखन को पढ़कर हमारा उस ऑडियंस (जो जन-समुदाय ब्लॉग पड़ता है) के साथ एक रिश्ता बन जाता है। चाहे वह आभासी दुनिया का ही रिश्ता हो, लेकिन रिश्ता बन जाता है। जहाँ ब्लॉगर की एक इमेज बन जाती है, जो घर बैठे ब्लॉगर की एक पहचान बना देती है।

उदाहरण के तौर पर देखें तो नुक्ताचीनी, देवनागरी, रचनाकार, ई-स्वामी, फुरसतिया तथा प्रतिभास जैसे चिट्ठे और आलोक कुमार, देवाशीष चक्रवर्ती, रवि रतलामी, अनुनाद सिंह, जीतू जैसे चिट्ठाकारों की एक अलग पहचान है। इसमें खास बात यह है कि इन हिंदी ब्लॉगरों में से कोई भी 'खाटी' हिंदी वाला नहीं है या यह कह सकते हैं कि इनमें से कोई ऐसा नहीं है, जिसकी रोजी-रोटी हिंदी से चलती है, लेकिन ये सभी हिंदी प्रेमी है और हिंदी के प्रति समर्पित हैं। भविष्य में (2008) ब्लॉगिंग कैसे हो इस सन्दर्भ में वरिष्ठ पत्रकार एवं ब्लॉगर दिलीप मंडल लिखते हैं,- "एक रोमांचक-एक्शनपैक्ड साल का इंतजार कर रहा है। हिंदी ब्लॉग नाम का शिशु अगले साल तक घुटनों के बल चलने लगेगा। अगले साल जब हम बीते साल में ब्लॉगकारिता का लेखा-जोखा लेने बैठें, तो तस्वीर कुछ ऐसी हो। आप इसमें अपनी ओर से

[52] मीडिया समग्र(भाग-10),जगदीश्वर चतुर्वेदी,स्वराज प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2013,पृष्ठ संख्या-36

जोड़ने-घटाने के लिए स्वतंत्र हैं ।"[53] दिलीप मंडल की इस टिप्पणी का सकारात्मक असर हुआ । मुद्दा-आधारित ब्लॉगों की संख्या में वृद्धि हुई तथा असहमति और झगड़ों ने भी ब्लॉगिंग को एक सकारात्मक दिशा प्रदान की, लेकिन मठाधीशी और चरण-वंदन तथा मिलन समारोह जैसे कार्यक्रमों से ब्लागिंग की दुनिया थोड़ी प्रभावित है, लेकिन जल्द ही यह शिकायत भी दूर हो जाएगी।

2.3.1 साहित्यिक ब्लॉगर

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इसमें हमने उन ब्लॉगरों को रखने का प्रयास किया है जो साहित्यकार होने के साथ-साथ ब्लॉगर भी हैं अर्थात् ऐसे साहित्यकार जिनका हिंदी साहित्य में लेखन करने के साथ-साथ हिंदी ब्लॉगिंग में भी महत्वपूर्ण योगदान है। ऐसे कुछ महत्वपूर्ण ब्लॉगर निम्नलिखित हैं।

गोपाल प्रधान

गोपाल प्रधान हिंदी साहित्य जगत के वरिष्ठ साहित्यकार और ब्लॉगर हैं। इनके ब्लॉग का नाम 'जमाने की रफ्तार' जिसकी टैग लाइन 'कुछ मन की, कुछ ज़माने की' है। यह पश्चिम बंगाल के रहने वाले हैं लेकिन अपने आप को बनारस का ही कहलाना पसंद करते हैं। वे अपने ब्लॉग के मुख्य पृष्ठ पर अपने परिचय के सन्दर्भ में लिखते हैं,- "पैदाइश बंगाल की है लेकिन रहने वाला बनारस का कहलाना पसंद है। बचपन से विद्रोही स्वभाव पाया है। बेचैनी जन्म से मिली और उसे बचाए रहना अच्छा लगता है। हमेशा नयापन आकर्षित करता है। कम्युनिस्ट हूँ थोड़ा पुराने किस्म का। अध्यापक हूँ पेशे से।" 'जमाने की रफ्तार' नामक ब्लॉग पर 2010 से सक्रिय रूप से गुलामी कर रहे हैं। ब्लॉगर गोपाल प्रधान ने 2010 से लेकर अभी

[53]हिंदी आधुनिकता एक पुनर्विचार खंड 3,संपादक;अभय कुमार दुबे,वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2014,पृष्ठ संख्या-816

तक लगभग 350 से अधिक ब्लॉग लिखे हैं। इनमें से समकालीन विमर्श से सम्बन्धित ब्लॉग निम्नलिखित हैं।

December 15, 2010, साहित्यिक टिप्पणियाँ

May 22, 2011, मोबाइल महिमा

June 14, 2011, दलित नेता के लिए

July 17, 2011 प्रेमचंद के स्त्री पात्र

(जनसत्ता 17 जुलाई 2011 में प्रकाशित 'महज देह नहीं' का मूल पाठ),

October 10, 2013, मुक्ति का मार्क्सवादी विमर्श

April 17, 2013 वामपंथ का भविष्य और भविष्य का वामपंथ,

October 31, 2014 साहित्य में भी ज्ञान वर्धन की जरूरत है,

April 16, 2014, वर्तमान सदी में मार्क्सवाद,

March 10, 2014, मैनेजर पाण्डेय और जनसंस्कृति,

August 20, 2015अस्मिता विमर्श और मार्क्सवाद, देशप्रेम

May 9, 2016, देशप्रेम, देशभक्ति और राष्ट्रवाद,

शनिवार, 1 अक्तूबर 2016,अस्मिता का पुनर्पाठ,

जून 26, 2016,सोशल मीडिया के डिजिटल संस्कार,मंगलवार,

22 अगस्त 2017शिक्षा किसके दवाब में है ? शिक्षा के शत्रु कौन हैं ?,

मंगलवार, 25 अप्रैल 2017 नवजागरण और शूद्रों की मुक्ति के सवाल,

शनिवार, 18 फ़रवरी 2017 तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन की समस्याएं,

गुरुवार, 6 दिसंबर 2018 गांधी का पुनर्पाठ- 1 से लेकर 5 तक

Wednesday, January 30, 2019 हिंदी का दलित साहित्य: वर्तमान चुनौती और भविष्यगत सम्भावना

Tuesday, November 19, 2019, अंबेडकर के बुद्ध

Friday, May 29, 2020, औपनिवेशिक भारत में कम्युनिस्ट आंदोलन

इसमें से हम एक ब्लॉग 'दलित नेता के लिए' पर विचार करें तो इसमें दलित जीवन की व्यथा-कथा , दारुण दसा , उसके शोषण की दास्तान , स्वतंत्रता की पीड़ा का जिक्र करते हुए समाज में उनके प्रति इस सशक्त नजरिये को बदलने का आह्वान करते है।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर गोपाल प्रधान लिखते हैं, – "तेल चुपड़े हुए लंबे बाल, छींटदार लुंगी, हाथ में रेडियो पकड़कर एक क्षण को उन्हें लगता बाकी सारे नौजवानों की तरह उन पर भी जवानी आई है। लेकिन यह अहसास तभी तक रह सकता था जब तक कोई बाबू किनारीदार धोती पहने, जनेऊ डाले दिखे नहीं। उनके दर्शन हुए नहीं कि आत्मा तक सकुच जाती। क्या क्या नहीं किया उन्होंने इस संकोच से जी छुड़ाने के लिए।"[54]

एक दूसरे ब्लॉग 'हिंदी का दलित साहित्य: वर्तमान चुनौती और भविष्यगत सम्भावना' में ब्लॉगर गोपाल प्रधान लिखते हैं, –"अन्य भाषाओं के बारे में नहीं मालूम लेकिन हिंदी में दलित साहित्य को अपनी जगह बनाने के लिए शायद किसी भी साहित्यिक

[54] http://gopalpradhan.blogspot.com/2011/06/blog post_14.html,15/07/2020,09:23

प्रवृत्ति से अधिक जूझना पड़ा है। उसकी प्रतिष्ठा के विरोध में लगभग उसी किस्म की गोलबंदी हुई जिस तरह की गोलबंदी देहाती इलाकों में दलित समुदाय की उपस्थिति को अदृश्य बनाने के लिए की जाती रही है। इन सबके बावजूद उसने उसी संघर्ष क्षमता का परिचय दिया जो खेती के मामले में उस समुदाय के जुझारूपन की विशेषता रही है।"[55] अतः यहाँ ब्लॉगर इस बात की तरफ ध्यान आकृष्ट करते हैं कि दलित विमर्श को अपनी पहचान बनाने के लिए अन्य साहित्यिक प्रवृत्ति की तुलना में अधिक जूझना पड़ा है। इसके बावजूद भी दलित विमर्श अपने जुझारू व्यक्तित्व के कारण अपनी अलग पहचान स्थापित कर लिया है जो समस्त दलित समाज के लिए एक दिशा देने का कार्य कर रहा है।

गोपेश्वर सिंह

ब्लॉगर गोपेश्वर सिंह दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हैं। इनके ब्लॉग का नाम 'लिखत-पढ़त' है। इन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से साहित्य जगत को एक नई दिशा प्रदान की है इनके साहित्य का मुख्य स्वर भक्ति प्रधान है और इन्हें भक्ति साहित्य का विशेषज्ञ माना जाता है। इन्होंने केवल प्रिंट में पुस्तकों के माध्यम से ही साहित्य को मजबूत नहीं किया है बल्कि साहित्य को तकनीकी रूप से प्रस्तुत करने में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

अपनी सर्जनात्मकता के द्वारा इन्होनें ब्लॉग जगत को समृद्ध किया है। इनके ब्लॉग का नाम 'लिखत-पढ़त' है जिसका हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। इनके ब्लॉगों के माध्यम से हिंदी साहित्य का उत्कृष्टतम स्वरूप देखा जा सकता है। इनके कुछ महत्वपूर्ण ब्लॉग निम्नलिखित हैं।

Wednesday, 10 December 2014 कबीर: कल, आज और कल,

---

[55] http://gopalpradhan.blogspot.com/2011/06/blog-post_14.html, 15/07/2020,09:29

Tuesday, 8 December 2015 हिंदी नवरत्न,

Monday, 25 May 2015 कबीर और उनका रहस्यवाद

Saturday, 16 May 2015 मध्यकालीन कविता का अध्ययन – अध्यापन: एक पुनर्विचार

Thursday, 18 June 2015 कबीर के बारे में: एवेलिन अंडरहिल

Saturday, 13 June 2015 'हिन्द स्वराज' और 'कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो'

Monday, 17 August 2015 स्वतंत्रता एक अधूरा शब्द है!

Sunday, 25 December 20162016 की हिंदी आलोचना

Tuesday, 19 July 2016 भक्ति-आन्दोलन और मुक्तिबोध

Saturday, 18 August 2018 कविता परोक्ष की विधा है

Sunday, 5 May 2019 राम कथा का बहुवचनात्मक पाठ

यहाँ हम देखते हैं की ब्लॉगर गोपेश्वर सिंह का झुकाव मुख्य रूप से भक्तिकालीन साहित्य के इर्द-गिर्द रहा है। भक्तिकालीन कवियों पर उनकी विशेष दृष्टि रही है। भक्तिकाल के साहित्य को प्रायः व्यक्तिगत तथा आध्यात्मिकता की परिप्रेक्ष्य में व्याख्यायित किया जाता है किन्तु गोपेश्वर सिंह ने भक्ति के साहित्य को आध्यात्मिक संदर्भों के साथ-साथ सामाजिकता तथा प्रासंगिकता के आलोक में व्याख्यायित करके भक्तिकाल को नया आयाम प्रदान करने का प्रयास किया है।

वे अपनी एक पोस्ट 'कबीर: कल, आज और कल,' में भक्तिकाव्य पर विचार करते हुए लिखते हैं,- "भक्ति काव्य पूरी दुनिया में विलक्षण कविता है। वह चाहे जिस भाषा में

लिखी गयी हो, ब्रज में हो, अवधी में हो, पंजाबी में हो, कन्नड़ में हो, बंगाली में हो, असमिया में हो, वह सिर्फ कविता नहीं, वह वो नैतिकता है, जो हमें और हमारी आत्मा को हिला कर रख देती है। वह हमारे अंतर्जगत को बदल देने वाली कविता है।"[56] भक्तिकाल की कविता अंतर्जगत को बदल देने वाली है। ये कथन अपने आप में महत्त्वपूर्ण है। उनके इस कथन के भाव बहुत गंभीर हैं। गोपेश्वर सिंह के कबीर केवल निर्गुण व सगुण ब्रम्ह के उपासक नहीं हैं अपितु वो व्यक्तिगत चेतना तथा आत्मिक उन्नति को विकसित करने वाले मार्गदर्शक हैं।

प्रोफेसर गोपेश्वर सिंह के ब्लॉग से यह स्पष्ट होता है कि,- "भक्तिकाल की कविता भाषा अलंकार आदि काव्यात्मकता को बढ़ाने वाले तत्त्वों की दृष्टि से तो समृद्ध है ही तथा वह भाव, विचार तथा सामाजिक और व्यक्तिगत चेतना की दृष्टि से भी किसी से कम नहीं है। उनके शब्दों में यह काम दुनिया के बड़े से बड़े कवि की कविता नहीं करती। आप दुनिया के बड़े से बड़े कवि को पढ़ जाएँ। आप उसकी कविता को सराहेंगे, उसकी कहानी को सराहेंगे, रूपक और मेटाफर को सराहेंगे, आप अपने देश के कालिदास को पढ़ जाएँ, जो कवि कुलगुरु माने जाते हैं, वे हमारी नैतिकता को उस तरह से हिलाकर नहीं रखते जिस तरह से मध्यकालीन भारत में पैदा हुए भक्त-संत कवि। कबीर, तुलसी, वसवन्ना, शंकरदेव को आप पढ़ें, आप एकबारगी हिल जाएँगे। वह कविता आपकी आत्मा को झकझोरेगी। वह सिर्फ आपकी सौंदर्य-चेतना को जाग्रत भर करने का काम नहीं करेगी। आप एक बार मन से भक्ति कविता को पढ़कर देखें, आपकी आत्मा के भीतर की कालिमा उज्ज्वलता में बदलती जाएगी।"[57]

इस प्रकार हम देखते हैं ब्लॉगर ने भक्तिकाल की सौन्दर्य चेतना की छाया में छिपी हुई सामाजिक चेतना के स्वर को प्रकाशित करके भक्तिकाल को नए संदर्भों में व्याख्यायित किया है। इसके लिए वे गाँधी जी का उदहारण प्रस्तुत करते हैं। गाँधी जी की आत्मकथा के एक

---

[56] http://likhat-padhat.blogspot.com/2014/12/blog-post_10.html,09/08/2020,10:47

[57] http://likhat-padhat.blogspot.com/2014/12/blog-post_10.html,09/08/2020,12:47

उद्धरण को उद्धृत करते हुए अपने ब्लॉग की एक पोस्ट 'राम कथा का बहुवचानात्मक पाठ' में लिखते हैं कि, - "गांधी जी ने अपनी आत्मकथा में स्वीकार किया है कि मुझें तुलसीदास की रामचरितमानस का जो संस्कार मिला, वह जीवन भर काम आया। गाँधी को जब-जब संकट आया उन्होंने तुलसी की रामचरितमानस से और भक्त कवियों से शक्ति ली। जिस समय हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के सभी राजनेता जश्न- ए- आज़ादी मना रहे थे गाँधी अपने चंद साथियों के साथ 'नोआखोली' के साम्प्रदायिक दंगे में निर्भीक होकर 'वैष्णव जण ते तेणे रे कहिये' गाते हुए मोर्चे पर डटे हुए थे। गांधी जी की प्रपौत्री मधुबेन की 1946 से 1948 तक की डायरी से पता चलता है कि ऐसा अभय गाँधी को कहाँ से मिला। यह अभय उन्हें भक्ति-काव्य से मिला, तुलसी से मिला, नरसिंह से मिला।"[58]

यहाँ वे गाँधी जी की समरसता तथा निर्भीकता को भक्ति साहित्य का प्रभाव मानते हैं। निर्भीकता और साहस व्यक्तिगत गुण हैं। वे किसी भी व्यक्ति में हो सकते हैं किन्तु जब चारों ओर घोर निराशा के बादल छायें हो और कोई रास्ता न हो तब साहस और निर्भीकता का होना भक्ति के द्वारा ही संभव है। इन्हीं गहन भावों की दृष्टि से उन्होंने भक्तिकाल की पड़ताल की तथा भक्ति साहित्य को नये मानकों के अनुसार प्रस्तुत किया है।

हरिराम मीणा

इनके ब्लॉग का नाम 'आदिवासी जगत' है। इस ब्लॉग में आदिवासी जनजीवन से जुड़ी हुई विभिन्न समस्याओं को उठाया गया है। आदिवासी अनादिकाल से जल, जंगल, जमीन की लड़ाई लड़ रहे हैं। इस लड़ाई को जनमानस के सम्मुख लाने में 'आदिवासी जगत' एक सार्थक कदम है। इस ब्लॉग के माध्यम से हरिराम मीणा ने आदिवासियों की चुनौतियों, अधिकारों तथा मुख्यधारा में लाने वाले तमाम मुद्दों को उठाने का प्रयास किया है। हरिराम

[58] http://likhat-padhat.blogspot.com/2019/,09/08/2020,12:58

मीणा ने आदिवासी समाज के संदर्भ में फैली तमाम भ्रांतियों को भी निरस्त करने का प्रयास किया है। जिससे उनका जीवन सहज रुप से चल सके।

इस मिशन को चलाकर हरिराम मीणा ने एक सार्थक प्रयास किया है। इस ब्लॉग के माध्यम से उन्होंने आदिवासी समाज, उसकी संस्कृति और वर्तमान चुनौतियों को मुखर शैली में व्यक्त करने का प्रयास किया है। इस क्रम में अपनी एक पोस्ट 'वैश्वीकरण और आदिवासी' में लिखते हैं, - "भारत के आदिवासीजन भौगोलिक दृष्टि से मुख्य समाज से अलग-थलग रहते हैं वे पूँजी संचालित बाजार का हिस्सा धीरे-धीरे बनेंगे, लेकिन जहाँ तक प्राकृतिक संसाधनों की बात की जाती है तो आदिवासी अस्तित्व का सवाल गहरे रूप में जल-जंगल और जमीन से जुड़ा हुआ मिलता है जिसे दूसरे शब्दों में हम प्रकृति पर निर्भर जीवन कह सकते हैं। जंगल में आदिवासी लोग रहते आये हैं। जंगल प्रकृति का आधारभूत तत्त्व है। यदि जंगल है तो पहाड़ है ,नदियां हैं, झीलें हैं , सरोवर हैं जंगली जानवर हैं, और धरती के गर्भ में संचालित खनिज संपदा। इसलिए जब-जब जंगल पर आंच आई तब-तब आदिवासी जन ने अपना मोर्चा संभाला।"[59] अतः आदिवासी समाज की मूलभूत जरूरतों और उनके श्रम और संसाधन पर सिर्फ उन्हीं का अधिकार है। यह बात आवश्यक है कि उसका उपयोग मुख्यधारा के लोग भी करते हैं परंतु उसका लाभ आदिवासी समाज को कम या फिर नहीं के बराबर मिलता है। इसलिए प्रशासन से लेकर पढ़े-लिखे लोगों को भी इस समाज की चिंताओं के प्रति जागरूक करने के संदर्भ में एक दूसरी पोस्ट में लिखते हैं,- "आदिवासी साहित्य चाहे वह वाचिक परंपरा से संबंध रखता है या सीधा-सीधा लिपिबद्ध रूप में हमें उपलब्ध हो रहा है। दोनों ही दशाओं में उसकी परख का सवाल एक बड़े सवाल के रूप में हमारे सामने उपस्थित होता है। यहाँ आलोचना की स्थापित प्रतिमा शायद निकस के रूप में ज्यादा उपयोगी सिद्ध हो। साहित्यिक मूल्यांकन के लिए स्थापित प्रतिमाओं के कुछ अस्थाई सूत्र काम में आ सकते हैं जिसे हम

[59] http://harirammeena.blogspot.com/ date- 04/07/2019,time-08:17

'आलोचना की समझ' कह सकते हैं। अन्यथा विषय वस्तु, शिल्प, भाव पक्ष व मुहावरा इन सभी स्तरों पर आदिवासी साहित्य तथाकथित मुख्यधारा के साहित्य से इतर अपनी विशिष्ट राय रखता है। उसे समझने के लिए एक सही दृष्टि की दरकार रहेगी जो जरूरी नहीं कि साहित्य की हर किसी प्रतिष्ठित समीक्षक या विद्वान के पास हो।"[60]

2.3.2 गैर साहित्यिक ब्लॉगर

इसमें हमने उन ब्लॉगरों को रखने का प्रयास किया है जो हिंदी के साहित्यकार तो नहीं हैं लेकिन हिंदी और विमर्श से जुड़े मुद्दों पर ब्लॉग लेखन का कार्य कर रहे हैं। ऐसे कुछ महत्वपूर्ण ब्लॉगर निम्नलिखित हैं -

रवीश कुमार

इनके कई ब्लॉग है, जिनमें 'कस्बा' और 'नई सड़क' प्रमुख है। ये एनडीटीवी में पत्रकारिता करते हैं। ये अपने ब्लॉगों पर अपने जिंदगी की घटनाओं, समसामयिक विषयों व साहित्यिक विषयों पर भी बड़े मुखर स्वर में लिखते रहते हैं। उनके ब्लॉग में राजनीतिक विषय प्रमुखता से उठाए गए हैं। यह लगभग राजनीति से संबंधित हर एक विषयों का विश्लेषण करके अपने ब्लॉग पर एक अलग अंदाज में पेश करते हैं। आमतौर पर वह दैनिक हिंदुस्तान में प्रत्येक बुधवार को ब्लॉग वार्ता के अंतर्गत सार्थक ब्लॉग भी लिखते रहे हैं। इनके विषय में विचार करते हुए वरिष्ठ ब्लॉगर रवि रतलामी लिखते हैं,- "नई सड़क' पर रवीश ने बहुत से नए विषयों पर नए अंदाज में लिखा है और ऐसा लिखा है कि मीडिया के अच्छे से अच्छे लेख उनके सामने टिक नहीं पाए। हिंदी चिट्ठाकार को नई दिशा की ओर मोड़ने का काम 'नई

[60] http://harirammeena.blogspot.com/ date- 04/07/2019,time-08:17

सड़क' के जिम्मे भले ही ना हो मगर नई दिशा की ओर इंगित किया है।"[61] रवीश कुमार के ब्लॉग की टैगलाइन 'शौक ए दीदार अगर है तो नज़र पैदा कर' एक नई दिशा की तरफ इशारा करती है। इन्होंने लगभग सभी ज्वलंत मुद्दों पर ब्लॉग लिखे हैं। कहते हैं कि पत्रकारिता में जो नहीं उठा पाता हूँ उन मुद्दों को ब्लॉग के माध्यम से आम जन तक पहुँचा देता हूँ । इस तरह हम देखते हैं इनके ब्लॉग में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक मुद्दों को लेकर अनेक ब्लॉग लिखे गए हैं जिसमें उनकी राजनीतिक विश्लेषण की भूमिका रही है। उदाहरण के तौर पर उनकी कुछ पोस्ट पर नज़र डालें तो हम पाएंगे कि इनके ब्लॉग में राजनीति के रूप में अधिकतर पोस्ट लिखी गई हैं। जिसमें वह अपनी एक अलग शैली में चीजों को रखने का प्रयास करते हैं।

रवीश कुमार की पोस्ट पर नजर डालें तो उनकी पोस्ट कुछ इस प्रकार हैं 'बिहार में जल्दी आने वाला है नीतीश सूखा', 'हजारों की संख्या में सरकार लगा रही है समर्सिबल पंप', 'बेरोजगारी की दर ने 45 साल का रिकॉर्ड तोड़ा मगर बिखर गया बेरोजगारी का मुद्दा', 'प्रेस कॉन्फ्रेंस के लिए नहीं प्रेस को दर्शन देने आए थे प्रधानमंत्री मोदी' इस तरह हम देखते हैं कि रवीश के ब्लॉग में राजनीतिक मुद्दों को ज्यादा प्रमुखता दी गई है। ये कहीं एकांगी हो जाते है। ऐसा लगता है कि मानों किसी ख़ास पार्टी के प्रवक्ता हो और उनके विश्लेषण का अपना एक अलग अंदाज है जिसके लिए वे जाने जाते हैं। अपनी बात को मनवाने के लिए किसी भी तथ्य को तोड़ मरोड़कर प्रस्तुत करने में उनको महारथ हासिल है।

[61] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-120

दिनेशराय द्विवेदी

इनके ब्लॉग का नाम 'तीसरा खंभा' है। इस ब्लॉग में ये न्याय प्रणाली की विडंबना के संदर्भ में बताते हैं कि स्वतंत्रता के 73 वर्ष बाद भी न्याय पाना आम आदमी के लिए बड़ी जद्दोजहद का विषय है। अदालतों के चक्कर लगाकर और वकीलों की फीस चुकाते-चुकाते एक आम आदमी अपनी सारी जमा पूँजी गँवा देता है।

आज डिजिटल युग में जब समाज सभी विषयों में जागरूक हो रहा है तब न्यायिक विषय ही क्यों पीछे रहें। भारतीय न्यायपालिका में होने वाला विलम्ब सर्वविदित है। इस संदर्भ में एक कहावत है कि- देरी से मिलने वाला न्याय अन्याय के बराबर होता है। इसलिए राजस्थान के कोटा जिले के दिनेशराय द्विवेदी ने 'तीसरा खम्बा' नामक ब्लॉग की शुरुआत करके महत्वपूर्ण कार्य किया है। और उसी के सहारे जनता में जागरूक्ता पैदा करने का काम कर रहें हैं।

'तीसरा खंभा' नामक इस ब्लॉग के माध्यम से ब्लॉगर ने पारिवारिक विषयों, संपत्ति-विभाजन, भूमि-स्वामित्व, अंतरजातीय विवाह, यातायात संबंधी मानहानि आदि विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है। इस ब्लॉग की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि न्याय पाने वाला व्यक्ति सीधे प्रश्न कर सकता है और ब्लॉगर उसी आधार पर उसे परामर्श देता है। उदाहरण के लिए देखें तो आजकल लव जिहाद जैसे मुद्दे सुर्खियों में रहते हैं वहीं दूसरी तरफ इसका उल्टा प्रभाव भी दिखाई देता है इस तरह के तमाम मुद्दों के निवारण के उपाय ब्लॉगर अपने ब्लॉग में बताने का प्रयास करते हैं।

इसी संदर्भ में 'तीसरा खंभा' की एक पोस्ट 'अंतर्धार्मिक विवाह किस पद्धति से हों तथा कैसे संरक्षित हों? में एक प्रश्न 'एक मुस्लिम वयस्क लड़की एक हिंदू वयस्क लड़के से शादी करना चाहती है लेकिन लड़के को भय है कि लड़की के घरवाले पुलिस में रिपोर्ट कर

सकते हैं। ऐसी स्थिति में लड़के के लिए क्या विधिक उपचार हैं। लड़का शादी किस प्रकार से करे विशेष विवाह अधिनियम (स्पेशल मैरिज एक्ट) में या धर्मानुसार? जिससे उसे भविष्य में कोई समस्या ना हो।

इसके प्रत्युत्तर में ब्लॉगर अपना मत व्यक्त करते हुए लिखते हैं,- "इस तरह की परिस्थितियों में एक ही सही उपाय है कि दोनों पति-पत्नी उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर करें और कहें कि वे विवाह करना चाहते हैं उनके परिजन ऐसा नहीं चाहते और वे जन-बल, धन-बल और पुलिस की मदद से उन्हें ऐसा करने से रोक रहे हैं उन्हें आशंका है कि उनकी जान तक जा सकती है। इस कारण पुलिस को हिदायत दी जाए कि वह ऐसी किसी भी कोशिश को रोके और उन्हें स्थिति सामान्य होने तक संरक्षण प्रदान करे। तो आपके ये दोनों लड़के लड़की भी यह उपाय कर सकते हैं।"[62]

2.4 ब्लॉगिंग की संरचना

ब्लॉगिंग की संरचना की पड़ताल करें तो दो तरह के ब्लॉग लेखकों के बारे में पता चलता है। सामूहिक ब्लॉग और व्यक्तिगत ब्लॉग। व्यक्तिगत ब्लॉग पर एक व्यक्ति लेखन कार्य करता है, जबकि सामूहिक ब्लॉग पर अनेक व्यक्तियों द्वारा लेखन कार्य किया जाता है। आरंभिक दौर में हिंदी ब्लॉगरों की कमी के कारण सामूहिक ब्लॉग बनाए गए और चिट्ठा चर्चा का प्रचार-प्रसार इसके माध्यम से किया जाता रहा। इसमें एक ही साथ कई ब्लॉगर अपने लेख प्रकाशित करते थे, जिससे एक ही साथ पाठक को विविध विषयों की जानकारी मिलती रहती थी। सामूहिक ब्लॉग में एक माडरेटर होता है जिसकी अनुमति से अन्य ब्लॉगर अपना ब्लॉग पोस्ट करते हैं। सामूहिक ब्लॉग में 'नारद', 'अक्षर ग्राम नेटवर्क', 'चिट्ठाजगत.इन', 'तरकश.कॉम', 'परिकल्पना.कॉम', 'ब्लॉगसेतु', 'सर्वज्ञ विकी', 'हमारी वाणी', 'ब्लॉग

---

[62] teesarakhamba.com/अंतर्धार्मिक-विवाह ,date- 04/07/2019,time-07:36

प्रहरी', आदि इंटरनेट पर मिलते हैं जिन्हें मुख्य रूप से ब्लॉग एग्रीगेटर कहा जाता है। इनका विस्तृत परिचय निम्नलिखित रूपों में है।

नारद

नारद हिंदी ब्लॉगिंग में शुरुआती दौर का लोकप्रिय ब्लॉग एग्रीगेटर रहा है। यह हिंदी चिट्ठाजगत में प्रकाशित सभी पोस्टों को एक जगह पर लाने का कार्य करता है, जिससे पाठक एक ही जगह पर विविध प्रकार के पोस्ट आसानी से देख सकते हैं और उन पोस्ट पर क्लिक करके पाठक चिट्ठाकारों की ताजी पोस्टों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इस (नारद) ब्लॉग एग्रीगेटर सेवा के माध्यम से हिंदी चिट्ठाकारों का प्रारंभिक विकास हुआ।

इस तरह आरम्भिक चिट्ठा-जगत को एक मंच प्रदान करने में 'नारद' की बड़ी भूमिका रही है। नारद की परिकल्पना 'पंकज नरूला' ने की और बाद में इसके संचालन का जिम्मा 'जितेंद्र चौधरी' ने संभाला।

परिकल्पना.कॉम

इसे 'परिकल्पना ब्लॉगोत्सव' भी कहा जाता है। इसकी स्थापना 'रविंद्र प्रभात' ने की है। रविंद्र प्रभात और उनके सहयोगियों के प्रयास से हिंदी ब्लॉग लेखकों को एक सम्मान दिया जाता है, इसे 'परिकल्पना सम्मान' कहा जाता है। परिकल्पना सम्मान को हिंदी ब्लॉगर का 'ऑस्कर' नाम से नवाजा जाता है। इसका (परिकल्पना) मुख्यालय लखनऊ में स्थित है। इस संस्था द्वारा परिकल्पना समय नाम की पत्रिका भी प्रकाशित की जाती है। परिकल्पना कोश नामक एक वेबसाइट भी रविंद्र प्रभात ने निकाली है, जिसमें कोई भी ब्लॉगर अपने ब्लॉग से संबंधित प्रमाणिक जानकारी उपलब्ध करा सकता है।

अक्षर नेटवर्क

अक्षर नेटवर्क हिंदी चिट्ठाकारों का एक सामूहिक मंच है, जिस पर हिंदी चिट्ठाजगत से संबंधित विविध प्रकार के समाचार एवं सूचनाएं एकत्रित की जाती थी और व्यवस्थित रूप से रखी जाती थी। यह नेटवर्क 2007 में अपने बेहतरीन स्वरूप में काम करता था, लेकिन सर्वर डाउन होने की समस्या तथा होस्टिंग एक्सपायर हो जाने के कारण इसकी साईट डाउन हो गई, परंतु शुरुआती दौर में हिंदी चिट्ठाकारों के लिए इसने महत्वपूर्ण कार्य किया। इंटरनेट के सहयोग से हिंदी चिट्ठाकारों के प्रचार-प्रसार में इसका बड़ा योगदान रहा है।

तरकश.कॉम

इसके संस्थापक 'संजय वेंगड़ी' है। इन्होंने इसे 2005 में शुरू किया था। तरकश हिंदी चिट्ठाकारों का प्रगतिशील सामूहिक ब्लॉग है। तरकश पर तरकश समूह के लेखकों तथा अन्य अतिथि लेखकों के पोस्ट प्रकाशित किए जाते हैं। इसमें साहित्य, समाज, सिनेमा, मनोरंजन, स्वास्थ्य, तकनीकी, जीवन शैली, हास्य-व्यंग्य आदि विषयों पर आधारित कई ब्लॉग हैं। तर्कश का संचालन अहमदाबाद से होता है। आज यह एक लोकप्रिय ब्लॉग समूह के रूप में जाना जाता है।

चिट्ठाजगत.इन

इसकी शुरुआत 2007 में ब्लॉगर 'आलोक कुमार' एवं 'डॉक्टर विपुल जैन' द्वारा की गई थी। यह लोकप्रिय चिट्ठों की एकत्रीकरण सेवा है, जो विभिन्न हिंदी चिट्ठों में प्रकाशित होने वाली पोस्टों को एक जगह पर दिखाने का कार्य करता है। इस ब्लॉग में पाठक पंजीकृत ब्लॉग में लिखे गए ताजा पोस्टों (चिट्ठों) की जानकारी प्राप्त कर सकता है। यह एक लोकप्रिय हिंदी ब्लॉग एकत्रीकरण सेवा है, जिसकी सहायता से हम विविध चिट्ठों को तथा ताजा चिट्ठों को एक ही जगह पर देख सकते हैं।

ब्लॉगसेतु

हिंदी ब्लॉगिंग की दुनिया में एक नया ब्लॉग संकलन है। इसमें अनेक ब्लॉगों को सेतु के माध्यम से एकत्रित करके एक ही जगह दिखाया जाता है। इस प्रकार ब्लॉगसेतु अनेक ब्लॉगों के लिए सेतु का काम करता है , तथा उन्हें एक मंच प्रदान करता है।'ब्लॉगसेतु' ब्लॉग एग्रीगेटर का पहला संस्करण है , इसकी आधिकारिक शुरुआत ब्लॉगर केवल राम के अनुसार- "1 मई 2014 से हुई है।"[63]

ब्लॉग सेतु से पाठक को यह लाभ होता है कि वह किसी भी श्रेणी के ब्लॉग या किसी खास उद्देश्य के लिए भी ब्लॉग का चयन आसानी से कर सकता है। ब्लॉग सेतु पर किसी ब्लॉग की पोस्ट पर दी गई टिप्पणियों को भी आसानी से पढ़ा जा सकता है, तथा किसी पोस्ट को कितने पाठकों ने देखा है इसकी भी जानकारी ब्लॉग सेतु से हम प्राप्त कर सकते हैं।

वर्तमान समय में यानी 06/11/2019 को 19:40 तक ब्लॉग सेतु पर 787 ब्लॉगर और 824 ब्लॉग पंजीकृत किए गए हैं। इन ब्लॉगों की कुल सीटों की संख्या 230592 है। इसे जानने के लिए अर्थात ब्लॉग रैंकिंग जानने के लिए आंकड़ों का एक खास पृष्ठ तैयार किया गया है। इस पेज पर किसी खास ब्लॉग की समस्त रैंकिंग से लेकर उस खास ब्लॉग की सारी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सकती है। ब्लॉग सेतु में एक विशेष कैलेंडर लगाया गया है, जिससे हम किसी खास दिन की सभी पोस्टों को एक ही स्थान पर दिन, महीने और साल के हिसाब से देख सकते हैं।

[63] https://loksanghars.wordpress.com,date-06/01/2019,time-07:28

हमारी वाणी

हमारी वाणी ने एक नए युग की ब्लॉगर कम्युनिटी बनाई है, जहाँ हम आसानी से ब्लॉग लिख सकते हैं। अपनी ब्लॉग पोस्ट को शेयर कर सकते हैं, तथा विषय से संबंधित चर्चा-परिचर्चा भी कर सकते हैं, साथ ही साथ नए युग की आवश्यकता के अनुसार सोशल मीडिया से जुड़ी अनेक सुविधाओं का प्रयोग आसानी से कर सकते हैं। इस ब्लॉग समूह ने 'फिडजी' Feedji नामक एक नये ब्लॉग एग्रीगेटर की शुरुआत भी की है। यह सेवा 2015 से शुरू कर दी गई है, जिससे ब्लॉगर सोशल मीडिया से संबंधित अनेक सुविधाओं का प्रयोग सरलतापूर्वक कर सकते हैं।

ब्लॉग प्रहरी

ब्लॉग प्रहरी की स्थापना 2 अक्टूबर 2009 में की गई थी। इसके संस्थापक 'कनिष्क कश्यप' हैं। ब्लॉग प्रहरी एक सुप्रसिद्ध ब्लॉग एग्रीगेटर हैं। इसका सदस्य बनने के लिए पहले आपको (ब्लॉगर) पंजीकृत होना पड़ता है, फिर आप अपनी ब्लॉग पोस्टों को इस ग्रुप में पोस्ट कर सकते हैं। यह ब्लॉग समूह हिंदी से जुड़े ब्लॉगर के लिए एक उपयोगी मंच है, जहाँ आप आसानी से लेख को पोस्ट कर सकते हैं।

वर्तमान समय में अनेक सामुदायिक ब्लॉग हैं, जो लोगों की बातों को जनमानस के समक्ष रखने के माध्यम के रूप में कार्य कर रहे हैं। इस तरह के सामुदायिक ब्लॉगों पर जीवन के विविध रंगों की झांकी देखने को मिलती है। इसके अलावा भी इंटरनेट पर अनेक चर्चित ब्लॉग समूह मिलते है, जो अनेक ब्लॉगरों को ब्लॉग पोस्ट करने की सुविधा प्रदान करते हैं।

सामूहिक ब्लॉगों के अलावा इंटरनेट पर अनेकों ऐसी वेबसाइट है, जो हिंदी साहित्य के लिए एक मंच मुहैया कराती हैं, जैसे कविता कोश, गद्यकोश आदि इन्हें हम निश्चित तौर पर ब्लॉग के अंतर्गत रख सकते हैं। इन वेबसाइटों पर अनेकों नए व पुराने रचनाकारों की

रचनाओं को सहजता से बिना किसी ताम-झाम के पढ़ा जा सकता है। जैसे कविता कोश की बात करें तो इसमें से अनेक कविताओं को पढ़ा जा सकता है। इसके संस्थापक ललित कुमार हैं। इनका यह कार्य इंटरनेट की दुनिया में बड़ा ही सराहनीय कदम रहा है, जिससे पाठकों को कहीं पुस्तक खोजने की जरूरत नहीं है, बस एक स्मार्टफोन आपके पास हो, जिसमें इंटरनेट की सुविधा हो और सारी कविता आपके फोन में। जब चाहे जहाँ चाहे इसे ले जा सकते हैं, पढ़ सकते हैं।

इसी तरह से इंटरनेट पर हिंदी समयडाटकॉम, हिंदीकुंज, हिंदी साहित्य, वटवृक्ष, रचनाकारडाटकॉम, अभिव्यक्तिडाटकॉम आदि अनेकों ऐसे समूह है जो हिंदी के प्रचार-प्रसार में हिंदीकोश की तर्ज पर सराहनीय कार्य कर रहे हैं। Google, Yahoo, Msn, Bing, India times आदि सर्चइंजनों पर अनेकों ऐसे हिंदी समूह पाए जाते हैं, जिससे जुड़कर हिंदी साहित्य की चर्चा-परिचर्चा में भाग ले सकते हैं। जैसे हिंदी समूह, हिंदी फोरम, हिंदी कविता संग्रह, चिट्ठाकार, गाथा ऐसे अनेकों उदाहरण है जहाँ रचनाकार अपनी रचना को एक मंच दे सकता है। एक नई दिशा प्रदान कर सकता है।

हिंदी समूह

यह समूह मुख्य रूप से हिंदी को दूसरी भाषा के रूप में सीखने वालों के ज्ञान को समृद्ध व परिष्कृत करने के लिहाज से बनाया गया है। इसकी शुरुआत अप्रैल 1999 में की गई थी। इसमें यूनिकोड और रोमन लिपि के साथ-साथ हिंदी में भी पोस्ट किया जा सकता है। इससे जुड़ने के लिए ब्लॉगर को एक सदस्य के रूप में पंजीकृत होना पड़ता है। इस संदर्भ में ब्लॉगर रविशंकर श्रीवास्तव लिखते हैं - "अप्रैल 1999 से चल रहे इस समूह के 702 मौजूदा सदस्य हैं। इस समूह में भी यूनिकोड या रोमन लिपि में हिंदी में संदेश पोस्ट किए जा सकते हैं। यह

समूह भी काफी सक्रिय है तथा इसको सितंबर, अक्टूबर और नवंबर 04 में क्रमशः 231, तथा 76 संदेश प्राप्त हुए।"[64]

हिंदी फोरम

इसकी शुरुआत 4 मार्च 2001 से 'याहू' पर की गई थी। इस फोरम में हिंदी उर्दू अर्थात हिंदुस्तानी भाषा में साहित्य चर्चा करने वालों तथा विचार-विमर्श व ज्ञान-विज्ञान का आदान-प्रदान करने वालों के लिए बनाया गया था। इस फोरम में स्वतंत्र अभिव्यक्ति होती थी। इस पर चर्चा-परिचर्चा को किसी लीक में बाँधा नहीं गया था। कभी भी कहीं से भी चर्चा की शुरुआत होती थी, बस शर्त यह थी कि यह चर्चा हिंदी से सम्बंधित होनी चाहिए। इस संदर्भ में ब्लॉगर रविशंकर श्रीवास्तव लिखते हैं,- "यह समूह मार्च 04 से क्रियाशील है और वर्तमान में इसके 291 सदस्य हैं। इस समूह की सक्रियता साधारण है। अक्टूबर तथा नवंबर 04 में क्रमशः 140 तथा 100 संदेश इस समूह को प्राप्त हुए। संदेश रोमन लिपि या यूनिकोड में प्रेषित किए जा सकते हैं।"[65]

हिंदी कविता संग्रह

यह हिंदी समूह 8 मार्च 1999 में 'याहू' वेब पर शुरू किया गया था। अब तक इसके सदस्यों की संख्या लगभग 174 तक पहुँच गई है। यह समग्र हिंदी कविताओं के लिए बनाया गया है, जहाँ आप समूह के सदस्यों के बीच अपनी कविताओं को आसानी से पहुँचा सकते हैं तथा अपनी कविताओं पर विचार-विमर्श भी कर सकते हैं। इस संदर्भ में ब्लॉगर रविशंकर

---

[64] http://www.abhivyakti-hindi.org,date-06/01/2019,time-23:01

[65] http://www.abhivyakti-hindi.org,date-06/01/2019,time-23:14

श्रीवास्तव लिखते हैं कि,- "इस समूह में 62 सदस्य हैं, परंतु इस समूह की सक्रियता नगण्य प्रतीत होती है। संदेशों को यूनिकोड तथा रोमन लिपि में भेजा जा सकता है।"[66]

चिट्ठाकार

'चिट्ठाकार' गूगल का एक हिंदी समूह है। यह समूह हिंदी भाषा में ब्लॉग लिखने वालों के लिए बनाया गया था। इस समूह में हिंदी ब्लॉगर या हिंदी में रुचि रखने वाले आसानी से जुड़ सकते हैं। इस समूह में रोमन लिपि या यूनिकोड फार्म में अपने लेख को पोस्ट किया जा सकता है। इस संदर्भ में ब्लॉगर रविशंकर श्रीवास्तव लिखते हैं,- "वैसे प्रायः इसके सभी सदस्य यूनिकोड हिंदी में संदेश प्रेषित करते हैं। यह समूह अति-सक्रिय तो नहीं है, परंतु ब्लॉग जगत के लोगों के लिए यह समूह अनिवार्य सा है।"[67]

गाथा

यह इंडियाटाइम्स का सक्रिय हिंदी समूह है। यह समूह सितंबर 2001 में प्रारंभ हुआ है। इसमें नए लेखकों व कवियों को अपनी रचनाओं को पोस्ट करने तथा विचार-विमर्श करने का मौका मिलता है। इस संदर्भ में ब्लॉगर रविशंकर श्रीवास्तव लिखते हैं,- "यह इंडियाटाइम्स का एक सक्रिय हिंदी समूह है, जिसके वर्तमान में 48 सदस्य हैं। सितंबर 2001 से प्रारंभ इस क्लब की सक्रियता मिली-जुली है। यह समूह नवोदित लेखकों, कवियों, के लिए खास तौर पर बनाया गया है, जहाँ वे अपनी रचनाओं को पोस्ट कर उस पर बहसें कर सकते हैं।"[68]

---

[66] http://www.abhivyakti-hindi.org,date-06/01/2019,time-23:24

[67] http://www.abhivyakti-hindi.org,date-06/01/2019,time-23:32

[68] http://www.abhivyakti-hindi.org,date-06/01/2019,time-23:38

हिंदी

यह गूगल का एक हिंदी समूह है। यह हिंदी समूह 'याहू' की लोकप्रियता को देखकर बनाया गया। यह हिंदी भाषा में ब्लॉग लेखन करने वालों के लिए बनाया गया है, ताकि अपने ब्लॉग को आसानी से आम जनमानस तक पहुँचाया जा सके तथा हिंदी में रुचि रखने वाले पाठक भी जुड़ सकें। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर रविशंकर श्रीवास्तव लिखते हैं, -"याहू समूह की लोकप्रियता को देखकर गूगल ने भी अपने पोर्टल में समूहों का बीटा संस्करण प्रारंभ किया है, जो वर्तमान में शैशवावस्था में है। परंतु कालांतर में गूगल समूह सदस्यों को मिलने वाली सुविधाओं के मामले में श्रेष्ठ होंगे।"[69]

अतः इंटरनेट पर ऐसे अनेक समूह मिलेंगे जहाँ भांति-भांति के लोग भांति-भांति के समूहों का सृजन अलग-अलग जालघरों जैसे गूगल, याहू, एमएसएन, विंग, इंडियाटाइम्स पर किए हैं। इससे जुड़कर हम बेझिझक अपनी बातों को जनमानस तक पहुँचा सकते हैं तथा इस तरह के समूह हम स्वयं वेबसाइट पर बना भी सकते हैं। ऐसे समूहों की सेवाएं इंटरनेट पर नि:शुल्क हैं। किसी मौजूदा समूह से जुड़ना या कोई नया समूह बनाना बहुत आसान है। यहाँ हम इतिहास, टेक्नोलॉजी, साहित्य, राजनीति, धर्म, संस्कृति आदि विषयों पर सार्थक बहस कर सकते हैं, और अपने विचारों का आदान-प्रदान विश्व पटल पर मौलिक रूप में अभिव्यक्त कर सकते हैं।

व्यक्तिगत ब्लॉग

किसी एक व्यक्ति द्वारा बनाए गए ब्लॉग को व्यक्तिगत ब्लॉग की संज्ञा दी जाती हैं। इसमें ब्लॉगर ही लेखक, प्रकाशक और संपादक होता है। यहाँ ब्लॉगर द्वारा पोस्ट किए गए

[69] http://www.abhivyakti-hindi.org,date-06/01/2019,time-23:50

लेख को पाठक पढ़कर अपनी प्रतिक्रिया देता है। वर्तमान समय में हिंदी के प्रमुख ब्लॉगर और ब्लॉग निम्नलिखित हैं

- अनूप शुक्ला (http://hindini.com/fursatiya)

- रवि रतलामी (http://raviratlami.blogspot.com)

-अविनाश (http://mohalla.blogspot.com)

- जीतेन्द्र चौधरी (http://www.jitu.info)

- पंकज बेंगानी (http://www.tarkash.com)

- संजय बेंगानी (http://www.tarkash.com)

- शास्त्री जेसी फिलिप (http://www.sarthi.info)

- कमल शर्मा (http://wahmoney.blogspot.com)

- लावण्या शाह (http://lavanyam-antarman.blogspot.com)

- काकेश कुमार (http://kakesh.com)

- अविनाश वाचस्पति (http://avinashvachaspati.blogspot.com)

- मुरली मनोहर श्रीवास्तव (http://murlimanoharsrivastava.blogspot.com)

- रूपेश कुमार तिवारी (roopkt@gmail.com)

- दुर्गाप्रसाद अग्रवाल (http://www.indradhanushindia.org)

- संजीत त्रिपाठी (http://sanjeettripathi.blogspot.com/)

- अनिल रघुराज (http://diaryofanindian.blogspot.com/)

- अप्रवासी अरुण (http://www.hamaraa.com)

- हरिहर झा (http://hariharjhahindi.wordpress.com)

- विनीत कुमार (http://taanabaana.blogspot.com)

- हरिराम (http://www.hariramaa.blogspot.com)

- सागर चंद नाहर (www.mahaphil.blogspot.com)

सामूहिक ब्लॉग

सामूहिक ब्लॉग में कई लोग मिलकर लेखन का कार्य करते है। इसमें एकही ब्लॉग पर एडमिन की सहमति से कोई भी पोस्ट डाल सकता है, जिस कारण हमें यह सुविधा होगी कि एक ही ब्लॉग में हमें विविध विषयों की सामग्री सहजता से मिल जाएगी। इस सन्दर्भ में अविनाश वाचस्पति लिखते है,- "ब्लॉगरों को सामूहिक ब्लॉग से जुड़कर अनुभव लेना चाहिए।"[70] अतः सामोहिक ब्लॉग में विविध विषयों की पोस्ट होने से हमें बहुत कुछ सीखने को भी मिलता है और साथ ही साथ नये विषयों की जानकारी भी प्राप्त होती है। जिसका लाभ लेकर हम अपने लेखन में और धार दे सकते हैं। इस तरह के ब्लॉगों में नारी, चोखेरबाली, भड़ास और मोहल्ला ब्लॉग का महत्वपूर्ण स्थान है।

[70] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-316

तृतीय अध्याय

हिन्दी का समकालीन ब्लॉग लेखन : एक परिचय

3.3 हिन्दी का समकालीन ब्लॉग लेखन ; एक परिचय

3.3.1 व्यक्तिगत ब्लॉग

3.3.1.1 'नौ दो ग्यारह'

3.3.1.2 एकोअहम्

3.3.1.3 समाजवादी जन परिषद

3.3.1.4 ताऊ डॉट इन

3.3.1.5 लोकरंग ब्लॉग

3.3.1.6 शब्दों का सफर

3.3.1.7 खेत खलिहान ब्लॉग

3.3.1.8 दालान ब्लॉग

3.3.1.9 साईं ब्लॉग

3.3.1.10 चक्रधर का चकल्लस

3.3.1.11 मनोज वाजपेयी

3.3.2 सामूहिक ब्लॉग

3.3.2.1 कबाड़खाना

3.3.2.2 नारी ब्लॉग

3.3.2.3 चोखेरबाली,

3.3.2.4 भड़ास

3.3 हिंदी का समकालीन ब्लॉग लेखन ; एक परिचय

हिंदी ब्लॉगिंग ने जीवन के हर एक पक्ष पर अपनी सार्थक उपस्थिति दर्ज कराई है। चाहे वह विमर्श का क्षेत्र, हो या सूचना का क्षेत्र हो हिंदी ब्लॉग के माध्यम से एक तरफ विमर्श को आवाज मिली है तो दूसरी तरफ इसने सूचना और तकनीकी ज्ञान से हमें अवगत कराया है। ब्लॉगिंग में गंभीर विषयों पर अपनी बात को पूरी ईमानदारी के साथ सरल व सहज भाषा में रखा जाता जिससे हम आम पाठक से लेकर खास पाठक तक अपनी बात को सरलता और सहजता के साथ पहुँचा सकते हैं। इतना ही नहीं जो मुद्दे किसी कारणवश मुख्यधारा की मीडिया (प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया) से छूट जाते हैं उन मुद्दों को भी ब्लॉग में बड़ी ही सहजता के साथ उठाया जाता है और उन पर विचार विमर्श किया जाता है।

ब्लॉग की सबसे बड़ी ताकत यह है कि ब्लॉग में पाठकों की प्रतिक्रिया त्वरित गति से मिलती रहती है फलस्वरुप हम पाठक की विषय के प्रति रुचि का अंदाजा आसानी से लगा सकते हैं। आजकल 'जियो फोन' और 'जियो इंटरनेट' जैसे संसाधनों की सुलभता की वजह से एक तरह से सूचना क्रांति का नया दौर शुरू हुआ है जिसकी वजह से बड़े ही सहज रूप में आम आदमी से लेकर विशेष आदमी के पास इंटरनेट और स्मार्टफोन की सुविधा उपलब्ध हो गई है।

परिणाम यह हुआ है कि लगभग सभी के हाथ में एक स्मार्टफोन आसानी से मिल ही जाता है और जिसके हाथ में स्मार्टफोन है उसके हाथ में ब्लॉगिंग का संपूर्ण साहित्य मौजूद है बस एक क्लिक की दूरी तय करनी है। इस एक क्लिक की दूरी तय करके हम अपने देश और विदेश में चल रही सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों

की जानकारी नियमित रूप से प्राप्त कर सकते हैं और अपनी राय, टिप्पणी (ब्लॉग पोस्ट के माध्यम से) दे सकते हैं।

यह कार्य ब्लॉगिंग जैसी ताकतवर विधा के माध्यम से ही सम्भव हो पाया है। इस माध्यम की वजह से बड़े सहज रूप में हम अपनी बात एक दूसरे तक पहुँचा सकते हैं हालांकि अपनी बात दूसरों तक पहुँचाने के लिए हमारे पास कई तरह के माध्यम मौजूद हैं जैसे पत्र-पत्रिकाएं, आर्टिकल, पुस्तकें आदि। लेकिन इन सब माध्यमों की तुलना में ब्लॉगिंग सबसे ताकतवर विधा है।

यह ऐसी विधा है जहाँ न कोई दूरी का झंझट है ना ही छपने-छपाने की चिंता। ब्लॉगिंग सबसे सहज-सरल व सशक्त माध्यम है। क्योंकि ब्लॉग आपका अपना खुद का मंच है जहाँ आप आसानी से अपनी बात खुलकर कह सकते हैं। इतना ही नहीं इस माध्यम के द्वारा आप देश-विदेश के लोगों से जुड़ भी सकते हैं तथा नए नए लोगों से अपना परिचय बना सकते हैं। यह सब ब्लॉग के माध्यम से ही सहज हो सकता है।

साथ ही ब्लॉगिंग के माध्यम से कुछ सार्थक करने की जो खुशी होती है उसे भी आप महसूस कर सकते हैं, उसका आनंद उठा सकते हैं। हिंदी ब्लॉगिंग में तत्कालीन साहित्यिक विषयों के साथ-साथ लगभग सभी विधाओं में लेखन कार्य तेजी से हो रहा है। इसमें कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रा वृतांत आदि प्रमुख रूप से सम्मिलित हैं।

3.3.1 व्यक्तिगत ब्लॉग

किसी एक व्यक्ति द्वारा बनाए गए ब्लॉग को व्यक्तिगत ब्लॉग की संज्ञा दी जाती हैं। इसमें ब्लॉगर ही लेखक, प्रकाशक और संपादक होता है। यहा ब्लॉगर द्वारा पोस्ट किए गए लेख को पाठक पढ़कर अपनी प्रतिक्रिया देता है।

3.3.1.1 'नौ दो ग्यारह'

यह आलोक कुमार का ब्लॉग है। इसे हिंदी का पहला ब्लॉग माना जाता है। यह ब्लॉग 21 अप्रैल 2003 को प्रकाश में आया। यह दिन हिंदी चिट्ठाकारी के लिए ऐतिहासिक माना जाता है, क्योंकि लगभग एक दर्जन से अधिक वेबसाइट्स ने इस बात की पुष्टि की है कि 'नौ दो ग्यारह' हिंदी का पहला ब्लॉग है।

इस संदर्भ में ब्लॉगर राकेश कुमार सिंह लिखते हैं,- "21 अप्रैल 2003 हिंदी चिट्ठाकारी के लिए ऐतिहासिक दिन था। लगभग 1 दर्जन से अधिक सक्रिय ब्लॉग और वेबसाइट्स इस बात की पुष्टि करते हैं। आलोक कुमार के नौ दो ग्यारह को हिंदी के सबसे पहले चिट्ठे का दर्जा दिया जाता है।"[71]

21 अप्रैल, 2003 दिन सोमवार को 22:21को अपने पहले ब्लॉग पोस्ट में वे लिखते हैं, - "चलिये अब ब्लॉग बना लिया है तो कुछ लिखा भी जाए इसमें। वैसे ब्लॉग की हिन्दी क्या होगी? पता नहीं। पर जब तक पता नहीं है तब तक ब्लॉग ही रखते हैं , पैदा होने के कुछ समय बाद ही नामकरण होता है न। पिछले ३ दिनों से इंस्क्रिप्ट में लिख रहा हूँ , अच्छी खासी हालत हो गई है उँगलियों की और उससे भी ज़्यादा दिमाग की। अपने बच्चों को तो पैदा होते ही इंस्क्रिप्ट पर लगा दूँगा, वैसे पता नहीं उस समय किस चीज़ का चलन होगा।"[72]

आलोक कुमार की इस पोस्ट से यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि इनके सामने ब्लॉग के नामकरण और फॉण्ट की समस्या बनी हुई थी। आज लगभग 17 सालों बाद देखें तो इन दोनों परेशानियों का हल ढूंढ लिया गया है। इतना ही नहीं आज 'ब्लॉग' भारत की

---

[71]हिंदी आधुनिकता एक पुनर्विचार खंड-3, संपादक ; अभय कुमार दुबे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2014, पृष्ठ संख्या - 811

[72] http://9211.blogspot.com/2003/04/ date- 04/07/2019,time-07:36

लगभग सभी भाषाओं में अपना दमखम अजमा रहा है। यह अंग्रेजी को भी पछाड़ने की कोशिश में लगा हुआ है। यह सम्भव भी है, क्योंकि देशभर में बोली जाने वाली भाषाओं में हिंदी पहले और दूसरे स्थान का दावा करती रहती है। ऐसी स्थिति में हिंदी ब्लॉगिंग का भविष्य उज्ज्वल है। दूसरा सबसे बड़ा कारण इंटरनेट क्रांति को माना जाता है। जिसकी वजह से आज लगभग सभी के हाथ में स्मार्टफोन मौजूद है और जिसके हाथ में स्मार्टफ़ोन है उसके हाथ में ब्लॉगिंग का सारा साहित्य मवजूद है।

अतः वर्तमान समय हिंदी ब्लॉगिंग के लिए यह स्वर्णिम युग है क्योंकि आज जिस तरह से पूरे देश में हिंदी का बोलबाला बढ़ता जा रहा है। चाहे वह अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप का चुनाव प्रचार का अभियान हो या विज्ञापन की भाषा हो या समाचार पत्रों की भाषा हो सबमें हिंदी का वर्चस्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। आज इकोफ्रेंडली इनवायरमेंट में ब्लॉगिंग के भविष्य की बात करें तो निश्चित रूप से वह दिन दूर नहीं जब हिंदी के कबीर और तुलसी ब्लॉगिंग के माध्यम से निकलेगें बस इसे थोड़ी परवरिश की दरकार है।

3.3.1.2 एकोअहम्

यह ब्लॉग विष्णु बैरागी द्वारा संचालित है। ब्लॉगिंग की दुनिया में यह एक महत्वपूर्ण प्रयास है। इस ब्लॉग में ब्लॉगर अपने परिचय में लिखता है- 'मेरे अवगुण चित ना धरो' अर्थात ब्लॉगर समाज में व्याप्त अवगुणों को बखूबी अभिव्यक्त करने की क्षमता रखता है। उदाहरण के तौर पर देखें तो एक ब्लॉग पोस्ट है जिसका नाम है 'एक संत की वसीयत' इस पोस्ट में ब्लॉगर ने श्री राम सुखदास जी महाराज की मृत्यु के उपरांत अनेक वसीयतनामा से उपजे विवाद को रेखांकित किया है। उन्होंने (विष्णु बैरागी ने) इस ब्लॉग के माध्यम से आत्मकथात्मक शैली में श्री रामसुखदास जी महाराज की शिक्षा और उपदेश को आधार बनाकर साधु-संत समाज में व्याप्त वितंडावाद एवं व्यवस्था के प्रश्न को उठाया है।

एक जगह वे लिखते हैं,- "अन्तिम संस्कार के समय इस शरीर की दैनिकोपयोगी सामग्री (कपड़े, खड़ाऊँ, जूते आदि)-को भी इस शरीर के साथ ही जला देना चाहिए तथा अवशिष्ट सामग्री (पुस्तकें, कमण्डल आदि)-को पूजा में अथवा स्मृति के रूप में बिलकुल नहीं रखना चाहिए, प्रत्युत् उनका भी सामान्यतया उपयोग करते रहना चाहिए।"[73]

कहने का तात्पर्य है कि संत समाज को उनकी वस्तुओं को नहीं अपितु उनके विचारों को संजोने की आवश्यकता है जिससे पालन करने वाले योग्य उत्तराधिकारी को पहचाना जा सके। इसी प्रकार 'प्रभु की पटकनी', 'युगबोध का पागल आदमी', भारतीय कर्मचारियों का गीता-सूत्र आदि के माध्यम से ब्लॉगर ने कथनी और करनी के पार्थक्य और उससे उपजी विरोधाभास की स्थिति को दिखाने का प्रयास किया है। समाज से जुड़ने की आकांक्षा विष्णु बैरागी के तमाम प्रयासों में व्यक्त हुई है। 'आवारा मसीहा', 'संस्कृति के चार अध्याय', 'कामायनी', 'अनामदास का पोथा' और सबसे महत्वपूर्ण 'राग दरबारी' जैसी पुस्तकों के प्रति झुकाव ने ब्लॉगर की विचार- श्रृंखला को गढ़ने का प्रयास किया है। इस प्रकार 2007 से लेकर अब तक विष्णु बैरागी का लेखन जारी है।

3.3.1.3 समाजवादी जन परिषद

समकालीन हिंदी ब्लॉग लेखन में एक महत्वपूर्ण ब्लॉग है। यह ब्लॉग गंभीर मुद्दों पर बहस करता हुआ दिखाई देता है। इसके ब्लॉगर हैं बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के अध्यापक अफलातून। इस ब्लॉग में सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, विषयों पर कई सारगर्भित आलेख लिखे गए हैं। इस ब्लॉग में आदिवासी और दलित समाज के कई महत्वपूर्ण सवालों को उठाया गया है जिनमें आदिवासियों का शोषण और उनके जंगल-जमीन से बेदखल किए जाने जैसे गंभीर मुद्दे शामिल हैं। अफलातून कहते हैं कि आदिवासी के हितों

[73] http://akoham.blogspot.com/2008/07/blog-post_18.html date-04/07/2019,time-07:26

में कानूनी बदलाव की जरूरत है जिससे प्रदेश को भेदभाव एवं छुआछूत से मुक्त कराया जा सके। वे साम्प्रदायिक हालातों पर चिंता जताते हुए लिखते हैं कि समाज में प्रशासनिक और कानूनी सुधार किया जाना चाहिए।

उनका मानना है कि दंगे के समय तमाशबीन बने रहने वाले अधिकारियों व कर्मचारियों के ऊपर कड़ी से कड़ी कार्यवाही की जानी चाहिए। हमारे शासन-प्रशासन को किसी भी तरह के सांप्रदायिक भेदभाव से मुक्त होकर कार्य करना। यदि कोई इसमें लिप्त पाया जाता है तो उस अधिकारी के खिलाफ कड़ाई से निपटना चाहिए।

वे आगे लिखते हैं कि हमारी शिक्षा व्यवस्था में बदलाव किया जाना चाहिए। हमें शिक्षा के सदुपयोग के माध्यम से धर्म, जाति, संप्रदाय, भाषा, क्षेत्र की बेड़ियों को तोड़कर जीवन के उदार पक्ष की तरफ बढ़ना चाहिए जिससे दूसरों के प्रति आस्था-विश्वास और भाईचारे का भाव बना रहे। इसके अलावा इस ब्लॉग में स्त्री शिक्षा ,राष्ट्रवाद,पर्यावरण अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय गतिविधि का विश्लेषण किया गया है।

इसी तरह 'भारत और उपभोक्तावादी संस्कृति' नामक एक पोस्ट में अफलातून बताते हैं कि हमारा देश उपभोक्ता संस्कृति का बाज़ार बनता जा रहा है जिस कारण विकास की संभावनाएं कुंठित होती जा रही हैं। इससे निपटने के लिए उपभोक्ता संस्कृति को समझना होगा और अपनी जरूरत की चीजों का ध्यान रखना होगा और अधिक से अधिक आत्मनिर्भर होकर आत्मविश्वास के साथ आधारभूत जरूरी चीजों का विकास करना होगा।

हमें भौतिकवादी चीजों पर उतना ही निर्भर होना चाहिए जितने से हमारा काम चल सके। हमें यह पता करना होगा की हमारे लिए जरूरी क्या है और गैरजरूरी क्या है? इन सब चीजों का ध्यान देकर ही हम इस बाजारवाद के प्रभाव को कम कर पाएंगे अन्यथा हम बाजारवाद के हाथों की कठपुतली बनकर रह जाएंगे और बाजार ही यह निश्चित करेगा कि

हमारी जरूरतें क्या हैं? इतना ही नहीं बाजारवाद हमें यह बताएगा कि यह वस्तु हमारे लिए अधिक जरूरी है अथवा नहीं। इसलिए हमें अपने विवेक को विकसित करना होगा।

3.3.1.4 ताऊ डॉट इन

यह ब्लॉग 'पीसी रामपुरिया' का है। इसमें हास्य-व्यंग्य की अनोखी धारा प्रवाहित करने वाली बातें लिखी गई हैं। इस ब्लॉग की अपनी एक अलग पहचान है। इसमें हरियाणवी शैली में कई पोस्ट प्रस्तुत की गई है। जिसके कारण इसकी लोकप्रियता में खूब वृद्धि हुई है। इसकी एक पोस्ट को देखें 'मोदी जी के नाम ताऊ का खुला ख़त' इस पोस्ट में ब्लॉगर पीसी रामपुरिया लिखते हैं,- "सरकार चाहती है कि व्यापारी महीने में तीन बार अपना हिसाब और स्टॉक फिगर दें। यह कैसी विडंबना है बताइए? अब बताइए आपका क्या कहना है?"[74]

ब्लॉगर इसमें यह सुझाव दे रहें हैं कि व्यापारी अपने काम धंधे में मन लगाए या सारा समय आपका हिसाब-किताब ही करता रहे। सरकार को चाहिए कि वह हर व्यापारी के यहाँ अपना एक कर्मचारी लगा दे जो दिनभर का हिसाब करता रखें और रोज शाम को टैक्स का पैसा लेकर चला जाए। इस तरह हम देखते हैं कि इस ब्लॉग में सर्वाधिक चर्चाएं ज्वलंत मुद्दों को केंद्र में रखकर की गयी है।

यह ब्लॉग सर्वाधिक चर्चित ब्लॉगों में से एक है। इस सन्दर्भ में इसकी एक पोस्ट 'ब्लॉगिंग दिवस पर कुछ अपने मन की देखें' इसमें ब्लॉगर लिखते हैं,- "जैसे साल में एक बार श्राद्ध पक्ष आता है वैसे ही अब तो ब्लॉगिंग में एक ब्लागिंग पक्ष आने लग गया है। श्राद्ध पक्ष की याद तो कुछ उमस भरे मौसम की बैचेनी, पितरों के कुपित होने का डर और खीर खाने की ललक की वजह से आ ही जाती है पर ब्लॉगिंग में ना तो मौसम का मिजाज, ना ही किसी के कुपित होने का डर और ना ही खीर (टिप्पणियां) खाने की ललक दिखाई देती है। ईमानदारी

[74] http://taau.taau.in/2017/07/blog-post_18.html ,date- 04/07/2019,time-07:30

की बात यह है कि कल अंशुमाला जी की फ़ेसबुक पोस्ट से याद आई कि आज ब्लॉगिंग का सालाना श्राद्ध दिवस है तो रात भर याद आती रही और डर भी लगा कि भूलने की सजा ब्लॉगिंग अवश्य देगा।"[75]

इसी प्रकार दूसरी पोस्ट 'चीन ठहरा पक्का बणियां, ऊ धमकी से आगे कदी नी जायेगो', 'कोरोना वायरस और दुनिया की अर्थ व्यवस्था', 'ब्लागिंग को जिंदा करने के लिये 'रायता फ़ैलाऊ समिति', 'ताऊ मशरूम ने मेरी जिंदगी संवार दी', 'मिस समीरा टेढी नार्थ कोरिया', 'अमेरिका सुलह वार्ता में पंच ताऊ','फेसबुकियों और ब्लागरों पर GST लगाने की सिफारिश','बोलणैं त पहले सोच भी लिया कर' जैसी अनेक पोस्ट है जिसका व्यंग्य बड़ा ही मारक जान पड़ता है।

3.3.1.5 लोकरंग ब्लॉग

ब्लॉग की दुनिया में 'लोकरंग' एक महत्वपूर्ण ब्लॉग है जिसके माध्यम से भारतीय संस्कृति की आत्मा की पहचान को संजोने का प्रयास किया गया है। इसका एक फायदा यह भी है कि वैश्विक स्तर पर हमारी सांस्कृतिक पहचान को बल मिला है। लोकरंग ने महान विरासत को संजोकर रखा है। यह एक छोटी सी दुनिया है जो हमें भारतीय संस्कृति का स्वच्छ चेहरा दिखाती है।

वर्ष 2008 में इस ब्लॉग के माध्यम से लोक संस्कृति को नियमित रूप से संकलित करने का कार्य किया जा रहा है। इस क्रम में हम देखें तो झारखंड और पश्चिम बंगाल के सीमा क्षेत्र से लगे हुए तमाम आदिवासी गाँव अथवा दुमका के मलूटी गाँव और उड़ीसा के आदिवासी क्षेत्रों, विशेषकर उत्तर भारत में प्रचलित स्थिति को दिखाया गया है।

[75] http://taau.taau.in/2018/07/blog-post.html , date- 04/07/2019,time-07:36

3.3.1.6 शब्दों का सफर

अजीत वाडेकर का ब्लॉग ‘शब्दों का सफर’ शब्दों की व्युत्पत्ति से लेकर उसके तमाम सोपानों पर दृष्टिपात करता है। ब्लॉगर ने लिखा है,- “शब्दों की व्युत्पत्ति को लेकर भाषा वैज्ञानिक का नजरिया अलग अलग होता है। मैं भाषाविज्ञानी नहीं हूँ लेकिन जब उत्पत्ति की तलाश में निकलें तो शब्दों का एक दिलचस्प सफर नजर आता है।”[76]

‘शब्दों का सफर’ की प्रस्तुति को देखकर यह पता चलता है कि ब्लॉगर ने शब्दों के माध्यम से बाह्य जगत को जीवंत करने का सफल प्रयास किया है। उनके इस उपक्रम से ब्लॉग अपनी शाब्दिक गरिमा और भाव प्रवणता को कायम रख सका है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि शब्दों के आभामंडल से संचालित इस ब्लॉग में सम्मोहन और आकर्षण है। इस ब्लॉग ने कई महत्वपूर्ण विषयों को उठाकर ब्लॉग की दुनिया में अपनी पहचान बनाई है।

3.3.1.7 खेत खलिहान ब्लॉग

यह शिवनारायण गौर का ब्लॉग है। भारत कृषि प्रधान देश होने के कारण इसकी दो-तिहाई आबादी गांव में निवास करती हैं। अतः लोक संस्कृति और ग्रामीण चेतना को समझे बगैर भारतीय संस्कृति को समझना संभव नहीं है। इस संदर्भ में ‘खेत खलिहान’ ब्लॉग में ब्लॉगर ने ग्रामीण संस्कृति को मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास किया है। इस ब्लॉग में खेती के प्रत्येक पहलू पर बारीकी से नजर रखी गई है एवं ग्रामीण चेतना और ग्रामीण समस्याओं को बखूबी उठाया गया है। ‘खेत खलियान’ के माध्यम से मध्यप्रदेश के गांव तक ही नहीं अपितु पंजाब के इलाकों में भी किसानों को होने वाली समस्याओं यथा अन्न उत्पादन, कीटनाशकों के दुष्प्रभाव, जल नियोजन आदि को ब्लॉगर ने प्रमुख स्थान दिया है।

---

[76] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-33

अपने एक पोस्ट में ब्लॉगर लिखते हैं,- “निर्यातकों के साथ घरेलू मांग बढ़ने से चालू सीजन में बासमती चावल और धान की कीमतों में तेजी आई है। इससे चालू खरीफ में बासमती धान की बुवाई बढ़ी है। बारिश शुरू होने के बाद पूसा 1121 बासमती चावल की बुवाई शुरू होती है तथा चालू सीजन में पूसा 1121 बासमती धान का भाव बढ़ कर ऊपर में 450 रुपए और पूसा 1121 बासमती चावल का दाम बढ़कर 8000 प्रति क्विंटल हो जाता है। खुरिया एग्रो के डायरेक्टर रामविलास खुराना ने बताया कि निर्यातकों के साथ ही घरेलू मांग अच्छी होने से चालू सीजन में बासमती धान और चावल की कीमतों में तेजी आई। ऐसे में पंजाब और हरियाणा में चालू खरीफ में किसानों द्वारा बासमती धान पूसा 1121 की बुवाई ज्यादा क्षेत्रफल में की जाएगी।”[77]

अतः यह कहा जा सकता है कि इस ब्लॉग में गेहूँ धान और किसान की बातें हैं। उसकी समस्याओं के समाधान की बातें हैं। हिंदुस्तान के किसान की बातें हैं।

3.3.1.8 दालान ब्लॉग

नोएडा निवासी 'रंजन ऋतुराज' सिंह का ब्लॉग 'दालान' चिट्ठी पत्री का संग्रह जान पड़ता है। इस ब्लॉग में ग्रामीण विषयों पर बात तो की गई है साथ ही साथ भारतीय संस्कृति को जीवंत रखने वाले विशेष पर्व जैसे होली, छठ पूजा को भी खास तरजीह दी गई है। यह चित्रण एकदम सजीव जान पड़ता है। इसे पढ़ते हुए ऐसा लगता है जैसे यह घटनाक्रम हमारी आंखों के सामने घटित हो रहा है। इसकी एक पोस्ट 'मेरा गांव मेरा देश मेरा छठ' को विशेष संदर्भ में देखा जा सकता है,- “हमारे यहाँ 'कोसी' बंधाता है-आंगन में! उस शाम जैसी शाम पुरे साल नहीं आती! बड़ी ही सुंदर 'कोसी'! चारों तरफ ईख और बीच में मिट्टी का हाथी उसके ऊपर दिया! ...वहाँ छठ मैया से आशीर्वाद माँगा जाता है।”[78] अतः इस पोस्ट को

[77] https://khet-khlihan.blogspot.com/ date - 04/07/2019,time-07:46

[78] http://daalaan.blogspot.com/2010/11/blog- date- 04/07/2019,time-07:56

पढ़कर ऐसा लगता है कि हम छठ से ही वापस आ रहे हैं। यह ब्लॉग गाँव की यादें ताजा करने, उन्हें जीवित रखने का बखूबी कार्य करता है।

3.3.1.1.9 साईं ब्लॉग

यह ब्लॉग डॉक्टर अरविंद मिश्र के निजी लेखों का संग्रह है। इस ब्लॉग में विश्व के प्राचीनतम शहर वाराणसी की झलक का प्रमाण मिलता है। 'साईं ब्लॉग' में डॉक्टर अरविंद मिश्र ने ग्रामीण परिवेश और नगरीय जीवन का मिलाजुला रूप प्रस्तुत किया है। इस ब्लॉग में ब्लॉगर अपनी पूरी शक्ति के साथ आस्था और विज्ञान के सवालों को खड़ा करता है।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर की एक पोस्ट 'रक्तिम चन्द्रग्रहण चौकड़ी का तीसरा चाँद' में हम आस्था और विज्ञान की चर्चा देख सकते हैं इस पोस्ट में ब्लॉगर लिखते हैं,-"जब सिलसिलेवार चार खग्रास चंद्रग्रहण यानि पूर्ण चंद्रग्रहण का अवसर आता है तो इसे चन्द्र चौकड़ी के नाम से जाना जाता है। पिछले वर्ष माह अप्रैल में पूर्ण चंद्रग्रहणों की चौकड़ी का आरम्भ हुआ था ,फिर सितम्बर माह और अब आज कड़ी का तीसरा चंद्रग्रहण दिखा जो इस सदी का सबसे अल्प अवधि का पूर्ण चन्द्र ग्रहण है। अगला पूर्ण चंद्रग्रहण आगामी सितम्बर माह में दिखेगा। इस बार बस पाँच मिनट की पूर्णता और कुछ ही समय में मोक्ष भी। हालांकि भारत में यह अरुणांचल प्रदेश में अच्छी तरह दिखा लेकिन भारत के शेष पूर्वी और कुछ पश्चिमी भागों में भी यह आंशिक ही दिख पाया। दरअसल चंद्रोदय के समय ही यह आंशिक ग्रहण लिए दिखा। ऑस्ट्रेलिया, अमेरिका के पश्चिमी प्रांतों में पूर्ण ग्रहण दिखा है। अमेरिका के पश्चिमी प्रांतों में यह तड़के सूर्योदय के पहले और ऑस्ट्रेलिया,न्यूजीलैंड और पूर्वी एशियाई

देशों में (भारत सहित) शाम को चंद्रोदय ही ग्रहण के साथ हुआ हालांकि यह आंशिक विमोचन की अवस्था का ग्रहण था।"[79]

इसी पोस्ट में आगे विज्ञान के सवालों के हिसाब से भी जवाब देते हैं। वे आगे लिखते हैं,- "जब पूर्ण चंद्रग्रहण होता है तो सूरज की रोशनी का रक्तिम अंश ही धरती के वातावरण जो चौतरफा 80 किमी की ऊंचाई लिए होता है से छन और परावर्तित होकर चन्द्रमा तक पहुचती है और इसलिए चाँद ताम्बई लालिमा लिए दीखता है। इसे ब्लड मून का नामकरण पादरियों ने दिया है जो इसे किसी बड़ी घटना की आशंका मानते हैं जबकि खगोलविद् इसे एक सामान्य खगोलीय घटना ही मानते हैं !"[80] अतः यहाँ पर हम देखते हैं कि वैज्ञानिक दृष्टि से सूर्यग्रहण को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। इस तरह यहाँ आस्था और विज्ञान के सवालों को विवेचित किया गया है।

3.3.1.10 चक्रधर का चकल्लस

यह ब्लॉग हिंदी के श्रेष्ठ व्यंग्य कवि अशोक चक्रधर का है। इस ब्लॉग के संदर्भ में ब्लॉगर लिखते हैं कि,- "इस चक्रधर के मस्तिष्क के ब्रह्म-लोक में एक हैं बौड़म जी। माफ करिए, बौड़म जी भी एक नहीं हैं अनेक रूप हैं उनके। सब मिलकर चकल्लस करते हैं। कभी जीवन जगत की समीक्षाई हो जाती है तो कभी कविताई हो जाती है। जीवंत चकल्लस, घर के बेलन से लेकर विश्व हिंदी सम्मेलन तक, किसी के जीवन-मरण से लेकर उसके संस्करण तक, कुछ न कुछ मिलेगा। कभी-कभी कुछ विदुषी नारियां अनाड़ी चक्रधर से सवाल करती हैं, उनके जवाब भी इस चकल्लस में मिल सकते हैं। यह चकल्लस आपको रस देगी, चाहे तो आप भी इसमें कूद पड़िए। लवस्कार! ।"[81] इसकी एक पोस्ट (आत्मघात से बुरी कोई चीज

---

[79] http://indianscifiarvind.blogspot.com/,19/08/2020,13:10

[80] http://indianscifiarvind.blogspot.com/,19/08/2020,13:20

[81] http://ashokchakradhar.blogspot.com/2006/10 date- 04/07/2019,time-08:23

नहीं) कि कुछ पंक्तियां देखी- चौरे चम्पू! पिछले दिनन में कौन सी खबर नै तेरौ ध्यान खैंचौ? चचा, ख़बरें तो हर दिन देश की, विदेश की, परियों की, परिवेश की और मुहब्बतों के क्लेश की सामने आती ही रहती हैं।

अन्ना हजारे अब जंतर पर मंतर चला कर यू .पी . के अनंतर हैं। कलमाड़ी गिरफ्तार हैं। सांईं बाबा के ऊपर चले जाने के बाद चालीस हज़ार करोड़ पर सबके पेट में मरोड़ हो रहा है। चुनाव हुए, घपले हुए। चारों तरफ़ ख़बरें ही ख़बरें हैं। 'याद रखो मौत मुस्कुराती नहीं' का कुछ अंश देखिए, उनका व्यंग्य बड़ा ही मर्मस्पर्शी है दिल को छू जाने वाला है । इनके व्यंग्य की एक खास शैली है जो सभी को आकर्षित करती हैं।

''किसी की उम्र कम

किसी की लंबी है,

और मौत महास्वावलंबी है।

अपना निर्णय स्वयं लेगी,

तुम्हारे चिंता करने से

न तो आएगी

न आने से रुकेगी।

चिंता करके

स्वयं को मत सताओ,

मौत जब भी फोटो खींचना चाहे

मुस्कुराओ।"[82]

3.3.1.11 मनोज वाजपेयी

मनोज वाजपेयी हिंदी के अत्यंत महत्वपूर्ण ब्लॉगर हैं। ब्लॉग की दुनिया में मनोज वाजपेयी का बड़ा नाम है यह प्रयोगधर्मी अभिनेता हैं। उनकी पहचान देश-विदेश में एक मझें हुए अभिनेता के रूप में है। इनके ब्लॉग लेखन में जीवन का कड़वा सच व्यक्त हुआ है। मनोज वाजपेयी अपने एक आलेख में दिलचस्प संस्मरण सुनाते हैं कि बिहार के रहने वाले एक अभिनेता के घर में पहली बार रेडियो आया इसे बाबूजी बीरगंज से पैनासोनिक कंपनी का लाए थे।

इसी प्रकार एक और पोस्ट 'गैंग्स आफ वासेपुर' में बताते हैं कि गैंग्स आफ वासेपुर फिल्म एक अच्छी फिल्म है। इसे दर्शकों को देखना चाहिए लेकिन पता नहीं क्यों इस फिल्म के बारे में बहुत कुछ लिखा जा रहा है जिससे गलतफहमियां भी फैल रही हैं। इस सन्दर्भ में मनोज वाजपेयी लिखते हैं,- "कुछ इस तरह की खबरें भी हैं कि जैसा जो हमारे साथ अभिनेता हैं और लेखन में भी जिनका योगदान रहा है, उन्हें धमकियां मिली हैं। मेरी जानकारी में यह खबर बेबुनियाद है। सब कुछ अच्छा है। फिल्म का बेसब्री से इंतजार हो रहा है। मैं चाहूँगा कि आप सभी इस फिल्म को देखें और फिल्म की प्रक्रिया ब्लॉग के माध्यम से पहुँचाएं। मुझे विश्वास है कि यह न सिर्फ अलग तरीके और अलग ढंग से बनी फिल्म है बल्कि मनोरंजक फिल्म है।"[83] इस तरह हम देखते हैं मनोज वाजपेयी अपनी फिल्म के प्रचार प्रसार के लिए हिंदी ब्लॉग का सहारा लेते हैं। इसके अलावा कुछ महत्वपूर्ण ब्लॉगर हैं जैसे हिंदी ब्लॉगिंग के प्रमुख हस्ताक्षरों में जितेंद्र चौधरी, मनोज शुक्ला, आलोक कुमार, जिन्होंने पहला हिंदी ब्लॉग

[82] http://ashokchakradhar.blogspot.com/ date- 04/07/2019,time-08:26
[83] http://manojbajpayee.itzmyblog.com/ , date- 04/07/2019,time-08:27

लिखा देवाशीष, रवि रतलामी, पंकज बेंगानी, समीर लाल, रमण कौल, मैथिलीजी, जगदीश भाटिया, पंकज नरूला, अविनाश, अनुनाद सिंह, शशि सिंह, सृजन शिल्पी, ई-स्वामी, सुनील दीपक आदि के नाम लिए जा सकते हैं। जयप्रकाश मानस, नीरज दीवान, श्रीश बेंजवाल शर्मा, अनूप भार्गव, शास्त्री जेसी फिलिप, हरिराम, आलोक पुराणिक, ज्ञानदत्त पांडेय, अभय तिवारी, नीलिमा, अनामदास, काकेश, अतुल अरोड़ा, घुघूतीबासूती, संजय तिवारी, सुरेश चिपलूनकर, तरुण जोशी जैसे अन्य उत्साही लोग भी ब्लॉग जगत पर पूरी गंभीरता और नियम के साथ सक्रिय हैं और इंटरनेट पर हिंदी विषय वस्तु को समृद्ध बनाने में लगे हैं।

3.3.2 सामूहिक ब्लॉग

इस प्रकार के ब्लॉग का निर्माण सार्वजनिक व सामूहिक महत्व के विषयों पर ब्लॉगर्स को अपनी राय रचनाओं के माध्यम से एक ही ब्लॉग रूपी मंच पर प्रस्तुत करने के उद्देश्य किया जाता है। अर्थात इसमें ब्लॉग स्वामी स्वयं भी ब्लॉग व्यवस्थापक की भूमिका निभाता है और अन्य किसी ब्लॉगर को व्यवस्थापक के रूप में नियुक्त भी कर सकता है।

इस तरह ब्लॉग पर ब्लॉग स्वामी अन्य ब्लॉगर्स को योगदान हेतु ब्लॉग लिंक भेज कर ब्लॉग में शामिल होने हेतु आमंत्रित लिंक पर क्लिक करने को कहता है। यह लिंक अन्य ब्लॉगर्स को अपने ईमेल में प्राप्त होता है।

आज हिंदी ब्लॉग जगत में सामूहिक ब्लॉग की भरमार है। इसमें कुछ साहित्यिक उद्देश्य से सृजित किये गए हैं तो कुछ अन्य ब्लॉग भी हैं जैसे चर्चामंच, मोहल्ला, कबाड़खाना, भड़ास आदि हैं इसी प्रकार नारी को केंद्र में रखकर भी अनेकों सामूहिक ब्लॉग का निर्माण किया गया है जिनमें भारतीय 'नारी', 'चोखेर बाली', ब्लॉग का महत्वपूर्ण स्थान है।

3.3.2.1 कबाड़खाना

अशोक पांडेय का यह ब्लॉग एक सामूहिक ब्लॉग है। यह ब्लॉग भारत के आम उपभोक्ता को आईना दिखाने का काम करता है। इसके बारे में कहा जाता है कि इस कबाड़खाने में सबके लिए कुछ न कुछ मिल ही जाता है। सभी अपने काम की कोई न कोई सामग्री ढूंढ ही लेते हैं। इस कबाड़खाने में जिसकी जो इच्छा होती है उसे वह चीज थोड़ी बहुत मात्रा में जरुर मिल जाती हैं।

इस ब्लॉग के संदर्भ में रवीश कुमार लिखते हैं,- "पेप्पोर रद्दी पेप्पोर चिल्लाते-चिल्लाते अशोक पांडेय का यह ब्लॉग कबाड़ फैला रहा है। इस ब्लॉग पर जो भी आता है उसका कबाड़ीवाला कह कर स्वागत किया जाता है। वीरेंद्र डंगवाल हो या उदय प्रकाश यह सब कबाड़ी वाले हैं"[84]

इस कबाड़ खाने में और भी कबाड़ हैं जो बड़े ही उम्दा किस्म के हैं। इस कबाड़ के बीच कहीं निराला की शोक-गीत कविता 'सरोज स्मृति' का कुछ अंश है जिसके बहाने निराला के जीवन संघर्ष की झांकी प्रस्तुत की गई है। तो कहीं निराला को अपने टाइप का फक्कड़ कबाड़ी बताकर कबाड़ खाने की प्रशंसा की गई है। वहीं दूसरी तरफ वह 'तोड़ती पत्थर' और 'पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक, चल रहा लकुटिया टेक' जैसी पंक्तियों को उद्धृत कर कवि निराला का यशोगान भी किया गया है।

एक दूसरी पोस्ट में रामधारी सिंह 'दिनकर' की कविता 'हठ कर बैठा चांद एक दिन माता से यह बोला, सिलवा दो माँ मुझे ऊन का मोटा एक झिंगोला' कविता को अशोक पांडेय द्वारा पोस्ट किया गया है। इस तरह हम देखते हैं कि कबाड़खाने में साहित्यिक संस्मरण,

---

[84] हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011, पृष्ठ संख्या-49

कविता, कहानी, उपन्यास तथा कुछ कविताओं की प्रसिद्ध पंक्तियों को पोस्ट किया गया है, और उन रचनाकारों के जीवन संघर्ष की कुछ प्रेरणादायक जीवनानुभवों को व्यक्त किया गया है।

यह अभिव्यक्ति साहित्य कला और ब्लॉग दोनों के लिए एक सुंदर अवसर है क्योंकि इस पर पाठकों की तत्काल टिप्पणी आ जाती है लोग अपनी पसंद नापसंद को अभिव्यक्त करते हैं और जवाब भी उन्हें तत्काल मिल जाता है जिससे पाठक की रुचि और पसंद ना पसंद के बारे में ब्लॉगर को यथाशीघ्र पता चल जाता है और उन कमियों को दूर करके पाठक की रूचि के अनुसार सामग्री मुहैया कराई जाती है।

3.3.2.2 नारी ब्लॉग

यह सामुदायिक ब्लॉग है जिसकी सदस्य नारियां ही हैं। यह एक सम्मिलित प्रयास है जिसके माध्यम से स्त्रियां अपनी बात समाज तक पहुँचा रही हैं। नारी ब्लॉग पर केवल महिलाएं ही लिख सकती हैं इस संदर्भ में ब्लॉग के मुख्य पेज पर लिखा हुआ है,- "यहाँ महिला की उपलब्धि भी हैं , महिला की कमजोरी भी और समाज के रुढ़िवादी संस्कारों का नारी पर असर कितना और क्यों ? हम वही लिख रहे हैं जो हमको मिला है या बहुतों ने भोगा है। कई बार प्रश्न किया जा रहा है कि अगर आप को अलग लाइन नहीं चाहिये तो अलग ब्लॉग क्यूँ ? इसका उत्तर हैं कि 'नारी' ब्लॉग एक कम्युनिटी ब्लॉग हैं जिस की सदस्या नारी हैं जो ब्लॉग लिखती हैं। ये केवल एक सम्मिलित प्रयास है अपनी बात को समाज तक पहुचाने का।"[85] 21वीं शताब्दी में जहाँ लैंगिक समानता स्त्री सुरक्षा जैसे मुद्दों पर जोर है, वहीं इस ब्लॉग के माध्यम से नारी को अपनी एक अलग पहचान दिलाने का प्रयास किया जा रहा है।

---

[85] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/ date- 04/07/2019,time-08:07

जैसे-शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, महिला सशक्तिकरण के मुद्दे पर में काफी कुछ लिखा जा रहा है। उदाहरण के लिए कुछ पोस्ट को देखें 'लड़ाई अभी बाकी है', 'प्रकृति ने दोनों को एक सा बनाया है पर समाज ने दोनों को बड़े होने के एक से अवसर प्रदान नहीं किए हैं।' जब तक महिला आर्थिक रूप से सक्षम नहीं होती तब तक उसको 'माय चॉइस' मिल ही नहीं पाती है।

आज भी अपनी आहुति ही दे रही है, क्योंकि ना तो समाज ने उनको पहले न्याय दिया है और ना अब देने को तैयार है। अतः इस ब्लॉग के माध्यम से नारी जीवन से जुड़े हुए कई महत्वपूर्ण मुद्दों को उठाने का प्रयास किया गया है। इस संदर्भ में बताया गया है कि नारी ब्लॉग को क्यों शुरू किया गया इसके पीछे के मूल कारणों को इन शब्दों में व्यक्त किया गया है,- "नारी ब्लॉग को ब्लॉग जगत की नारियों ने इसलिये शुरू किया ताकि वह नारियाँ जो सक्षम हैं नेट पर लिखने मे वह अपने शब्दों के रास्ते उन बातों पर भी लिखें जो समय-समय पर उन्हें तकलीफ देती रहीं हैं। यहाँ कोई रेवोलुशन या आन्दोलन नहीं हो रहा है ... यहाँ बात हो रही है उन नारियों की जिन्होंने अपने सपनों को पूरा किया है किसी ना किसी तरह। कभी लड़ कर , कभी लिख कर , कभी शादी कर के , कभी तलाक ले कर। किसी का भी रास्ता आसन नहीं रहा है। उस रास्ते पर मिले अनुभवों को बांटने की कोशिश हैं 'नारी' और उस रास्ते पर हुई समस्याओं के नए समाधान खोजने की कोशिश हैं 'नारी' । अपनी स्वतंत्रता को जीने की कोशिश, अपनी सम्पूर्णता मे डूबने की कोशिश और अपनी सार्थकता को समझने की कोशिश।"[86]

इस तरह कई पोस्ट देखने को मिलती हैं, जहाँ स्त्रियों ने बड़ी तत्परता के साथ अपने हक के मुद्दे उठा रही हैं और उन पर विचार विश्लेषण भी कर रही हैं तथा अपनी बात को जन-जन तक पहुँचाने का प्रयास कर रही हैं।

[86] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/ date- 04/07/2019,time-08:11

3.3.2.3 चोखेरबाली

यह एक कम्युनिटी ब्लॉग है। यह ब्लॉग भी नारी ब्लॉग की तरह है। जिसमें अंतर सिर्फ इतना है कि यहाँ नारी संबंधी विचार कोई भी लिख सकता है। इस ब्लॉग के माध्यम से समाज में नारियों को कमतर आंकने की मानसिकता को बदलने का उपक्रम किया गया है। इस संदर्भ में एक पोस्ट 'पितृसत्ता के दबाव को रिस्पॉन्ड करने को अभिशप्त हैं आजाद औरतें भी? में ब्लॉगर लिखती हैं,- "सीमोन द वोउवार हों, मन्नू भंडारी, अमृता प्रीतम, शिवरानी देवी हों, प्रभा खेतान या चेखव के संस्मरण लिखने वालीं लीडिया अविलोवा। प्रबुद्ध ,आज़ाद ख़याल, प्रतिभाशाली औरतों ने अपने संबंधों पर बेहिचक लिखा। लेकिन ऐसी क्या वजह रह गई कि उन पुरुषों/ लेखकों को कभी ज़रूरी नहीं लगा कि वे अपने जीवन में आई स्त्री के बारे में लिखें ! क्या बेहद आज़ाद दिखने वाले संबंधों में भी पितृसत्ता महीन स्तरों पर काम करती है? वे क्या पितृसत्तात्मक दबाव क्या हैं? दुनिया-जहान की फिक्र और कंसर्न और लेखन के बीच क्या पुरुष के लिए उसका 'सम्बन्ध' एक ऐसा प्राईवेट और महत्वहीन अफेयर है जिसके बारे में बात करना गैर-ज़रूरी है ?"[87]

3.3.2.4 भड़ास

यह एक सामूहिक ब्लॉग है। इसमें बड़े ही सहज, सरल व बिंदास ढंग से आप अपनी बात कह सकते हैं। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें गंभीर से गंभीर विषयों को भी बड़े ही सहज और सरल ढंग से व्यक्त करने का प्रयास किया जाता है। इसके पोस्टों में कहीं गंभीरता दिखती है तो कहीं मौज-मस्ती दिखती है। कहीं गंभीर विषयों पर चर्चा दिखती है तो

---

[87] http://sandoftheeye.blogspot.com/2018/09 date- 04/07/2019,time-08:13

कही रंगीन मिज़ाज वाली मस्ती दिखती है। दरसल इस ब्लॉग की टैगलाइन ही है 'अगर कोई बात गले में अटक गई हो तो उगल दीजिए, मन हल्का हो जाएगा'

यहाँ 'ख़त का मजमून भांप लेते हैं लिफाफा देखकर' वाली कहावत फिट बैठती है। यहाँ हम देखते हैं जिंदगी के हर पहलुओं को यह ब्लॉग में समेटने का प्रयास करता है। इसमें गंभीरता-सरलता और हंसी-खुशी, मौज-मस्ती सभी के लिए मंच प्रदान किया जाता है। यहाँ जिंदगी के किसी भी मोड़ की भड़ास निकालने के लिए पर्याप्त अवसर है। यही इसका उद्देश्य है कि आप भड़ास निकालते रहिये क्या पता आपके किसी काम आ जाये।

अतः आप अपना मनोबल बढ़ाएं और इस मंच के माध्यम से अपने एहसास को जन-जन तक पहुचाइए। इस संदर्भ में इसकी एक पोस्ट का कुछ अंश देखिए,-"भई, जीना तो है ही, सो भड़ास जो भरी पड़ी है, उसे निकालना भी है। और, इसीलिए है यह ब्लॉग भड़ास। जब दिल टूट जाए, दिमाग भन्ना जाए, आंखें शून्य में गड़ जाएं, हँसी खो जाए, सब व्यर्थ नज़र आए, दोस्त दगाबांज़ हो जाएं, बास शैतान समझ आए, शहर अजनबियों का मेला लगे...तब तुम मेरे पास आना प्रिये, मेरा दर खुला है, खुला ही रहेगा, तुम्हारे लिए।"[88]

[88] https://bhadas.blogspot.com/2007/01/blog-post.html date- 04/07/2019,time-15:36

चतुर्थ अध्याय

हिंदी के ब्लॉग और समकालीन विमर्श

चतुर्थ अध्याय- हिंदी के ब्लॉग और समकालीन विमर्श

4.1 विमर्श: शब्द का अर्थ एवं परिभाषा

4.1.1 विमर्श: शब्द का अर्थ

4.1.2 विमर्श: शब्द की परिभाषा

4.2 'हिंदी ब्लॉग और स्त्री विमर्श'

4.2.1 स्त्री विमर्श की परम्परा और हिन्दी का ब्लॉग लेखन

4.2.1.1 पाश्चात्य सन्दर्भ

4.2.1.2 भारतीय सन्दर्भ

4.2.2 आधुनिक काल में स्त्री

4.2.3 चयनित ब्लॉग में स्त्री छवि

4.2.4 नारी सशक्तिकरण और ब्लॉग

4.3 'हिंदी के ब्लॉग और दलित विमर्श'

4.3.1 दलित: शब्द का अर्थ

4.3.2 दलित: शब्द का अर्थ, विभिन्न विद्वानों के अनुसार

4.3.3 दलित विमर्श: अवधारणा और स्वरूप

4.3.4 दलित विमर्श: वर्ग एवं वर्ण का सवाल

4.3.5 सहानुभूति और स्वानुभूति का प्रश्न

4.3.6 विभिन्न ब्लॉगों में दलित छवि

4.3.7 दलित मुक्ति का प्रश्न और पूँजीवाद

4.3.8 दलित समस्या और कानून

4.3.9 दलित विमर्श: सीमाएँ एवं सम्भावनाएं

4.3.10 दलित चेतना का अस्तित्त्व बोध और कानून

4.3.11 दलित चेतना आर्थिक बनाम सामाजिक

4.4 'हिंदी ब्लॉग और आदिवासी विमर्श'

4.4.1 आदिवासी शब्द का अर्थ परिभाषा एवं स्वरूप

4.4.2 आदिवासी साहित्य की अवधारणा और हिंदी का ब्लॉग लेखन

4.4.3 आदिवासी साहित्य की कसौटी और हिंदी ब्लॉग

4.4.4 आदिवासी अस्मिता अस्तित्व का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

4.4.5 आदिवासी समाज का संकट, विस्थापन की समस्या और हिंदी के ब्लॉग

4.4.6 आदिवासी माओवाद की समस्या का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

4.4.7 आदिवासी दलित प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

4.4.8 आदिवासी भाषाओं का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

4.5 हिंदी ब्लॉग और सांप्रदायिकता

4.5.1 साम्प्रदायिकता और हिन्दू-मुस्लिम

4.5.2 सांप्रदायिकता, ब्रिटिश नीतियां और पाकिस्तान

4.5.3 साम्प्रदायिकता और धार्मिकता और

4.5.4 साम्प्रदायिकता और संस्कृति

4.5.5 साम्प्रदायिकता के कारण

4.5.6 भारत में सांप्रदायिकता के कारण

4.5.7 साम्प्रदायिकता के दुष्परिणाम

4.5.8 साम्प्रदायिकता रोकने के उपाय

4.6 हिंदी ब्लॉग और पर्यावरण विमर्श

4.6.1 पर्यावरण संरक्षण और धारणीय विकास

4.6.2 पर्यावरण आंदोलन का इतिहास

4.6.3 पर्यावरण संरक्षण और जनप्रतिनिधित्व राजनीति

4.6.4 पर्यावरण प्रदूषण और वैश्वीकरण

4.6.5 पर्यावरण प्रदूषण और समाधान के लिए किए गए वैश्विक प्रयास

'हिंदी के ब्लॉग और समकालीन विमर्श'

4.1 विमर्श: शब्द का अर्थ एवं परिभाषा

विमर्श से अभिप्राय वाद-विवाद, चर्चा-परिचर्चा तथा बहस से है। किसी भी मुद्दे को लेकर उसके समस्त पहलुओं पर गंभीरता से जाँच पड़ताल करना तथा उसके एक-एक बिंदु पर गौर करते हुए अपने विचार रखना, अपना मत प्रस्तुत करना विमर्श कहलाता है।

विमर्श का अर्थ जीवंत बहस भी माना जाता है। इसके अंतर्गत किसी भी समस्या या स्थिति को एक कोण से न देखकर उसके विभिन्न पक्षों पर विचार किया जाता है। इसके कई रूप हमें देखने को मिलते हैं। जैसे देखने वाले या विचार करने वाले की मानसिकता क्या है? दृष्टि क्या है? संस्कार क्या है? और उसकी वैचारिक प्रतिबद्धता क्या है? इन सभी बिंदुओं पर विस्तार से जाँच पड़ताल कर समझने का प्रयास किया जाता है और यह जाँच पड़ताल समस्या या मुद्दे को सार्थक दिशा देने (विस्तार देने) के उद्देश्य से की जाती है।

विमर्श को चिन्तन का ही दूसरा रूप कहा जाता है। इसके अंतर्गत किसी भी समस्या की गहन पड़ताल और उसके गुण-दोषों को उजागर करके वास्तविक तथ्य का पता लगाकर अपनी सलाह या विचार व्यक्त करने का प्रयास किया जाता है। विचार और चिंतन का यह रूप जब दलित, स्त्री, और आदिवासी विषयक प्रश्नों से जुड़ता हैं तो क्रमशः दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श कहलाता है। विमर्श का शाब्दिक अर्थ विचार, विवेचन, परीक्षण, जाँच, परामर्श, बहस, संवाद, वार्तालाप आदि से भी जोड़ा जाता है।

4.1.1 विमर्श: शब्द का अर्थ

संस्कृत हिंदी कोश के अनुसार,- "विमर्श वि+मृश्+घञ के योग से बना है। जिसका शाब्दिक अर्थ विचार विनिमय, सोच विचार, परीक्षण, चर्चा, तर्कणा, विपरीत निर्णय, संकोच,

संदेह आदि।"[89] अतः किसी भी तथ्य की खोज के लिए उसके विविध पहलुओं की जानकारी लेना तथा विस्तृत रूप में विचार करना विमर्श कहलाता है।

सुधीश पचौरी के शब्दों में,- "ये दिन आलोचना के 'विमर्श' में बदल जाने के दिन हैं। विमर्श जो 'अर्थ' का उत्पादन ही नहीं करते, उन्हें संगठित भी करते हैं और अनिवार्यतः सत्तात्मक होते हैं। 'विमर्श' वस्तुतः आलोचना का विखंडन है, इसीलिए आलोचना से आगे है।"[90]

अतः यह बात स्पष्ट होती है कि किसी भी आलोचना की पुनः आलोचना की जा सकती है। नए विचार-विमर्श पुराने विचार को समय की माँग के हिसाब से पुनर्व्याख्या कर सकते हैं क्योंकि किसी भी शब्द में समयानुसार अर्थ ग्रहण करने की प्रवृत्ति होती है। जैसे दलित शब्द को ही लें तो समय और परिवेश के हिसाब से इसके अर्थ में परिवर्तन हो जाता है। ठीक उसी प्रकार पुराने विचार-विमर्श में समय की माँग के अनुसार परिवर्तन हो जाता है। इस तरह परिवेश और परिस्थिति के अनुसार शब्द नए-नए अर्थ ग्रहण करते रहते हैं।

4.1.2 विमर्श: शब्द की परिभाषा

विमर्श के संदर्भ में दलित आलोचक कँवल भारती लिखते हैं,- "हमने आलोचना को खारिज करके विमर्श शुरू किया। दलित विमर्श ने ही हिंदी आलोचना को कटघरे में खड़ा किया है और भारत की सांस्कृतिक विरासत को भी। विमर्श एक-एक सीवन, एक-एक पर्त को उखाड़ता है और हर चीज को वैज्ञानिक और करोड़ों लोगों की मुक्ति की दृष्टि से देखता है।"[91] यहाँ एक-एक पर्त को उखाड़ना से तात्पर्य समस्त तथ्यों को विविध सम्भावनाओं के आधार

[89] संस्कृत-हिंदी कोश, वामन शिवराम आप्टे, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पुनर्मुद्रण: दिल्ली,1996, पृष्ठ संख्या 946

[90] आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, राधाकृष्ण प्रकाशन , फ्लैप पेज से उद्धृत

[91] ओमप्रकाश वाल्मीकि , दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, पृष्ठ संख्या - 97

पर विचार-विमर्श करने से है और करोड़ों लोगों की मुक्ति से तात्पर्य अनेक लोगों की दृष्टि से है जो किसी भी तथ्य को अनेक दृष्टीकोण से देखने का प्रयास करते हैं।

इस तरह विमर्श में अतीत के तथ्यों को पुनर्व्याख्यायित कर उसे अपने अनुकूल बना लेने की सार्थकता होती है। यही कारण है कि विमर्श समाप्त नहीं होता बल्कि नए ढंग से नए रूप में भविष्य में जाता है। अतः भविष्य की जरूरतों के हिसाब से विमर्श का स्वरूप बदलता रहता है। इस तरह हम देखें तो किसी विशिष्ट सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, साहित्यिक फलक पर संप्रेषण, विश्लेषण का समस्त कार्य विमर्श करता है।

साहित्यकार, आलोचक, लेखक, विचारक, सिद्धांतकार किसी भी तथ्य की खोज के लिए विमर्शगत अध्ययन करते हैं और उस अध्ययन के दौरान मूल अर्थ को ही केंद्रित कर उसमें संबंधित वस्तुओं, संदर्भित चीजों की नए ढंग से, नए तरह से पुनर्व्याख्या करते हैं। इतना ही नहीं विचारक विमर्श से संबंधित सभी तथ्यों को जाँचने-परखने के साथ-साथ उस समय की सांस्कृतिक, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों का भी मूल्यांकन करते हैं। साथ ही साथ संवाद प्रक्रिया की भी जांच पड़ताल करते हैं। इस तरह विचारक उन समस्त तथ्यों से हमें अवगत कराने का प्रयास करते हैं जो विमर्श में सहायक होते हैं जिसमें भाषा, बोली, दृश्य, मिथक सभी आते हैं।

वर्तमान समय विमर्शों का है। जहाँ सामाजिक विमर्श, राजनीतिक विमर्श, धार्मिक विमर्श, सांस्कृतिक विमर्श, साहित्यिक विमर्श, ऐतिहासिक विमर्श, दलित-विमर्श, स्त्री-विमर्श और आदिवासी विमर्श मौजूद हैं। यह सभी विमर्श एक दूसरे से घुल-मिल कर नए विमर्श का गठन करते हैं। यह विमर्श पुनः अनेक उपविमर्शों में विभाजित हो जाते हैं।

इन विमर्श से संबंधित तथ्यों की छोटी सी छोटी चीज का परीक्षण करना, विचार-विमर्श करना एक नए विमर्श को जन्म देता है। जैसे किसी रचना में दलित विमर्श ना हो लेकिन दलित उपस्थित हो तो वह रचना दलित विमर्श के अंतर्गत आ जाएगी। उसमें (रचना में) दलित प्रसंग के विभिन्न कोणों से चर्चा, परिचर्चा व विचार व्यवहार होने लगेगा और यदि किसी रचना में दलित अनुपस्थित हो तो भी वह रचना दलित विमर्श का केंद्र बन सकती है। क्योंकि विमर्श में किसी भी तथ्य की खोज उस तथ्य की पुनर्व्याख्या होती है जिसमें पुराने विचार-विनिमय को नए विचार-विनिमय का रूप दे दिया जाता है। यह प्रक्रिया विमर्श के अंतर्गत ही आती है। अर्थात् तथ्यों को पुनर्व्याख्या करना और मूल तथ्यों के सन्दर्भों की जांच पड़ताल करना (जिसमें वह विमर्श उत्पन्न हुआ है) भी एक तरह का विमर्श ही है।

4.2 'हिंदी ब्लॉग और स्त्री विमर्श'

वैदिक काल से लेकर वर्तमान काल तक नारी अनेक वर्जनाओं का शिकार होती रही है। हर समाज में नारी की स्थिति दोयम दर्जे की रही है, जबकि स्त्री और पुरुष समाज निर्माण के दो आवश्यक अंग हैं। यह दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। ये दोनों समाज रूपी रथ के वो पहिए हैं जिनके बगैर रथ का चलना सम्भव नहीं है अर्थात् एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, इसके बावजूद समाज संचालन में एक को पूरी छूट और दूसरे पर तमाम वर्जनाएं क्यों? यह वर्जनायें स्त्री जीवन में गतिरोध और कुंठा का भाव भर देती हैं। स्त्री और पुरुष सृष्टि के निर्माता और संचालक तत्त्व हैं जिनके बगैर सृष्टि की रचना संभव नहीं।

इस सन्दर्भ में ब्लॉग लेखिका शालिनी कौशिक अपना मत व्यक्त करते हुये कहती हैं कि नारी और पुरुष इस दुनिया में बराबर हैं और ये बराबरी उन्हें प्रकृति से मिली है। इसी विषय को और अधिक स्पष्ट करते हुये ब्लॉगर अपनी एक पोस्ट 'नारी सशक्तिकरण की समर्थक नारियाँ किसी के आँख की किरकिरी नहीं बनना चाहती हैं' पोस्ट में विचार करते हुए

लिखती हैं,- "नारी सशक्तिकरण या वूमन एम्पावरमेन्ट के तहत कोई भी नारी किसी भी पुरूष से कुछ नहीं चाहती और ना समाज से कुछ चाहती है क्योंकि वह अस्वीकार करती है कि पुरूष उसका 'मालिक' है। ये कोई चुनौती नहीं है, और ये कोई सत्ता की उथल पुथल भी नहीं है ये 'एक जागृति है' कि नारी और पुरूष दोनो इंसान हैं और दोनों समान अधिकार रखते हैं समाज में "[92] अतः इनमें से एक को उपेक्षित कर देना समाज की गति को अवरुद्ध करना है।

स्त्री समाज को रचती है और समाज स्त्री को रचता है यह कितनी बड़ी विडंबना है कि जिस मानव को स्त्री अपने गर्भ में नौ महीने पालकर इस दुनिया में लाती है, जिसे वह उंगली पकड़कर चलना सिखाती है वही उसके चाल-चलन का हिसाब रखता है। यही स्त्री की नियति बन गई है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर 'रंजू भाटिया' अपनी एक पोस्ट 'वैदिक काल से अब तक नारी की यात्रा ...' में लिखती हैं कि, – "कुछ नियम समाज के ठेकेदारों ने और पुरोहितों ने मिल कर बनाए जिसमें पुरूष को देवता, औरत का ईश्वर बता कर उसको भाग्य का लेखा ईश्वर की इच्छा विधि का विधान आदि नाम दे दिए। उसी प्रकार के श्लोक भी बना दिए गये हैं।"[93]

स्त्री प्रेम है, स्त्री विश्वास है, स्त्री शक्ति है, स्त्री संयम है। यही प्रेम अगर स्त्री खुद को करने लगती हैं तो वह गलत हो जाती है। यह विश्वास अगर उसको अपने ऊपर हो तो वह गलत है। यही धैर्य यदि वह अपनी मुसीबतों से लड़ने के लिए इस्तेमाल करें और मुसीबतों पर विजय प्राप्त कर ले तो वह गलत है। समाज ने स्त्री को देह माना है। वह यह भूल जाता है कि स्त्री का भी एक मन है, वह भी प्रेम करना चाहती है, स्वच्छंद जीवन जीना चाहती है, लेकिन पितृसत्ता चाहती है कि स्त्री-पुरुषवादी अर्थों में मर्यादित व्यवहार करती रहे।

---

[92] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_13.html 6/11/2019 09:20:00 AM

[93] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_30.html रंजू भाटिया at 6/30/2019, 08:26:00 AM

इस संदर्भ में राजेंद्र यादव लिखते हैं, - "नारी को हम संपूर्णता में नहीं देख पाते। कमर से ऊपर की नारी महिमामयी है। करुणा भरी है, सुंदरता और शील की देवी है, वह कविता है, संगीत है, अध्यात्मा है और अमूर्त है। कमर से नीचे वह काम कंदरा है, कुत्सित और अश्लील है, ध्वंसकारिणी है, राक्षसी है और सब मिलाकर नर्क है।"[94]

इस सन्दर्भ में स्त्रीवादी लेखिका अनामिका की बात करें तो वे मिथकीय पात्र 'शूर्पणखा' की घटना का उल्लेख करते हुए कहती हैं कि सोलह साल की शूर्पणखा का एक पुरुष के प्रति आकर्षण सामान्य बात है। अगर वह उम्र में बहुत छोटी थी तो उसे समझा-बुझाकर वापस भेज देना चाहिए था लेकिन ऐसा नहीं हुआ इसलिए वह (शूर्पणखा) प्रश्न उठाती है कि उसे समझाने की जगह नाक कान काट लेना कहाँ का न्याय है?

असल में इस बात का जिक्र करते हुए अनामिका उस पितृसत्तात्मक विचारधारा का विरोध कर रही हैं जो अपने शोषण को जायज ठहरा रहा है और प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक शोषण करता आ रहा है। इस सन्दर्भ में अनामिका लिखती हैं, - "लक्ष्मण दरअसल पुरुष-प्रधान समाज के उस बेबुनियाद तर्क का संवहन करते दिखते हैं कि स्त्री की अपनी यौन-संवेदनाएँ तो होती ही नहीं, और वह निर्लज्ज (?) बनकर अपनी ओर से प्रणय-निवेदन करती है तो दाल में जरूर कुछ काला होता है... ।"[95]

स्त्रीवादी समर्थक लेखिकाओं ने इस लिंग केंद्रित वर्चस्व, प्रभुत्व को चुनौती दी है, पितृसत्तात्मक नैतिकता को तोड़ने का प्रयास किया है और उन प्रतिमानों की पड़ताल कर उन्हें विश्लेषित करने का प्रयास किया है, जो स्त्री विरोधी तथा लिंग विरोधी हैं। इस सन्दर्भ में प्रभा खेतान का मानना है कि स्त्रियों पर तिरस्कार का प्रभाव उनके यौन जीवन पर भी पड़ा है जिसके

[94] राजेन्द्र यादव , आदमी की निगाह में औरत , राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली , संस्करण : 2011, पृष्ठ संख्या- 14

[95] अनामिका, मन मांझने की जरुरत, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2006, पृष्ठ संख्या : 14

परिणाम स्वरूप स्त्रियों की मानसिकता को भी पुरुष ने अपनी अवधारणा (पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था) के अनुकूल निर्मित किया है।

इस सन्दर्भ में प्रभा खेतान लिखती हैं,- ‘‘पुरुषोचित प्रतिमान के आधार पर स्त्री यौनिकता की अवधारणा निर्धारित की गई। स्त्री के यौन-भाव को निष्क्रिय माना गया। स्त्री ‘काम’ को केवल देह के अंग विशेष तक ही सीमित कर दिया गया। संभोग के साथ एक बड़ी प्राचीन पितृसत्तात्मक अवधारणा जुड़ी रही है। ... पुरुष ‘सम्भोग से समाधि की ओर’ जाता है, मगर स्त्री को केवल माध्यम ही बने रहना है।’’[96] इस सन्दर्भ में ब्लॉगर सुमन जिंदल का मानना है कि, - भारतीय समाज में स्त्री को एक सेक्स ऑब्जेक्ट्स के रूप में देखा जाता रहा है। इतना ही नहीं एक और विद्रूप सोच ‘स्त्रियों की वर्जिनिटी को महिमामंडित’ करने की रही है। लेकिन पुरुष के लिए ऐसी कोई भी सोच समाज में नहीं रही है। धीरे-धीरे जब इस बात का एहसास स्त्री को होने लगा तो उसने इस प्रथा के खिलाफ विद्रोह करना शुरू किया।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर सुमन जिंदल अपनी एक पोस्ट ‘‘नथ’ विद्रूप सोच जो स्त्री के वर्जिन होने को महिमा मंडित करती थी’ में लिखती हैं,- ‘‘नथ प्रतीक थी कि स्त्री वर्जिन हैं। एक और विद्रूप सोच जो स्त्री के वर्जिन होने को महिमा मंडित करती थी लेकिन पुरुष के लिये कोई भी ‘ऐसी सोच’ समाज मे नहीं थी। धीरे धीरे जब नारी को ये बात समझ आ गयी और उन्होने विद्रोह स्वरुप नथ पहनना बंद कर दिया। स्त्री वर्जिन हैं या नहीं ये उसकी अपनी पसंद हैं। लेकिन वर्जिन होने का सबूत अगर नथ है तो नारी ने इसको ना मंजूर कर दिया। कभी कभी लगता हैं हमारी संस्कृति के ऊपर लम्बे-लम्बे लेख लिखने वाले असली बात को हमेशा छुपा क्यों जाते हैं। इतने अनभिज्ञ तो वो नहीं होगें कि नथ के ऊपर सब जानते हों पर ये ना जानते

[96] प्रभा खेतान , उपनिवेश में स्त्री , राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण : 2003 , पृष्ठ संख्या - 144

हों कि 'नथ' किस बात का प्रतीक या सबूत होती थी। 'नथ' पहनना या न पहनना उस पर निर्भर है जो इसे पहनता है लेकिन नथ क पीछे का इतिहास बहुत घिनौना हैं।"[97]

स्त्री-विमर्श ने उन पैतृक मूल्यों, मापदंडों, वर्जनाओं पर संदेह करते हुए उन पर प्रश्नचिन्ह खड़ा किया है और उसे समस्या ग्रस्त बताया है। ऐसे तीखे प्रश्नों ने स्त्री विमर्श की सार्थकता, प्रासंगिकता को बढ़ावा दिया है क्योंकि वे दुनिया की आधी आबादी के स्वत्व (अधिकार) से जुड़े हुए मुद्दे हैं। पितृसत्ता और पुरुषोचित संस्कार के संदर्भ में प्रभा खेतान की दृष्टि की बात करें तो वे लिखती हैं कि स्त्रीवाद का गहरा और प्राथमिक संघर्ष पितृसत्ता के विरुद्ध रहा है।

पितृसत्ता की मान्यताओं और निर्मित मानदंडों से संघर्ष करके ही स्त्री अपने लक्ष्य को पा सकती हैं। स्त्रीवाद का सामाजिक संघर्ष इसीलिए पितृसत्ता के खिलाफ रहा है। इस संदर्भ में वे आगे लिखती हैं, - "पितृसत्ता एक सामाजिक घटना है, हजारों साल से चली आई ऐसी व्यवस्था है, जिसमें स्त्री की अधीनस्थता सर्वविदित है। पितृसत्ता ने स्त्री को अपने ज्ञान की वस्तु बनाया। उसे साधन के रूप में प्रयुक्त किया - उसके नाम, रूप, जाति, गोत्र सब अपने संदर्भ में परिभाषित किए। स्त्री का यह अमानवीयकरण दलित के अमानवीयकरण से कहीं ज्यादा सूक्ष्म है, क्योंकि दलित पुरुष भी तो पितृ-व्यवस्था सत्ता का सदस्य है और पुरुषोचित अहंकार के कारण स्त्री के शोषण और उत्पीड़न से वह भी बाज नहीं आता।"[98]

पुरुषसत्ता ने दुनिया की आधी आबादी को अपना उपनिवेश बना दिया और उन्हें आत्महीन, स्वप्नहीन, तथा वाणीहीन भी किया है। स्त्री-विमर्श ने सदियों से चली आ रही इस स्वप्नहीनता एवं खामोशी को तोड़ा है और अपनी चुप्पी को गहरे तौर पर मानवीय अर्थों में व्यक्त किया है। स्त्री-विमर्श के संदर्भ में डॉ. अमरनाथ आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली

[97] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/04/blog-post_10.htmldate- 4/10/2019, 13:12

[98] प्रभा खेतान , उपनिवेश में स्त्री , राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण : 2003 , पृष्ठ संख्या – 39

में लिखते हैं, -"पुरुषों के समकक्ष स्त्रियों की राजनीतिक, सामाजिक और शैक्षिक समानता का आंदोलन जिसे कुछ वर्ष पहले तक नारीवादी कहा जाता था। अंग्रेजी में इसके लिए फेमिनिज्म शब्द प्रचलित है।"[99]

यह विमर्श पुरुषों के समकक्ष स्त्रियों की राजनीतिक, सामाजिक और शैक्षिक समानता का आंदोलन है, जो बराबरी का अधिकार चाहता है। कंधे से कंधा मिलाकर चलना चाहता है। अतः स्त्री विमर्श दुनिया की आधी आबादी के अधिकारों विचारों एवं सपनों का विमर्श है।

4.2.1 **स्त्री विमर्श की परम्परा और हिंदी का ब्लॉग लेखन**

स्त्री विमर्श पर जब भी विचार-विमर्श किया जाता है तो कई सवाल खड़े होते हैं। स्त्री कौन है? स्त्री पैदा होती है ? स्त्री बनाई जाती है ? स्त्री दमित है, शोषित है, उत्पीड़ित है ? अथवा प्रताड़नाओं के अधिकार को साथ लेकर आने वाली स्त्री है ? या फिर समाज में चले आ रहे परंपरागत नियमों, पितृसत्तात्मक व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था और संस्कृति का बोझ ढोने वाली मशीन ही स्त्री है ? दरअसल यह सवाल इसलिए भी उठता है क्योंकि स्त्री यह बोझ शताब्दी-दर-शताब्दी वहन करती चली आ रही है।

इस सन्दर्भ में राजेंद्र यादव का मानना है कि युगों से स्त्री के प्रति एक अलग नजरिया समाज में देखने को मिलता है, उनके अनुसार हमारे समाज की यह विडंबना है कि नारी के प्रति श्रद्धा का भाव जगाकर उसे देवी के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया जाता है। स्त्री के दूसरे रूप को दबाया जाता रहा है। वे आगे लिखते हैं कि, - "आदमी ने यह मान लिया है

[99] डॉ. अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2012, पृष्ठ संख्या- 385

कि औरत शरीर है, सेक्स है, वहीं से उसकी स्वतंत्रता की चेतना और स्वच्छंद व्यवहार पैदा होते हैं। इसलिए वह हर तरह से उसके सेक्स को नियंत्रित करना चाहता है।"[100]

पाश्चात्य और भारतीय स्त्री की स्थिति पर विचार-विमर्श करें तो दोनों की स्थितियों में अंतर दिखाई पड़ता है । यह अंतर उनके रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज परिस्थिति-परिवेश तथा सभ्यता-संस्कृति, परंपरा-सामाजिकता इन सभी स्तरों पर भिन्नता देखने को मिलती है। जिस प्रकार पाश्चात्य देशों में स्त्री शोषण के खिलाफ समय-समय पर आंदोलन होते रहे, उस प्रकार भारत में स्त्री शोषण के खिलाफ आंदोलन कम ही दिखाई पड़ता है। पाश्चात्य देशों में स्त्री समानता के लिए सदियों से आंदोलन होते रहे हैं।

वहीं भारतीय स्त्री को आजादी के चंद वर्षों उपरांत ही समानता का अधिकार मिल गया । भारतीय स्त्रियों ने कभी पुरुष के विरुद्ध अधिकारों की लड़ाई नहीं लड़ी बल्कि भारतीय मनीषियों ने ही स्त्री मुक्ति के संघर्ष में सहयोग और मार्गदर्शन की भूमिका निभाई तथा सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सार्वजनिक क्षेत्रों में पुरुष वर्ग ने ही स्त्री को प्रेरित और प्रोत्साहित करने का प्रयास किया है।

स्त्रियों ने पुरुष प्रधान रूढ़िवादिता को तोड़ने के लिए तथा अपनी दयनीय दासता से मुक्ति के लिए समय-समय पर कई आंदोलन किये जिनमें स्त्रियों ने बढ़-चढ़कर सहयोग किया और समाज में व्याप्त विसंगतिपूर्ण व्यवस्था ढहाने का प्रयास किया। इस सन्दर्भ में अनामिका लिखती हैं कि,- "दोषी पुरुष नहीं, वह पितृसत्तात्मक व्यवस्था है जो जन्म से लेकर मृत्यु तक पुरुषों को लगातार एक ही पाठ पढ़ाती है कि स्त्रियाँ उनसे हीनतर हैं, उनके भोग का साधन मात्र । आंदोलन की सार्थकता इसमें है कि वह वहाँ–वहाँ उंगली रखें जहाँ -जहाँ मानदंड दोहरे हैं,

[100] राजेन्द्र यादव , आदमी की निगाह में औरत , राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली ,संस्करण : 2011 , पृष्ठ संख्या – 15

विरूपण, प्रक्षेपण, विलोपन के तिहरे षड्यंत्र स्त्री के खिलाफ लगातार कारगर हैं जिनसे निस्तार मिलना ही चाहिए और सारा संघर्ष इसी बात का है।"[101]

4.2.1.1 पाश्चात्य सन्दर्भ

पाश्चात्य देशों में स्त्री की स्थिति प्राचीन काल से ही कुछ अधिक सुदृढ़ नहीं रही है। यहाँ स्त्रियाँ प्राचीन काल से ही समानता और स्वतंत्रता के अधिकारों से वंचित रही हैं। प्राचीन यूनानी और रोमन साम्राज्य में स्त्रियों को पुरुष की संपत्ति ही समझा जाता था। सुकरात ने 'स्त्री' के प्यार को पुरुष की घृणा से अधिक भयावह माना है और अरस्तू के विचार में स्त्री की तुलना में पुरुष श्रेष्ठ समझा जाता है।

प्राचीन 'चीन' में भी उन्हें देवालय में प्रवेश का अधिकार नहीं था। इटली के प्राचीन निवासी कहा करते थे कि जैसे 'घोड़े को काबू में करने के लिए एड़ लगाना पड़ता है वैसे ही स्त्री चाहे अच्छी हो या बुरी हो उसकी ताड़ना आवश्यक होती है। अरब के समाज में पुत्री का जन्म अशुभ माना जाता था। निष्कर्ष रूप में कहें तो स्त्री के संदर्भ में पाश्चात्य दृष्टिकोण संतोषजनक नहीं रहा है। स्त्री को उनके (पुरुषों) पैरों की जूती ही समझा जाता था। वह स्त्री को मनुष्य नहीं बल्कि वस्तु समझते थे, जिसका जैसे मन चाहा वैसे इस्तेमाल करते थे।

स्त्रियों को किसी तरह के मानवीय अधिकार प्राप्त नहीं थे। स्त्री एक कठपुतली मात्र थी, जब चाहा, जिसे चाहा, जहाँ चाहा नचाते रहते थे। तमाम तरह की बंदिशें थोपते रहते थे। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में नैतिक मूल्यों और रूढ़िगत परंपराओं को झेलते-झेलते स्त्री की मानसिकता भी पुरुष सत्ता के अनुकूल हो गई थी। इसी अनुकूलता की वजह से ही स्त्री घर की चारदीवारी में अपने आप को पूर्ण एवं संतुष्ट समझने लगी थी। स्त्री को विवाह करना और

---

[101] प्रभा खेतान , उपनिवेश में स्त्री , राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली , प्रथम संस्करण : 2003 , पृष्ठ संख्या – 11

संतान पैदा करने का ही अधिकार था। सामाजिक नियमों के अनुसार स्त्री को किसी भी सार्वजनिक कार्य में हिस्सेदार नहीं बनाते थे और ना ही हस्तक्षेप करने का अधिकार देते थे।

स्त्री अपनी मानसिकता से अपने आचार-विचार से पारंपरिक नैतिक मूल्यों की चक्की में पिसती रहती थी। सामाजिक रूप से स्त्री एक दासी की तरह जीवन व्यतीत करती थी। इसका कार्य घर का काम करना, बच्चों का पालन पोषण करना, पुरुष की प्रताड़ना झेलना और यह सब बिना कुछ कहे सहते रहना था। स्त्री अपने उत्पीड़न की शिकायत या समस्याओं के बारे में भी किसी से विरोध नहीं करती थी। यह उसका नैतिक कर्तव्य बन गया था।

अतः प्राचीन काल से ही स्त्री पुरुष के अधीन दिखाई पड़ती है। उसके अंदर बचपन से ही यह संस्कार भरे जाते थे कि तुम एक स्त्री हो, स्त्री को पुरुष के वस में रहना है। अमेरिका,फ्रांस,यूरोप,जर्मन,रोमन आदि अन्य पाश्चात्य देशों में भी स्त्री की लगभग यही स्थिति थी। इस तरह पुरुष की सामंती सोच के संदर्भ में पाश्चात्य स्त्रीवादी लेखिका 'सीमोन द बोउवार' अपनी पुस्तक 'स्त्री उपेक्षिता' में मुस्लिम समाज के 'कुरान शरीफ' की घोषणा को उद्धृत करती हैं,- "पुरुष औरत से उन गुणों के कारण श्रेष्ठ है, जो अल्लाह ने उसे उत्कृष्ट रूप से दिए और अपनी इस श्रेष्ठता के कारण पुरुष औरत के लिए दहेज जुटा पाता है।"[102] किसी भी स्थिति में स्त्री को पुरुष के गुणों से कमतर आंका गया है। सामंती समाज में स्त्री की बड़ी ही दयनीय स्थिति रही है। उसे पुरुषों जैसा समान अधिकार प्राप्त नहीं था। संपत्ति में भी उसका हस्तक्षेप नहीं था। फलस्वरूप स्त्री को लाचारी और दुखियारी का जीवन जीना पड़ता था।

इस संदर्भ में प्रभा खेतान लिखती हैं कि मिस्र के प्राचीन समाज में स्त्री,- "देवी, माँ, पत्नी होकर भी अपनी पूर्ण गरिमा रख नहीं पाती थी क्योंकि जमीन का स्वामी केवल राजा

[102] स्त्री : उपेक्षिता, सीमोन द बोउवार, द सेकंड सेक्स का हिंदी रूपांतरण, प्रभा खेतान, प्रकाशक : हिंदी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, संस्करण : 2002, पृष्ठ संख्या 59-60

हुआ करता था। ऐसी विशिष्ट स्थिति में भी औरत पुरुष के बराबर नहीं थी। फराह पुरुष होता था, धर्मगुरु तथा योद्धा भी पुरुष ही थे। व्यक्तिगत जीवन में स्त्री से यह अपेक्षा रखी जाती थी कि वह निष्ठावान बनी रहे। विधवा हो जाने तथा किसी पुरुष वारिस के न रहने पर बहुधा स्त्री का पुनर्विवाह कुल के वरिष्ठ पुरुष के साथ कर दिया जाता था, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो।"[103]

अतः मिस्र में पूरी तरह से पुरुष वर्चस्व हावी रहा है और स्त्री को चरित्रवान, निष्ठावान तथा वंश को चलाने वाली वस्तु के रूप में देखा जाता रहा है, हालाँकि एथेंस और स्पार्टा के समाज पर विचार करें तो वहाँ स्त्रियों को पुरुष के बराबर अधिकार प्राप्त थे। वहाँ बच्चों का पालन पोषण सामूहिक रूप से होता था। स्त्री को अनेक पुरुषों से संपर्क करने की आजादी थी। उसके पास न तो कोई निजी संपत्ति थी और ना ही विशिष्ट वंश परंपरा, इसलिए स्त्री का काम बच्चे पैदा करना था और पुरुष का काम युद्ध करना। स्त्री-विमर्श के प्रारंभिक दृष्टिकोण में स्त्रियों के लिए समानता का समर्थन करने वालों में भी यह धारणा जकड़ी हुई थी कि कई प्राकृतिक कारणों की वजह से स्त्रियाँ पुरुषों से अलग और कमजोर हैं। उनके विचार और शक्ति पुरुषों के विचारों और शक्ति की तुलना में सबल नहीं हैं। ऐसे विचारों और नियमों ने स्त्रियों पर बचपन से ही प्रतिकूल प्रभाव डाला। इसका परिणाम यह हुआ कि स्त्रियाँ हमेशा दासत्व, सेवा, त्याग, कर्तव्य, संयम जैसे गुणों को बरकरार रखती थीं तथा अपने जीवन जीने के ढंग को समाज की मांग के अनुसार बदलती रहती थी।

कमोबेश हर देश में स्त्रियों की यही दशा थी, उसकी मानसिकता उसके आचार-विचार व्यवहार की स्थिति सब जगह एक ही थी, जिससे वह बाहर निकलने के लिए सदियों से छटपटा रही थी। यह छटपटाहट लगभग पूरे देश की स्त्रियों के अंदर विद्यमान थी। इसके लिए

---

[103] स्त्री : उपेक्षिता , सीमोन द बोउवार , द सेकंड सेक्स का हिंदी रूपांतरण , प्रभा खेतान , प्रकाशक : हिंदी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड , नई दिल्ली , संस्करण : 2002 , पृष्ठ संख्या - 60

कोई ऐसा ठोस प्रयास नहीं दिखाई देता जो व्यवहारिक तौर पर स्त्री के अधिकारों को स्थापित कर सके। जो कानून स्त्रियों के अधिकारों के लिए बने थे वह भी फाइलों में ही दम तोड़ रहे थे। इसलिए स्त्री के जीवन में उसकी उपयोगिता कमजोर ही नजर आती रही है। हालाँकि रोमन सभ्यता और ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार से कुछ मान्यताएं टूटी हैं जिनकी वजह से भेदभाव को खत्म करने का प्रयास किया गया था। वैसे अनेक देशों ने यह माना है कि 'मनुष्यता का धर्म ही सर्वोपरि है' जिसमें कोई लिंग, वर्ग या सामाजिक प्रतिष्ठा सर्वोपरि नहीं है बल्कि सभी समान हैं।

4.2.1.2 भारतीय सन्दर्भ

भारतीय दृष्टिकोण में स्त्री समाज के केंद्र में रही है। स्त्रियों को यहाँ प्राचीन काल से ही आदर सम्मान और श्रद्धापूर्वक देखने की चर्चाएँ मिलती हैं। परंतु यहाँ भी स्त्री को अनेक रूपों में अनेक दृष्टिकोणों में, विभिन्न स्थानों पर शोषण नजर आता है। स्त्री शोषण की यह दारुण दशा लगभग सभी देशों में देखने को मिलती हैं। जिसकी तड़प और छटपटाहट ने कई आंदोलनों को जन्म दिया है। जिसका प्रभाव भारतीय स्त्रियों में दिखाई पड़ता है।

भारतीय समाज पुरुष प्रधान समाज है, जहाँ पुरुष की ही चलती है। पुरुष एक तरह से मालिक होता है। घर परिवार व समाज में निर्णय लेने और सामाजिक मानदंड बनाने में पुरुष का ही वर्चस्व रहा है। इस पुरुष प्रधान समाज में स्त्री को देवी, ममता की मूरत, त्यागमयी जैसे सम्मान से नवाजा जाता रहा है, लेकिन परंपरागत ढांचे से बाहर निकलने नहीं दिया गया। 'माँ' रुपी स्त्री को आदरणीय सम्मान प्राप्त है, लेकिन अन्य स्त्रियों को शोषण की चक्की में पीसने के लिए छोड़ दिया गया है। संविधान ने उन्हें समान अधिकार तो दिए हैं, लेकिन व्यवहारिक धरातल पर उन्हें सदियों से चले आ रहे परंपरागत नैतिक मूल्यों के तहत बंदी बनाकर रखा गया है।

पितृप्रधान समाज ने स्त्रियों की मानसिकता को अपने अनुरुप बना लिया है। पुरुष द्वारा बनाए गए कानून-कायदे का वह कभी विरोध नहीं कर पायी, हालाँकि समाज में समय-समय पर स्त्रियों की परिस्थितियों में सुधार करने के लिए अनेक प्रयास किए गए। उनकी सुरक्षा के कड़े इंतजाम किए गए हैं लेकिन पुरुष अपनी मानसिकता में बदलाव नहीं कर पाए।

हालाँकि स्त्री सुरक्षा के लिए कई संगठन, NGO तथा विभिन्न आयोग काम करते रहे हैं लेकिन स्त्री की सुरक्षा हो पा रही है, यह एक बड़ा सवाल आज भी बना हुआ है। इसका कारण यह है कि आज भी कोई स्त्री अकेले में आ जा सकती है या नहीं? यह प्रश्न विचार करने योग्य है। स्वतंत्रतापूर्व स्त्री की स्थिति की बात करें तो, वह घर की चारदीवारी को लाँघ नहीं पायी। क्योंकि परंपरागत नैतिक मूल्यों, पितृसत्तात्मक मूल्य ने उसे अपनी जकड़बंदी से बाहर नहीं आने दिया। परन्तु विडम्बना यह है कि, आज का सुशिक्षित समाज भी पितृसत्तात्मक व्यवस्था का शिकार है।

आज भी स्त्री को उसके अधिकारों से वंचित रखा जाता है। आज की स्त्री भी घर, परिवार, समाज के सामने कठपुतली की तरह नाचती हैं। वह कभी पिता के अधीन होती है, तो कभी भाई के अधीन, कभी पति के और कभी बेटे के अधीन रहती है। इसी अधीनता में ही उसका जीवन शुरू होता है और एक दिन खत्म भी हो जाता है, लेकिन अधीनता खत्म नहीं होती यही स्त्री जीवन की विडंबना है, जिससे इंकार नहीं किया जा सकता है।

इस के संदर्भ में राजेंद्र यादव लिखते हैं कि - ‘‘सामंती व्यवस्था में नारी सिर्फ एक वस्तु है, संभोग और संतान की इच्छा पूरी करने वाली मादा। यहाँ सेवा, उपयोग और वफादारी के

बदले पुरुष नारी को उसी तरह सजाता, सुरक्षा देता और उसकी जिम्मेदारी लेता है जैसे अपने हाथियों, घोड़ों और बैलों को सजाता, संवारता और संरक्षण देता है।"[104]

स्त्री की यह रचना निर्मित करने में उसके गुरु, पिता, पति, भाई और बेटों का ही योगदान नहीं रहता बल्कि उसकी माता और दादी आदि का भी बड़ा योगदान होता है। इस तरह स्त्री के शोषण में परिवार की भूमिका अहम् होती है। इस संदर्भ में विचार करते हुए राजेंद्र यादव का मानना है कि स्त्रियों के शोषण में परिवार संस्था का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। वे लिखते हैं,- "परिवार नामक संस्था द्वारा पुरुष-निरंकुशता की किलेबंदी न की गई होती तो शायद पुरुष न बालिका को बर्दाश्त करता, न बुढ़िया को, दोनों ही उसके लिए बोझ हैं। उसका प्राकृतिक जुड़ाव युवती के साथ है वह भी अपनी एकमात्र मिल्कियत बनाकर।"[105] ये सभी मिलकर सीमोन द बोउवार की बात को मजबूती प्रदान करते हैं कि,- "स्त्री पैदा नहीं होती, बल्कि उसे बना दिया जाता है।"[106]

भारतीय समाज में स्त्री की दरिद्रता का सबसे बड़ा कारण आर्थिक रूप से सशक्त न होना है क्योंकि आर्थिक परिस्थिति यहाँ सभी परिस्थितियों में परिवर्तन कर देती हैं इसके अभाव में शिक्षा और सामाजिक स्थिति दोनों प्रभावित होती हैं लेकिन मानसिक छटपटाहट और गहरी होती जाती है। जिसका मूल्यांकन करना कठिन होता जाता है।

अतः स्त्री-पुरुष के अंतर्विरोध को खत्म करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है, क्योंकि स्त्री सभ्यता के शुरुआती दौर में ही शांत-सम्मोहन की भूमिका निभाती आयी है, जिससे पुरुष ने उसे देवी की छवि में, माँ की छवि में रहस्य पूर्ण तरीके से रखा है। वह कभी देवी मानकर पूजा

---

[104]राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली , प्रथम संस्करण : 2011,पृष्ठ संख्या – 21

[105] राजेन्द्र यादव , आदमी की निगाह में औरत , राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली ,संस्करण : 2011 , पृष्ठ संख्या – 27

[106] स्त्री : उपेक्षिता सीमोन द बोउवार, द सेकंड सेक्स, हिंदी पाकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड , नवीन संस्करण : 2002, पृष्ठ संख्या 2

करता है तो कभी दमन और शोषण करता रहा है। एक तरफ तो मातृदेवोभव, पितृदेवोभव, आचार्य देवो भव कहकर माता का स्थान गुरु और पिता से श्रेष्ठ मानता है तो वही दूसरी तरफ कन्या, बहन और अन्य रूप को निम्नतर मानता है। जहाँ स्त्री को पिता और भाई के अधीन बताया गया है। इस संदर्भ में मनुस्मृति में लिखा गया है,-

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।"[107]

मनु के अनुसार जहाँ स्त्रियों का आदर सम्मान होता है वहाँ देवता रमण (निवास) करते हैं और जहाँ स्त्रियों का निरादर होता है वहाँ सब काम निष्फल हो जाते हैं। जिस देश में स्त्रियाँ कष्ट पाती हैं वहाँ का शासन असफल हो जाता है। वहीं दूसरी तरफ मनु यह कहते हैं कि स्त्री कभी स्वतंत्र नहीं रह सकती। बचपन में उसे पिता का आश्रय चाहिए, युवावस्था में पति का और वृद्धावस्था में पुत्रों का आश्रय चाहिए । अतः स्त्री का किसी न किसी पुरुष पर आश्रित होना ही उसकी नियति बन गई थी। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर शालिनी कौशिक लिखती है,- "आज मैं आप सभी को जिस विषय में बताने जा रही हूँ उस विषय पर बात करना भारतीय परंपरा में कोई उचित नहीं समझता क्योंकि मनु के अनुसार कन्या एक बार ही दान दी जाती है किन्तु जैसे-जैसे समय पलटा वैसे-वैसे ये स्थितियाँ भी परिवर्तित हो गयी। महिलाओं ने इन प्रथाओं के कारण [प्रथाओं ही कहूँगी कुप्रथा नहीं क्योंकि कितने ही घर इन प्रथाओं ने बचाएं भी हैं] बहुत कष्ट भोगा है।"[108] निश्चित रूप से भारतीय परम्परा में महिलाओं की स्थिति बड़ी ही दयनीय रही है, परिवार में उसका स्थान एक वस्तु की तरह रहा है।

---

[107] पूर्व संस्कृताचार्य बी.एस.रावत (सम्पा) मनुस्मृतिः, पण्डित रामेश्वर भट्टकृतया 'सरला'- भाषा टीकया समलंकृता , तृतीय अध्याय ,श्लोक संख्या -56 ,सम्यक प्रकशन ,नई दिल्ली ,प्रथम सम्यक संस्करण - 2015,पृष्ठ संख्या-91

[108] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/02/vivah-vichhedtalaq-aur-mahila-adhikar.html Shalini kaushik at 2/08/2019 09:26:00 PM

रामायण, महाभारत की बात करें तो एक आदर्श समाज व्यवस्था में तुलसीदास जहाँ 'ढोल, गंवार, शूद्र, पशु और नारी को दंड देने का विधान बताते हैं अर्थात् स्त्री को पशु के समान दंड देने योग्य बताते हैं। इसी तरह महाभारत की बात करें तो उसमें स्त्री के विविध रूप दिखाई पड़ते हैं। मत्स्यगंधा , सत्यवती, कुंती आदि स्त्रियों में विवाह से पूर्व संतान उत्पन्न का उल्लेख मिलता है तो दूसरी ओर अहिल्या, सावित्री जैसी पतिव्रता स्त्रियों का भी उल्लेख मिलता है और ऋषि-मुनियों का तप भंग करने हेतु रम्भा, उर्वशी, मेनका जैसी स्त्रियों का भी उल्लेख मिलता है।

रामायण, महाभारत में भी स्त्री को तप, त्याग, नम्रता, पतिसेवा और गृहस्वामिनी के रूप में ही चित्रित किया गया है। इस तरह इस युग में पतिसेवा और आज्ञा पालन ही स्त्री का प्रमुख गुण बताया जाता रहा है। यही कारण है कि पांडवों द्वारा द्रौपदी को चौपड़ में दांव पर लगा दिया जाता है जबकि द्रोपदी चौपड़ में सम्मिलित नहीं थी। यह दृश्य पत्नी पर पति के मनमाने अधिकारों की पुष्टि करता है, जो पुरुष सत्ता के वर्चस्व को व्यक्त करता है, जहाँ स्त्री उपभोग की वस्तु बनकर रह गई है।

मध्यकाल में मुगल शासन के दौरान भारतीय स्त्रियों को कोठों तक पहुँचा दिया गया। कुछ को वेश्यावृत्ति में उतार दिया गया। कहा जाता है कि स्त्रियों ने वेश्यालय का मुहँ इसी काल में देखा। इन दिनों रानियों, सामान्य स्त्रियों का सुंदर होना पाप समझा गया और तबाही का कारण माना जाने लगा था।

इस संदर्भ में ब्लॉगर आशा रानी वोहरा लिखती हैं,- ''किसी भारतीय नारी के रूपवती होने की बात भी उन दिनों हाकिमों के कान में पहुँचना खतरे से खाली न रहा। उसके रूप को पर्दे में बंद रखने की जरूरत पड़ गई थी। फिर भी पता चलते ही उसे पकड़ मंगवाया जाता था।

रानी पद्मिनी पर अलाउद्दीन की नजर पड़ना ही सैकड़ों राजपूतानियों के जौहर में जल मरने का कारण बना।"[109]

इसी तरह हम देखते हैं कि विदेशी आक्रमणों ने भारत में तबाही मचा रखी थी। दक्षिण भारत भी इस हमले से नहीं बच पाया था। जिस कारण सामाजिक कुरीतियाँ और अंधविश्वासों ने विसंगति पूर्ण वातावरण को जन्म देना प्रारंभ कर दिया। इतना ही नहीं इस काल में स्त्रियों को बलपूर्वक सती होने के लिए बाध्य किया जाता था। दूसरी तरफ पर्दा प्रथा की वजह से स्त्रियाँ शिक्षा से वंचित रह जाती थीं। शिक्षा विहीन स्त्रियाँ सत्ता के अधीन होकर शोषण का शिकार बनती जाती थी। इस तरह स्त्रियाँ पुरुषों के अधीन होती चली गई और घर की चारदीवारी में ही सिमट कर रह गयीं। परिणाम स्वरूप सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक भूमिकाओं से अनभिज्ञ होती चली गई। मध्यकाल में भक्ति आंदोलन ने स्त्रियों को धार्मिक कार्यों में शामिल तो कर लिया लेकिन स्त्री की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया। हालाँकि इतने शोषण के बावजूद भी विभिन्न क्षेत्रों में स्त्रियों ने अनेक कीर्तिमान स्थापित किए हैं, जिनमें रानी लक्ष्मीबाई, रानी दुर्गावती आदि का उल्लेख मिलता है।

4.2.2 आधुनिक काल में स्त्री

आधुनिक काल में भी स्त्री विभिन्न प्रकार की रूढ़ियों में जकड़ी हुई थी और शिक्षा आदि अधिकारों से वंचित थी। साथ ही परिवार में आर्थिक अधिकार विहीन भी थी। इन सब कारणों से स्त्री के स्वास्थ्य और मानसिकता पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। नवजागरण के पुरोधा भारतेंदु हरिश्चंद्र जिन्होंने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया, जिसमें स्त्री शिक्षा को केंद्र में रखकर बाला बोधिनी पत्रिका का संपादन किया। इस पत्रिका ने स्त्री सुधार में अहम् भूमिका निभाई।

[109] नारी शोषण : आईने और आयाम, आशारानी व्होरा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 1982, पृष्ठ संख्या - 15

इसी तरह राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, केशवचंद्र सेन, महर्षिदयानंद, महात्मा ज्योतिबा फुले, स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी के अलावा और भी अनेक नाम हैं, जिन्होंने स्त्री नवजागरण का शंखनाद किया। इन लोगों के साथ कुछ देशी-विदेशी साथियों ने भी अहम भूमिका निभाई जैसे डॉ. एनीबेसेंट, सरोजिनी नायडू, भगिनी निवेदिता आदि।

आगे चलकर 1905 में बंग-भंग के समय पूरे देश की स्त्रियाँ स्वदेशी आंदोलन में कूद पड़ीं। डॉ. एनीबेसेंट ने स्त्री उत्थान में बड़ा योगदान दिया। इन्होंने मार्गरेट कजिन्स और मार्गरेट नोबल (भगिनी निवेदिता) के साथ मिलकर 'वेक अप इंडिया' नाम से एक आंदोलन का सूत्रपात किया जो बाद में 'होम रूल लीग' में परिणत हो गया था, जिसे नारी जागृति का नूतन आयाम माना जाता है।

1980 में भारतीय स्त्री-आंदोलन में व्यापक चर्चा का विषय 'लिंग आधारित भेदभाव' को बड़े ही पुरजोर तरीके से उठाया गया, जिसने असमानता और भेदभाव को ख़त्म करने के लिए तथा स्त्रियों को समान अधिकार दिए जाने का आह्वान किया। इतना ही नहीं स्त्रियों ने शराब खोरी, उत्पीड़न विरोधी तथा दहेज प्रथा, बलात्कार विरोधी आदि अभियानों में जमकर हिस्सा लिया और पुरुष को एहसास दिलाया कि स्त्री भी उन्हीं की तरह मानव जाति का हिस्सा हैं, जिसे सम्मान, स्वाभिमान, बराबरी के अधिकार और स्वस्थ जीवन जीने का पूरा अधिकार है और वह अपना पूरा अधिकार चाहती है।

भारतीय स्त्री की ख़ासियत यह रही है कि वह अपने अधिकार की लड़ाई के लिए पुरुष के खिलाफ नहीं हुई बल्कि उस व्यवस्था के खिलाफ खड़ी है जो पितृसत्तात्मक है, जिसे वह बदलने की कोशिश कर रही है। अतः भारत में स्त्री मुक्ति एक सामाजिक स्थिति है कोई नारा नहीं है। इस तरह हम देखते हैं कि समाज में जो परिवर्तन होते हैं वह सामाजिक विसंगतियों में सुधार और बौद्धिक स्तर के विकास से ही संभव होते हैं।

स्त्री विमर्श की इस परंपरा और इतिहास पर पाश्चात्य दृष्टिकोण से विचार करें तो- स्त्री हर देश में दलित है, कुंठित रही है, उसे घर की चारदीवारी में सीमित रखा जाता रहा है। प्राचीन रोमन, यूनानी साम्राज्य में स्त्रियाँ पुरुष की संपत्ति मात्र थी। जापान में स्त्रियाँ धार्मिक अधिकारों से वंचित थी। चीन, स्पेन, इटली, अरबवासियों की नजर में स्त्री पुरुष की दासी समझी जाती रही हैं यही कारण था कि चाहे-अनचाहे उन्हें पुरुष की मानसिकता के अनुरूप चलना पड़ता था।

निष्कर्ष रूप में कहें तो स्त्री वैदिक काल से ही पतन और हिंसा का शिकार होती रही है। महाभारत में संपत्ति समझकर जुए की बाजी में दांव पर लगती रही तो मध्यकाल में अलाउद्दीन जैसे आक्रमणकारियों से जूझती रही, वहीं दूसरी तरफ घोर विषमता, पर्दा-प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा, जौहर प्रथा का शिकार होती रही तथा शिक्षा से भी वंचित होने की वजह से मानसिक और बौद्धिक दुर्बलता का शिकार होती चली गयी।

आज की स्त्री के बारे में बात करें तो वह अपनी जरूरतों को महसूस करती हैं और उनको पूरा करने में अपना ध्यान लगाती हैं। समानता के अधिकारों के लिए वह अपने अस्तित्व को एक नया रूप दे रही हैं। वह पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने का प्रयास कर रही हैं। प्रभा खेतान के शब्दों में कहें तो पुरुष सत्तात्मक समाज ने स्त्री के प्रत्येक पक्ष को अपने मनमाने तरीके से विकसित और व्याख्यायित करने का प्रयास किया है। यह सब कुछ स्त्री को पुरुष के अधीन बनाए रखने की एक कवायद रही है तथा स्त्री का सब कुछ पुरुष के संदर्भ में ही परिभाषित किया जाना यह दृष्टि रही है। स्त्रियों को इतना पराश्रित बनाया गया कि उनका पुरुष के बिना जीना संभव नहीं है। पुरुष के बिना स्त्री, बेटी, पत्नी और माता तीनों ही रूपों में अधूरी मानी जाती है।

4.2.3 चयनित ब्लॉग में स्त्री छवि

स्त्री विमर्श में स्त्री सशक्तिकरण का विशेष महत्त्व है। इस सन्दर्भ में ब्लॉग लेखकों का मानना है कि स्त्री सशक्तिकरण की अवधारणा पुरुष आश्रित नहीं है। सामान्य रूप से स्त्री सशक्तिकरण की अवधारणा को पुरुष विरोधी तथा पुरुष अधिकारों के विभाजन की अवधारणा के रूप में देखा जाता है लेकिन स्त्री सशक्तिकरण की अवधारणा न तो पुरुष केन्द्रित है और न ही पुरुष आश्रित। इस सन्दर्भ में ब्लॉग लेखिकाओं का मानना है कि नारी और पुरुष इस दुनिया में बराबर हैं और ये बराबरी उन्हें प्रकृति से मिली है। अतः स्त्री और पुरुष दोनों को समाज में बराबरी का अधिकार मिलना चाहिए। इस सन्दर्भ को विभिन्न ब्लॉगों के माध्यम से विविध रूपों में वर्णित किया गया है जिसके द्वारा हम 'स्त्री विमर्श' को सरलता से समझ सकते हैं ।

4.2.4 नारी सशक्तिकरण और ब्लॉग

नारी सशक्तिकरण का तात्पर्य है- समाज को पारंपरिक पितृसत्ता के उस दृष्टिकोण के प्रति जागरूक करना, जिसने महिलाओं की स्थिति को सदैव कमतर मानने का प्रयास किया जाता है। आधुनिक काल में महिला सशक्तिकरण की दिशा में विभिन्न संस्थाओं द्वारा समाज को जागरुक करने के तमाम प्रयास किये गये हैं। जिनमें वैश्विक स्तर पर विभिन्न संस्थाओं द्वारा सञ्चालित विविध नारीवादी आंदोलनों और यू.एन.डी.पी. जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने महिलाओं को सामाजिक समता, स्वतंत्रता और न्याय के राजनीतिक अधिकारों के प्रति जागरूक करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। महिला सशक्तिकरण को परिभाषित करते हुये

कहा जाता है कि,- “महिला सशक्तिकरण आध्यात्मिक, शारीरिक तथा मानसिक, सभी स्तर पर महिलाओं में आत्मविश्वास पैदा कर उन्हें सशक्त बनाने की प्रक्रिया है।”[110]

अतः नारी सशक्तिकरण की समर्थक नारियाँ किसी के सर की बोझ नहीं हैं क्योंकि वह नारी और पुरुष को अलग मानती है इसलिए उनकी भूमिका को अलग रूपों में देखती हैं। वह पुरुष को मालिक नहीं मानती हैं, वे अपने घर को अपना कर्म युद्ध मानती हैं। इस सन्दर्भ में ‘नारी’ नामक ब्लॉग की एक पोस्ट ‘नारी सशक्तिकरण की समर्थक नारियाँ किसी की आँख की किरकिरी नहीं बनना चाहती हैं’ में लिखती हैं,- “नारी सशक्तिकरण की समर्थक महिला चाहती हैं कि समाज में ये सोच हो कि जो पुरूष के लिये सही, वही नारी के लिये सही है। ‘नारी सशक्तिकरण’ के लिये जो भी अभियान चलाये जा रहे हैं, वह ना तो पुरुष विरोधी हैं और ना ही नारी समर्थक। वह सारे अभियान केवल मूलभूत अधिकारों को दुबारा से ‘बराबरी’ से बांटने का प्रयास हैं।”[111]

नारी सशक्तिकरण का विचार अपने आप में बहुआयामी है। नारी जीवन के बहुआयामी रूपों के अनुरूप इस अवधारणा पर विचार किया जाना आवश्यक है। इस अवधारणा का जितनी सूक्ष्मता से अवलोकन करेंगे उतना ही नारी सशक्तिकरण का विचार तथा उसकी आवश्यकता स्पष्ट होगी। ब्लॉग लेखकों तथा लेखिकाओं द्वारा नारी सशक्तिकरण के विचार की अभिव्यक्ति कई रूपों में की गयी है।

प्राचीन काल के इतिहास के पन्ने स्त्री शोषण की गाथाओं से भरे पड़े हैं तथापि उसमें कुछ काल खंड ऐसा भी है जो स्त्री शोषण की गाथाओं से मुक्त है तथा नारी सशक्तिकरण की दृष्टि से गौरवशाली कहा जा सकता है। वैदिक काल जो कि भारतीय समाज का आरम्भिक

---

110 विकिपीडिया . कॉम , date- 03/04/2019, time- 07:26am

111 http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_13.html 6/01/2019 09:20:00 AM

काल माना जा सकता है इस समय नारी का स्थान बहुत ऊंचा माना जाता था। नारियाँ बहुत विदुषी और नियम पूर्वक अपने पति के साथ पूजा, हवन आदि में सम्मिलित होती थीं। उन्हें वर चुनने का अधिकार था और संपत्ति में भी उनका हिस्सा होता था। आगे चलकर मध्यकाल में स्थिति बदलती है।

मध्यकाल में उन्हें पुरुष की संपत्ति समझा जाने लगा। इसके बावजूद भी पुराने समय में भी सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक शोषण की शिकार नारियों ने जब–जब अपनी पहचान बनानी चाही उन्हें सफलता मिली है। इस संदर्भ में ब्लॉगर रंजू भाटिया अपनी एक पोस्ट 'वैदिक काल से अब तक नारी की यात्रा ..' में लिखती हैं,- "वैदिक काल में नारियाँ बहुत विदुषी और नियमपूर्वक अपने पति के साथ मिल कर हवन आदि में सम्मलित रहती थीं। वर तलाश करने में कन्या की इच्छा का ध्यान रखा जाता था और यदि कन्या के पिता को योग्य वर नहीं मिलता था। उसके साथ उसका विवाह नहीं किया जाता था। बहुत सी स्त्रियाँ उस वक्त अविवाहित भी थी जो अपने पिता के घर में सम्मान पूर्वक रहती थी। सुबह उठकर जिसका जो काम होता था उसके लिए उसको नियुक्त करती थीं पिता की संपत्ति में उनका भी हिस्सा होता था बाल-विवाह की प्रथा तब नहीं थी।" [112]

इसी सन्दर्भ में वे आगे लिखती हैं कि,- "मुग़ल काल में नूरजहाँ, रजिया बेगम उस वक्त की उदाहरण है। मध्यकाल में ही मीरा ने अकेले ही उस वक्त की शोषक व्यवस्था को बदलने का साहस किया था। बौद्ध धर्म में भी मठों में रहने वाली विदुषियों के लिए अच्छी शिक्षा की व्यवस्था थी।"[113] लेकिन ये स्थिति सार्वकालिक तथा सर्वजनीन नहीं थी। समय के साथ स्थिति बदलती गयी तथा स्त्री जीवन तमाम अमानवीय बन्धनों में बंधता चला गया।

---

[112] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_30.html रंजूभाटिया at 6/07/2019 08:26:00 AM

[113] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_30.htm रंजूभाटिया at 6/03/2019 08:26:00 AM

भारतीय समाज में स्त्री पर अत्याचार और शोषण लंबे समय से होता रहा है। कुछ पुरुषों के द्वारा शोषण किया गया तो कुछ स्वयं की शक्ति का अनुमान लगाने के लिए महिलाओं ने महिलाओं का शोषण किया, क्योंकि महिला इस शक्ति का परीक्षण पुरुष पर आसान नहीं था इसलिए महिला ही महिला का शोषण करने लगी। इसको हम एक उदाहरण के माध्यम से समझ सकते है। जैसे पहले से शोषित हुई महिला की स्थिति परिवार में थोड़ी सुदृढ़ हो जाती है तो वह परिवार में नई आई हुई सदस्यों पर आजकल की रैगिंग की तर्ज पर अपनी शक्ति का परीक्षण करती है।

इस तरह महिला के द्वारा महिला का शोषण शुरू होता है। इस परंपरा पर पुरुष यह कहकर पल्ला झाड़ लेता है कि 'स्त्री ही स्त्री की शत्रु' है परंतु विचार करने वाली बात यह है कि अपने बच्चे की रैगिंग में यदि टांग टूट जाए या जान चली जाए तो आप महाविद्यालय प्रशासन को यह कह कर कि 'विद्यार्थी ही विद्यार्थी का बड़ा शत्रु' है छोड़ नहीं देते, उस पर केस करते हैं, हर्जाना लेते हैं। तो फिर परिवार में हुए अत्याचार से स्वयं परिवार का सर्वेसर्वा (मुखिया) होने के नाते आप बरी नहीं हो सकते।

इस संदर्भ में ब्लॉगर घुघूती बासूती अपनी पोस्ट 'स्त्रियों के मुद्दे पर : कुछ उत्तर, कुछ और प्रश्न! में विचार करते हुए लिखती हैं,- "स्त्री को घर से निकाला गया , जलाया गया , मारा गया , मानसिक व शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया गया। उसे वश में रखने के लिए कभी उसे कुछ लालच दिया गया तो कभी उससे कुछ सुविधाएँ छीन ली गईं। लालच के रूप में सुन्दर रंग बिरंगे वस्त्र, आभूषण, रंगीन सौभाग्य चिन्ह व सब प्रकार का भोजन ग्रहण करने का अधिकार। दंडित करने व लाइन में रखने के लिए यही सब सुविधाएँ उससे छीन ली जाती थीं। उसे बताया जाता था कि ये सब सुख उसे तभी तक प्राप्य हैं जब तक वह अपने जीवन के

आधार, अपने स्वामी, अपने पति को जीवित व प्रसन्न रख पाएगी। ये सब निर्जला व्रत उपवास इसी भय की देन हैं।"[114]

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर सुजाता का मानना है कि स्त्री का कोई धर्म नहीं होता। हर धर्म ने स्त्रियों के लिए बेड़ियाँ ही बनाई है। धर्म, ताकत और सत्ता यह एकही पलड़े में साथ-साथ झूलते हैं। धर्म उसी को ताकत देता है जिसके पास सामर्थ्य है। यह कहना गलत नहीं होगा कि कोई भी धर्म स्त्रियों को समर्थ, सबल, समान मनुष्य नहीं बनाता। इसलिए कौन सा धर्म स्त्री के पक्ष में है यह एक बड़ा सवाल है। इस संदर्भ में ब्लॉगर सुजाता अपनी पोस्ट 'स्त्री का कोई धर्म नहीं होता !'में कहती हैं कि,- "मेरे तई यह बात सिरे से बेकार है कि कौन सा धर्म स्त्री के पक्ष में है! क्योंकि दरअसल कोई धर्म ऐसा है ही नहीं।"[115]

अतः सुजाता का मानना है कि धर्म किसी ईश्वर या उसके प्रतिनिधि ने नहीं बनाया है इस संदर्भ में ब्लॉगर सुजाता आगे लिखती हैं,- "धर्म किसी ईश्वर या उसके प्रतिनिधि ने बनाया है। मैं नकारती हूँ कि ईश्वर भी कोई है! पुरानी दलील ही सही पर सच है कि ईश्वर पुल्लिंग है, धर्म ग्रंथों के रचयिता भी पुरुष ही थे, उपदेश देने वाले पैगम्बर या महापुरुष ही थे। मुझे यह कहने में कतई संकोच नहीं कि धर्म ऐसी संरचना है जिसे पुरुषों ने अपने हितों की रक्षा और सुविधाओं के लिए बनाया। इसलिए किसी धर्म में स्त्री के प्रति समानता-संवेदनशीलता कहीं दिखाई नहीं देती।"[116]

इसमें ध्यान देने वाली बात यह है कि किसी भी रस्म का कोई कानूनी साक्ष्य शायद ही किसी बहू के पास हो। इससे यह बात प्रमाणित होती है कि बेटी को परिवार में बराबर का हिस्सा देने की बात तो होती है लेकिन बहू के लिए परिवार में किसी भी हिस्से की बात नहीं

---

[114] http://ghughutibasuti.blogspot.com/2007/09/blog-post_07.html,07/10/2019, 3:57 a.m.

[115]http://sandoftheeye.blogspot.com/2010/04/blog-post_17.html ,date-2/06/2019,time-10:52p.m

[116]http://sandoftheeye.blogspot.com/2010/04/blog-post_17.html ,date-2/06/2019,time-10:58p.m

होती और कई बार तो ऐसा होता है जब बहन को हिस्सा मिलने की बात होती है तो भाई में नाराजगी भी देखने को मिलती है।

इस संदर्भ में ब्लॉगर अपनी पोस्ट 'बहु के क़ानूनी अधिकार' में लिखती हैं,– "मुँह दिखाई मे मिले गहने अगर सास के पास हैं तो भी वो बहू की सम्पत्ति हैं और सास की मृत्यु के पश्चात उन पर बेटे का नहीं बहू का 'कानूनी अधिकार है।"[117]

पुरुष प्रधान समाज में नारी सदैव पुरुषों के अधीन रही है। पुरुष उस पर अपना एकाधिकार समझता रहा है। यहाँ तक कि नारी के शरीर पर भी वह अपना अधिकार समझता रहा है, और उसके पहनावे और पोशाक को भी अपनी इच्छा के अनुरूप ढालता रहा है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर सुमन जिंदल अपनी एक पोस्ट 'नथ विद्रूप सोच जो स्त्री के वर्जिन होने को महिमा मंडित करती थी' में लिखती है,– "नथ ही नहीं हर वो गहना जो नारी को उस समय पहनाये जाये जब उसका विवाह हो रहा हैं और उस समय उतरवा लिया जाए जब वो विधवा हो जाती हैं केवल और केवल नारी के जीवन में विवाह और पति का महातम बना रहे इस लिये ही होता हैं अन्यथा मंगल सूत्र , बिछिये , चूड़ियां इत्यादि सुहागन का प्रतीक नहीं होती। नारी के अपने लिये ये कुछ भी नहीं हैं। सब उसके जीवन मे जुड़े पुरुष के लिये हैं और जिस दिन वो पुरुष नहीं रहता ये सब उसके लिये बेकार समझा जाता हैं।"[118] न जाने किस तरह की यह परम्परा है। और क्यों है? गौर करने वाली बात यह है कि हमारे समाज की यह विडम्बना आधी आबादी के साथ है।

दुनिया की आधी आबादी नारी की है, जिसे नर की आत्मा भी कहा जाता है। जिसके बगैर नर का जीवन अधूरा माना जाता है। नारी और पुरुष समाज रूपी रथ के दो पहिये हैं

[117] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/05/blog-post_22.html at 5/02/2019, 11:20P.M

[118] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/04/blog-post_10.html सुमन जिंदल at 4/10/2011 07:00:00 AM

जिनके बगैर संसार का चलना सम्भव नहीं है। परन्तु विडंबना यह है कि पुरुष नारी को संतानोत्पत्ति का साधन मात्र मनाता है, जिसका विरोध स्त्रीवादी लेखिकाओं ने पुरजोर तरीके से किया है तथा अपनी बात को समाज के सम्मुख बड़े ही दृढ़ता के साथ रखा है। चाहे वह साहित्य हो या ब्लॉग हो या अन्य विधा। सभी मंचों पर 'स्त्री' ने अपनी बात को मजबूती से रखने का प्रयास किया है।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर 'रंजू भाटिया' अपनी पोस्ट 'वैदिक काल से अब तक नारी की यात्रा ..' में लिखती हैं कि,– "वही नारी जो वैदिक युग में देवी थी धीरे-धीरे अपने पद से नीचे खिसकने लगी मध्यकाल में जब सामन्तवादी युग आया तो दुर्बल लोगों का शोषण किया जाने लगा उसके लिए जंगली कानून बने और उसी कानून में नारी भी आ गयी। नारी जाति को सामूहिक रूप से ही पतित अनाधिकारी बताया गया उसी विचारधारा ने नारी के मूल अधिकारों पर प्रतिबंध लगा कर पुरूष को हर जगह बेहतर बता कर उसको इतना शक्तिहीन, विद्याहीन, साहसहीन कर दिया कि नारी समाज के लिए तो क्या उपयोगी सिद्ध होती अपनी आत्मरक्षा के लिए भी पुरुष पर निर्भर हो गई।"[119]

अधिकतर महिलाओं का यह मानना है कि घर की शांति के लिए पुरुष के अहम् को बढ़ावा देते रहो और अपनी जिंदगी शांति से काटती रहो। इस धारणा की वजह से नारी के व्यवहार में परिवर्तन होता है और नारी अपने अधिकार की जगह एक तरह की कूटनीति का इस्तेमाल करती हैं परंतु वह यह भूल जाती है कि जिंदगी जीने के लिए बनी है काटने के लिए नहीं। इस संदर्भ में नारी ब्लॉग में उद्धृत एक पोस्ट 'औरतो जैसी बात मत करो' में ब्लॉगर विचार करते हुए लिखती हैं,-"बहुत सी महिला इस बात को मानती हैं कि 'घर' की शान्ति के लिये पुरुष के अहम् को बढ़ावा देते रहो और अपनी जिन्दगी 'शान्ति' से काट लो। वो अपनी

[119] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_30.html रंजू भाटिया at 06/02/2019, 08:26:00 AM

जगह एक कूटनीति का इस्तेमाल करती हैं पर ये भूल जाती हैं कि जिन्दगी जीने के लिये मिली है, काटने के लिये नहीं और बिना कूटनीति के भी नारी को जिन्दगी जीने का अधिकार ही 'समानता' की पहली सीढ़ी हैं। उनकी ये सोच आने वाली नारी पीढ़ी के लिये सबसे ज्यादा हानिकारक है, क्योंकि ये सोच नारी को एक कुचक्र मे फसाती हैं और 'तिरिया चरित्र' की उपाधि दिलाती है।"[120]

सर्वप्रथम हमें स्त्रियों के बीच जाति धर्म और वर्ग के बीच की संकीर्णताओं को कम करना होगा क्योंकि इन संकीर्णताओं ने न सिर्फ औरत को कमजोर किया है बल्कि उन्हें यथास्थितिवादी बना दिया है और उनमें जड़ता का भाव भी भर दिया है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर (चूंकि पोस्ट में ब्लॉगर ने अपना नाम नहीं दिया है इसलिए) ने अपनी एक पोस्ट 'क्यों न स्त्री-शिक्षा को हम मिशन बना लें' में कहती है,– "हमें इस धारणा को जड़ से खत्म करना होगा कि धर्म, जाति और वर्ग के हित औरत के हित से पहले नहीं हैं। इन संकीर्णताओं के बीच औरत अपने हितों को दरकिनार कर देती है। क्योंकि अंधा समाज उससे यह सब करने और मानने के लिए कहता है। कहता ही नहीं, बल्कि दबाव भी बनाता है। औरत को अब दबाव में रहने और जीने की आदत को त्यागना होगा। क्योंकि इस दबाव में न कोई सुख है, न ही प्रगति। ये संकीर्णताएं तभी मिट सकती हैं, जब हम प्रत्येक नारी को शिक्षित करने-बनाने का संकल्प लेंगे।"[121]

ब्लॉगर सुजाता लिखती है कि स्त्री का कोई धर्म नहीं होता। हर धर्म ने स्त्रियों के लिए बेड़िया ही बनाई है। धर्म, ताकत और सत्ता यह एक ही पलड़े में साथ-साथ झूलते हैं। धर्म उसी को ताकत देता है जिसके पास सामर्थ्य है। यह कहना गलत नहीं होगा कि कोई भी धर्म

[120] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/07/blog-post_3932.html 24/07/2019 04:12:00 PM

[121] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_27.html 9/02/2019, 10:41:00 AM

स्त्रियों को समर्थ, सबल, समान मनुष्य नहीं बनाता। इसलिए कौन सा धर्म स्त्री के पक्ष में है यह एक बड़ा सवाल है।

हमारे समाज में आर्थिक और राजनीतिक सशक्तिकरण के ढेरों उदाहरण के बावजूद लिंग भेद की स्थिति में कोई खास परिवर्तन नहीं नजर आता है, जिसका उदाहरण हम पत्र-पत्रिकाओं और अखबारों के विज्ञापनों के माध्यम से देख सकते हैं। इस संदर्भ में ब्लॉगर मोनिका गुप्ता अपनी पोस्ट 'वूमन नहीं सुपर वूमन चाहिए' में लिखती हैं,- "आर्थिक और राजनीतिक सशक्तिकरण के ढेरों उदाहरण के बावजूद लिंग भेद की स्थिति जस की तस बनी हुई है। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण हमें वैवाहिक विज्ञापनों में देखने को मिलता है। यदि आप किसी दैनिक अखबार या पत्रिका में प्रकाशित होने वाले विज्ञापन पर गौर करें तो लिंगभेद का सहज एहसास होगा। लंबी, छरहरी, गोरी, सुंदर, कॉन्वेंट एड्यूकेटेड, कामकाजी, घर मैनेज करने वाली और इन सब पर घरेलू। अधिकतर पत्र-पत्रिकाओं में इन शब्दों से निकलने वाले विज्ञापन यह आभास कराते हैं जैसे शादी के लिए वूमन नहीं सुपर वूमन चाहिए।"[122]

आजकल आदमी को संस्कारों वाली स्त्री चाहिए, जो सर्वगुण संपन्न हो। घर के कामकाज को संभालने वाली हो तथा घर परिवार की देखभाल में सक्षम हो। अर्थात् पूरे घर की जरूरतों के हिसाब से खरी उतरने वाली हो। इस संदर्भ में ब्लॉगर अपनी पोस्ट 'वूमन नहीं सुपर वूमन चाहिए' में लिखती हैं,- "आज आदमी संस्कारों से घरेलू लड़की तो चाहता है लेकिन उसे कामकाजी भी होना है, घर को मैनेज करने वाली भी होना है, बच्चों और सास-ससुर की देखभाल करने वाली भी होना है। केवल सुपर वाइफ ही नहीं सुपर मॉम, ग्लैमर डॉल, प्रोफेशनल और एक लड़की को बाहर से अंदर तक सभी कामों में दक्ष भी होना है।

[122] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_06.html 9/06/2019, 01:45:00 PM

जिसे अंग्रेजी भी बोलना है और घूंघट में भी रहना है।"[123] नारीवाद का सबसे बड़ा योगदान सेक्स और जेंडर में भेद स्थापित करना है। सेक्स एक जैविक शब्दावली है जो स्त्री और पुरुष में जैविक भेद को दर्शाती है। वहीं जेंडर शब्द स्त्री और पुरुष के बीच भेदभाव को दर्शाता है। जेंडर शब्द इस बात को दर्शाने का काम करता है कि जैविक भेद के अतिरिक्त जितने भी भेद हैं, वे प्रकृति द्वारा निर्मित भेद नहीं है बल्कि समाज द्वारा निर्मित है और जो भेद समाज द्वारा निर्मित है उसे सुधारा जा सकता है।

इस संदर्भ में ब्लॉगर मुक्ति अपनी एक पोस्ट 'सेक्स और जेंडर में अंतर' में लिखती हैं,- "समाज में स्त्रियों के साथ होने वाले भेदभाव के पीछे पूरी समाजीकरण की प्रक्रिया है, जिसके तहत बचपन से ही बालक-बालिका का अलग-अलग ढंग से पालन पोषण किया जाता है और यह फर्क कोई भी अपने आसपास देख सकता है। लड़कियों को घर के अंदर का कामकाज अच्छी तरह सिखाया जाता है, जबकि लड़कों को बाहर का। लड़कियों को दयालु, कोमल, सेवाभाव रखने वाली और घरेलू समझा जाता है और लड़कों को मजबूत, ताकतवर, सख्त और वीर समझा जाता है।"[124]

हालाँकि अब इन स्थितियों में बहुत सुधार भी हुआ है, लेकिन हर जगह, हर स्तर पर ऐसा नहीं हुआ है। यहाँ एक बात विचार करने वाली है कि किसी भी तरह के काम को करने में कोई बुराई नहीं है। इसलिए स्त्री हो या पुरुष सभी को सब तरह का काम करना चाहिए , लेकिन कामों के इस वर्गीकरण की वजह से बहुत सी लड़कियों की प्रतिभा दब जाती हैं और बहुत से लड़के मानसिक विकृति का शिकार हो जाते हैं। जैसे कि यह किचन का काम है तो लड़कियों वाला काम है। यह रोने धोने वाला भाव है, तो लड़कियों वाले भाव हैं आदि।

---

[123] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_06.html 9/06/2008 01:45:00 PM

[124]http://feminist-poems-articles.blogspot.com/2009/04/blog-post_12.html 4/12/2019 11:35:00 am by mukti

जबकि सभी मनुष्य हैं , सभी में सुख – दुःख का एक जैसा भाव जागृत होता है और उसे हर किसी को व्यक्त भी करना चाहिए। भाव व्यक्त ना होने की वजह से पुरुष में कुंठा व्याप्त हो जाती है।

इस कुंठा की वजह से पुरुष का हृदय कठोर हो जाता है और वह चाह कर भी रो नहीं पाता है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर मुक्ति अपनी पोस्ट 'सेक्स और जेंडर में अंतर' में लिखती हैं,- "सामान्यतया छोटे लड़कों को यह कह कर चुप कराते हैं कि मर्दों को रोना नहीं चाहिए, हम उनसे भावनात्मक बातें नहीं करते, जिससे वे अंदर ही अंदर घुटने रहते हैं। कुछ लड़के बहुत भावुक होते हैं और अक्सर अपनी बात कह कर इसलिए रो नहीं पाते कि लोग उन्हें चिढ़ायेंगे। कुल मिलाकर, जेंडर-आधारित भेदभाव न सिर्फ औरतों को, बल्कि पुरुषों को भी एक बने-बनाए ढाँचे में जीवन जीने के लिए मजबूर कर देता है।"[125]

किसी भी महिला के लिए बलात्कार का शिकार होना उसके जीवन का सबसे बड़ा हादसा होता है। शायद उसके लिए इससे बड़ी त्रासदी कोई नहीं हो सकती। लेकिन हमारे समाज की विडंबना यही है कि बलात्कार के मानलें दिन प्रति-दिन बढ़ते ही जा रहे हैं। जो अक्सर ग़लतफहमियों व मिथकों से घिरा रहता है। जैसे एक आम धारणा है कि बलात्कार बुनियादी तौर पर एक सेक्सुअल एक्ट है, जबकि इसमें जिस्म से ज्यादा रूह को चोट पहुँचती है। जिसका जख्म किसी को दिखाई नहीं देता है। इसमें महिला का मन , हिम्मत, हौसला सब टूट जाता है, और जो लोग बलात्कार को सेक्सुअल एक्ट मानते हैं वह लोग अनजाने में ही लेकिन पीड़िता के साथ बड़ी नाइंसाफी कर बैठते हैं। इस वजह से उसके इरादे, ड्रेस और एक्शन सब संदेह के घेरे में आ जाता है। जिस वजह से लड़की के परिवार वाले और दोस्त भी उसे गलत समझ लेते हैं।

---

[125] http://feminist-poems-articles.blogspot.com/2009/04/blog-post_12.html 4/12/2009 11:35:00 am by mufti

परिणाम स्वरूप महिला के चरित्र पर ही प्रश्न किये जाते हैं और उसकी सेक्सुअल गतिविधि व निजी जीवन को पब्लिक कर दिया जाता है और इसकी वजह से बदनामी, अपमान और शर्मिंदगी का अहसास होता है। उसके डर की वजह से बहुत सी महिलाएं बलात्कार की शिकार होने के बावजूद भी रिपोर्ट दर्ज नहीं कराती हैं। इस संदर्भ में ब्लॉगर कविता वाचकनवी अपनी एक पोस्ट 'बलात्कार की साइकोलॉजी - यह एक मनोवैज्ञानिक ट्रॉमा है' में लिखती हैं,- "एक आम मिथ है कि बलात्कार बुनियादी तौर पर सेक्सुअल एक्ट है, जबकि इसमें जिस्म से ज्यादा रूह को चोट पहुँचती है और रूह के जख्म दूसरों को दिखायी नहीं देते। बलात्कार एक मनोवैज्ञानिक ट्रॉमा है। इसके कारण शरीर से अधिक महिला का मन टूट जाता है। बहरहाल, जो लोग बलात्कार को सेक्सुअल एक्ट मानते हैं, वह अनजाने में पीड़ित को ही 'सूली' पर चढ़ा देते हैं। उसके इरादे, उसकी ड्रेस और एक्शन संदेह के घेरे में आ जाते हैं, न सिर्फ कानून लागू करने वाले अधिकारियों के लिए, बल्कि उसके परिवार और दोस्तों के लिए भी।"[126]

यदि आप किसी महिला को देखकर सीटी बजाते हैं, फिकरे कसते हैं, गाली देते हैं वह भी इसलिए क्योंकि वह महिला है तो यह यौन शोषण (सेक्सुअल हरासमेंट) माना जाता है। इतना ही नहीं स्त्री पुरुष में वाद-विवाद, बहस के दौरान भी यदि आप अपशब्द कहते हैं और वह अपशब्द 'लिंग' आधारित है तो वह सेक्सुअल हरासमेंट है।

किसी महिला को यह याद दिलाना कि महिला होने की वजह से उसके पास अक्ल नहीं है, जैसे 'औरतों जैसी बात करना' भी सेक्सुअल हरासमेंट कहा जाता है। सेक्सुअल हरासमेंट यानी 'जेंडर बायस' अर्थात् स्त्री को कमतर आंकना वह भी इसलिए क्योंकि वह स्त्री है। 'स्त्री' को कमतर आंकने की बात करें तो इसमें पुरुष ही नहीं बल्कि महिला भी स्त्री को कमतर ही

---

[126] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_13.html Kavita Vachaknavee at 9/11/2019 08:44:00 PM

आंकती है। इसमें उनका भी दोष नहीं है बल्कि समाज की संरचना ही ऐसी निर्मित है, जो स्त्रियों और पुरुषों को नारी के प्रति ऐसा रवैया अपनाने को बाध्य करती है।

हालाँकि समाज में औरतों के लिए समानता और स्वतंत्रता की खूब बातें की जाती हैं। जैसे भारतीय पुरुष कहते हैं कि हमारे यहाँ औरतों को देवी माना जाता है। हमें पश्चिम के देशों 'अमेरिका' आदि की नकल करने की जरूरत नहीं है क्योंकि वहाँ की संस्कृति में तलाक, रेप और औरतों के खिलाफ यौन हिंसा के मामले, भारत से बहुत ज्यादा होते हैं। अतः औरतों की सुरक्षा, सम्मान, और आदर-सम्मान के मामले में भारतीय समाज ज्यादा समृद्ध और सशक्त माने जाते है।

इस संदर्भ में ब्लॉगर 'मुक्ति' अपनी पोस्ट 'एक बेहतर समाज की कोशिश' में 'लिखती हैं कि,- "अमेरिका में यौन-हिंसा के मामले इसलिए ज्यादा होते हैं क्योंकि वहाँ यौन-हिंसा की परिभाषा बहुत व्यापक है। वहाँ की औरतें चुप नहीं रहतीं, विरोध करती हैं, वहाँ की पुलिस एफ. आई. आर. दर्ज करवाने में आनाकानी नहीं करती और वहाँ के न्यायालय निर्णय देने में इतनी देर नहीं लगाते और इस सबसे बढ़कर वहाँ का समाज यौन-हिंसा के लिए औरतों को ज़िम्मेदार नहीं मानता इसलिए औरतें भी अपने विरुद्ध अपराध को छिपाती नहीं हैं और औरतों ने भी कब, कहा कि उन्हें पश्चिम की तरह आज़ादी चाहिए। अरे आज़ादी तो हमारे संविधान ने हमें दी हुई है। किसी को उसे हमें देने की ज़रूरत नहीं है। बस एक सुरक्षित माहौल चाहिए, जिसमें हम उस आज़ादी का उपयोग कर सकें। और वो माहौल न अकेले पुलिस बना सकती है, न न्यायालय, न सरकार और न समाज ... सबको मिलकर बेहतर समाज बनाना होगा।"[127]

व्यक्तित्व निर्माण के लिए को-एड संस्थान सबसे अच्छा माना जाता है। यह कहा जाता है व्यक्तित्व के समुचित विकास को को-एड में ज्यादा समृद्धि मिलती है, लेकिन लड़कियों के

---

[127] http://feminist-poems-articles.blogspot.com/2013/02/blog-post.html 2/07/2013 07:48:00 pm by mukti

लिए यहाँ भी मुसीबतों का पहाड़ पीछा नहीं छोड़ता है। यहाँ तक कि लड़की थोड़ी देर किसी से हंस-बोलकर बात कर ले तो लोग उसके बारे में यह धारणा बना लेते हैं कि लड़की उनमें इंट्रेस्टेड है या उनकी तरफ आकर्षित हो रही है।

हालाँकि उनकी इस सोच के पीछे उनका भी कोई दोष नहीं है, क्योंकि समाज में यह धारणा बन गई है कि लड़की हंसी तो फंसी। समाज की धारणा का पुरजोर विरोध करती हुई ब्लॉगर पूँजा सिंह अपनी पोस्ट 'औरतों को लेकर मिथक : थोड़ी हकीकत ज्यादा फसाना' मैं लिखती हैं,- "लड़कों को यह बात समझाना कितना मुश्किल है कि उनसे दो मिनट हंस कर बात कर लेने का यह मतलब नहीं है कि हम उनमें इंट्रेस्टेड हैं या उनकी तरफ आकर्षित हैं। उनका भी कुसूर नहीं है कुसूर तो हमारी सोसाइटी का है जो बचपन से ही लड़कों के जेहन में यह बात डाल देती है कि लड़की हंसी तो फंसी। अमां यार, हम भी तुम्हारी तरह इंसान ही हैं। कोई बात अच्छी लगती है तो हंस देते हैं, बुरी लगती है तो दुखी होते हैं या रोकर मन हल्का कर लेते हैं। आपको ऐसा क्यों लगता है कि हम फंसने के लिए तैयार बैठे हैं।"[128]

फिल्मी गीतों की चर्चा करें तो कुछ फिल्मी गीतों ने ऐसा माहौल बना दिया है जैसे महिलाओं का सजना संवरना पुरुषों के लिए ही होता है। जबकि हर कोई अपने लिए सजता संवरता है ताकि वह दिखने में अच्छा लगे और लोगों के बीच आकर्षक रूप में दिखे। लोग उसकी तारीफ करें। चाहे उसके कपड़ों की हो या पर्सनालिटी की । क्योंकि तारीफ सबकों प्रिय होती है। चाहे वह झूठी ही तारीफ क्यों ना हो। इसी तरह एक गीत है 'सजना है मुझे सजना के लिए', 'जब तक ना पड़े आशिक की नज़र श्रृंगार अधूरा रहता है' इस तरह के गानों ने स्त्री की खास तरह की छवि निर्मित की है।

इन गानों में ऐसा लगता है कि स्त्रियों का सजना संवरना तभी सार्थक है जब पुरुष की नज़र उस पर पड़े। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर पूँजा सिंह अपनी पोस्ट 'औरतों को लेकर मिथक :

---

[128] http://jantakapaksh.blogspot.com/2012/12/blog-post_31.html,date–4/02/2019,time-02:10A.M

थोड़ी हकीकत ज्यादा फसाना' में लिखती हैं,- "सजना है मुझे सजना के लिए... सौदागर फिल्म के इस गाने ने तो जीना मुहाल कर रखा है। नहीं-नहीं वैसे गाना अच्छा है, हम भी अक्सर गुनगुनाते हैं लेकिन इसे सुनते-सुनते लोगों को ऐसा लगने लगा है मानों हमारे सजने संवरने का बस एक ही मकसद है - अपने सो कॉल्ड प्रियतम को रिझाना। अरे जनाब और भी गम है जमाने में सजने संवरने के सिवा! रविंद्र जैन साहब आपने न जाने कौन से जन्म की दुश्मनी निकाली है, यह गीत लिखकर ? आपको इसे लिखने की प्रेरणा कहां से मिली यह तो पता नहीं लेकिन यह जरूर बता दें कि हमारे बारे में यह धारणा एकदम गलत है। नो डाउट हमें सजना और संवरना अच्छा लगता है लेकिन यह किसी दूसरे के लिए नहीं होता बल्कि हमारी अपनी खुशी के लिए होता है। आपके मन में यह सवाल नहीं आता कभी कि लड़के किस लिए सजते हैं ? जी हां हम भी ठीक उसी वजह से सजते-संवरते हैं यानी खुद अच्छा महसूस करने और अपना आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए।"[129]

विज्ञापनों ने भी स्त्री के शोषण में अहम् भूमिका निभाई है। इसने स्त्री की जो छवि गढ़ी है उससे स्त्रियों की क्षमता और हौसले पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। इन विज्ञापनों की वजह से स्त्री की एक खास तरह की छवि निर्मित हुई है, जो पुरुषों के विचारों के अनुकूल रही है। इसने समाज में एक खास तरह का संदेश दिया है कि जैसे स्त्रियों को पुरुषों की मांग के अनुकूल होना चाहिए और जो स्त्री पुरुष के मांगों के अनुकूल है वही स्त्री संस्कारी है, चरित्रवान है, समाज के अंदर सम्मान पाने योग्य है।

इस संदर्भ में ब्लॉगर मोनिका गुप्ता अपनी पोस्ट 'वूमन नहीं सुपर वूमन चाहिए' में लिखती हैं,- "विज्ञापनों के प्रारंभ में वधू की तलाश के लिए निकलने वाले शब्दों पर गौर करें तो बदलते समय का प्रत्यक्ष प्रभाव दिखाई पड़ेगा। वर्ष 1960 में वैवाहिक विज्ञापन में सुंदर

[129] http://jantakapaksh.blogspot.com/2012/12/blog-post_31.html,04/09/2019,9:01a.m

और कुंवारी शब्द पर जोर दिया जाता था। विवाह के लिए जाति और नारियोचित गुणों का विशेष ध्यान रखा जाता था। सुंदरता को योग्यता से ज्यादा महत्व मिलता था। 1970 में इस सोच में थोड़ा बदलाव आया। हालाँकि सुंदरता अब भी पहली प्राथमिकता रही। लेकिन उसके साथ आकर्षक व्यक्तित्व कद काठी और अंग्रेजी बोलने वाली लड़कियों (इंग्लिश स्पीकिंग, कॉन्वेंट एड्यूकेटेड) जैसे शब्द जुड़ते गये। 1980 के दशक में भी शारीरिक सुंदरता को महत्व दिया गया। लेकिन साथ ही महिला के लिए कामकाजी (अर्निंगवूमन) होना अच्छे वर की चाह करने वालों के लिए आवश्यक हो गई। वहीं 1990 में 'सुंदर' और 'कुंवारी' शब्द का स्थान 'लंबी' और 'गोरी' जैसे शब्द ने ले लिया।"[130]

अतः हम देखते हैं कि विज्ञापन में सबसे ज्यादा जोर इस बात पर दिखाई देता है कि लड़कियां कामकाजी होनी चाहिए लेकिन लड़की की जाति, धर्म, शारीरिक सुंदरता की स्थिति पहले की तरह ही बनी रही है। इसके साथ ही इस बात पर भी जोर दिया जाता है कि लड़की लक्ष्मी लेकर आए चाहे वह दहेज के रूप में हो या जॉब करने वाली हो। किसी न किसी रूप में पैसा लेकर आने वाली हो।

महिला सशक्तिकरण के सन्दर्भ में ग्रामीण महिलाओं की बात करें तो इन महिलाओं की चर्चा टीवी में देखने को नहीं मिलती है ना ही उनका जिक्र हमेशा अखबारों में देखने को मिलता है। ना ही टीवी पर स्त्री विमर्श की चर्चा में देखने को मिलती है, लेकिन यह भारतीय समाज का सबसे अहम् और बड़ा तबका है, जहाँ आधुनिकता के दौर में पश्चिम से चलने वाली हवा हमारे रहन-सहन को प्रभावित कर रही है, उस दौर में भी ग्रामीण महिलाएं नैतिकता और सरलता का झंडा उठाये जूझ रही हैं और जिस बराबरी के हक की आवाज को आज

[130] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_06.html 9/06/2008 01:45:00 PM

लोग फेमिनिज्म का नाम दे रहें है, यह महिलाएं सदियों पहले से उसके लिए संघर्ष करती आयी हैं।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर 'शुभम जाट' अपनी पोस्ट 'ग्रामीण भारतीय नारी' में लिखते हैं,- "स्त्रियों को काम करने की आज़ादी देना जो आज के इस सोशल मीडिया की महिला सशक्तिकरण की सबसे बड़ी माँग है, उसमें ग्रामीण महिलाएं शुरू से अग्रसर रही हैं। ग्रामीण भारत के प्रमुख व्यवसाय कृषि में देखा जाये तो महिलाएं पुरुषों से कंधे से कन्धा मिलाये चल रही हैं और जब बात शिक्षा की आती है तो इस वक्त लड़कियों की शिक्षा दर में उल्लेखनीय बढ़ोतरी हुई है और अगर राजनीतिक क्षेत्र में देखा जाए तो ग्राम पंचायात में 50 प्रतिशत आरक्षण ने महिलाओं को इस मोर्चे पर मजबूती प्रदान की है।"[131]

भारत में वर्तमान नारीवादी अवधारणा इस बात पर विचार करती है कि गरीब, ग्रामीण, दलित और अल्पसंख्यक महिलाओं की समस्याएं अलग हैं और धनी तथा सवर्ण महिलाओं की समस्याएं अलग हैं। वर्तमान नारीवाद नारी के साथ ही उन सभी दलित और शोषित तबको की बात करता है जो सदियों से समाज में हाशिए पर धकेल दिए गए हैं। इसमें लिंगभेद भी एक बड़ा कारण है। इसी वजह से लड़कियों को सिखाया जाता है कि इस तरह के कपड़े पहनो, इस तरह के कपड़े मत पहनो आदि।

यहाँ हम देखते हैं कि कपड़ों में सुधार पर ज्यादा जोर दिया जाता है जबकि होना यह चाहिए कि मनुष्यों की मानसिकता में सुधार पर जोर दिया जाना चाहिए। इस तरह की बंदिशों की वज़ह से स्त्रियों के अधिकार धीरे धीरे छिनते चले गए। इस संदर्भ में ब्लॉगर घुघूती बासूती अपनी एक पोस्ट 'एन्नलो वैदिकः लड़के एन्नलो, लड़कियाँ वैदिक ! एक परिवार में दो संस्कृतियों का मिलन' में लिखती हैं,- "साड़ी जैसे परिधान जिसके लिए प्रत्येक भारतीय के मन में आदर है, शायद वैसा ही जैसा माँ के लिए होता है, उसे भी एक नई दृष्टि से देखा जा रहा

[131]http://bhartiynari.blogspot.com/2019/11/Indian-women-underrated.html 5/02/2019,11:30P.M.

है। बहुत से स्कूलों में एक तरफ तो जहाँ अध्यापिकाओं के लिए साड़ी पहनना अनिवार्य है वहीं साड़ी के ब्लाउज व उनमें से झलकती पीठ को छिपाने के लिए वर्दी के जैकेट पहनाए जा रहे हैं। अपने परिधान पर गर्व भी है और लज्जा भी! ।"[132]

यहाँ विचार करने वाली बात यह है कि विपरीत लिंग के लोगों से बात करते समय दृष्टि उनके चेहरों पर केन्द्रित की जाती है ना की उनके शरीर के विभिन्न अंगों पर।

एक सवाल विचार करने योग्य है कि माँ-बाप ने अपनी बेटी को इस काबिल बना दिया है कि वह अपने पैरों पर खड़ी हो सके। वह खुद कमा-खा सके तो शादी के बाद यह अधिकार बेटी को मिलना चाहिए कि वह अपने माँ-बाप का भरण-पोषण कर सके और इस तरह के मामलों में ससुराल वालों को भी आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर रेखा श्रीवास्तव अपनी पोस्ट 'क्यों न ऐसा हो? में लिखती हैं,- "जिस शिक्षा के बल पर वह आत्मनिर्भर है वह उसके माता-पिता ने ही दिलाई है न। फिर उनके आर्थिक रूप से कमजोर होने पर वह अपनी कमाई का हिस्सा माता-पिता को क्यों नहीं दे सकती है? बेटे को आपने पढ़ाया तो उसकी कमाई पर आपका पूरा-पूरा हक़ है और उन्होंने बेटी को पढ़ाया तो उसकी कमाई पर भी आपका ही पूरा-पूरा हक़ है। आखिर क्यों? हम अपनी इस मानसिकता से कब मुक्त हो सकेंगे कि बेटी विवाह तक ही माता-पिता की देखभाल कर सकती है और उसके बाद वह पराई हो जाती है।"[133]

अतः भारतीय समाज के पारम्परिक तौर तरीके की बात करें तो भारत में ज्यादातर नारी को केवल माँ-बहिन-बेटी और पत्नी के रूप में ही देखा जाता है, उनका आदर-सत्कार किया जाता है। अब प्रश्न यह उठता है कि जो महिला इस परम्परागत तौर-तरीके को नहीं अपनाती है क्या वह गलत है? इस सन्दर्भ में 'नारी ब्लॉग' पर ब्लॉगर अपनी पोस्ट 'नारी अविवाहित ३०

---

[132] http://ghughutibasuti.blogspot.com/2009/06/blog-post_26.html 5/06/2019,time-6:35am

[133] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/02/blog-post_16.html,2/11/2020, 06:21:00 am

के ऊपर और सुखी ?? हो ही नहीं सकता' में लिखती है,- "बहुत सी विवाहित महिला हैं जो 'वूमन अचीवर' मानी जाती हैं और जो निरंतर अपने को आगे लाने के लिये संघर्ष करती हैं घर में भी बाहर भी, लेकिन 'सुपर वूमन' बनकर क्योंकि वो आर्थिक रूप से सशक्त रहने के महत्व को जानती हैं। लेकिन न जाने कितनी महिला ऐसी भी हैं जिनको अपना करियर दॉव पर लगाना पड़ता हैं क्योंकि समाज को 'उनके विवाह' की फ़िक्र है। माता-पिता का कर्तव्य है कि बच्चों को शिक्षित करें आत्म निर्भर बनाए और उसके बाद अपने जीवन के निर्णय ख़ुद लेने दे।"[134] अतः माता-पिता का दायित्त्व यह है कि वह महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाये जिससे स्त्री किसी के अधीन न रहे। वह स्वतः अपनी इच्छा की पूर्ति कर सके।

4.3 हिंदी के ब्लॉग और दलित विमर्श

इसके अंतर्गत हिंदी के ब्लॉगों में दलित विमर्श किन किन रूपों में आया है तथा कौन कौन से मुद्दों को ब्लॉग में उठाया गया है। उन सभी मुद्दों की पड़ताल करने का प्रयास किया गया है तथा दलित विमर्श की समस्याओं को व्यक्त करने में ब्लॉग की सार्थकता कहाँ तक खरी उतरी है। उन सभी मुद्दों की पड़ताल निम्नलिखित रूपों में करने का प्रयास किया गया है।

4.3.1 दलित: शब्द का अर्थ

हिंदी दलित विमर्श में यह सवाल अभी भी बना हुआ है कि दलित किसे कहा जाए और दलित साहित्य कौन लिख सकता है? सिर्फ दलित ही दलित साहित्य लिख सकते हैं या गैर दलित भी दलित साहित्य लिख सकते हैं? इस संदर्भ में कुछ दलित आलोचकों जैसे श्यौराज सिंह बेचैन, कंवल भारती, ओमप्रकाश वाल्मीकि आदि लोगों का मानना है कि जो जन्मजात अछूत (अनुसूचित जाति) हैं वही लोग दलित हैं

---

[134] http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/08/blog-post_05.html ,8/05/2019, 02:00:00 am

अर्थात् वही दलित की श्रेणी में आते हैं, दूसरी तरफ शरण कुमार लिंबाले, सूर्यनारायण रणशुभे आदि आलोचकों का मानना है कि इस तरह के व्यवहार से हम दलित शब्द के व्यापक अर्थ को संकीर्ण कर देंगे अर्थात् इस शब्द के अर्थ की व्यापकता को कम करके आंकते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि दलित कौन है? दलित साहित्य कौन लिख सकता है? इस सवाल पर दलित आलोचकों में मतभेद है।

श्यौराज सिंह बेचैन और कंवल भारती जैसे आलोचकों का मानना है कि जो जन्मजात दलित हैं वही दलित साहित्य लिख सकते हैं। इस सवाल पर विचार करते हुए दलित लेखक तुलसीराम लिखते हैं,-“दलितों में कुछ ऐसे लोग हैं, जो जाति व्यवस्था के शिकार होते हुए भी जातिवादी भावना रखते हैं; जिसके चलते वे दावा करते हैं कि दलित साहित्य सिर्फ दलित ही लिख सकता है। ऐसी मान्यता रखने वाले लोग गौतम बुद्ध और अन्य गैर दलित मनीषियों द्वारा जाति-व्यवस्था के विरुद्ध किए गए योगदान को खारिज कर देते हैं।”[135] इस कथन से यह जाहिर होता है कि तुलसीराम और कँवल भारती जैसे विद्वान दलित साहित्य का उद्भव बौद्ध साहित्य और संत साहित्य से मानने के पक्ष में खड़े दिखाई देते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि दलित साहित्य के उद्भव के संदर्भ में विद्वानों में बड़ा ही अंतर्विरोध है। इसका कारण शायद यह है कि आज हमारे पास दलित साहित्य को निर्धारित करने का सटीक मानदंड नहीं है। इसलिए हमें दलित साहित्य की अवधारणा पर कोई राय बनाने से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि दलित कौन है? दलित चेतना क्या है? और इस चेतना से युक्त साहित्य का उद्देश्य क्या है? इन सभी सवालों को ध्यान में रखते हुए दलित साहित्य की अवधारणा को समझा जा सकता है।

[135]तुलसीराम, (2012), ‘प्रगतिशील आन्दोलन और दलित विमर्श’; नया पथ, वर्ष:16:अंक 1, जनवरी-जून (संयुक्तांक पृष्ठ-66

इस संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी पुस्तक 'दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' की शुरूआत में ही मोटे तौर पर दलित शब्द को परिभाषित करते हुए लिखा है,- "दलित शब्द का अर्थ है- जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनिष्ट, मर्दित पस्त-हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि।"[136]

ब्लॉगर कंवल भारती अपने ब्लॉग 'दलित विमर्श' की एक पोस्ट 'हिन्दी दलित साहित्य' में लिखते हैं,- "आजादी से पहले 'दलित साहित्य' का टर्म ही नहीं था। पहले 'अछूत' शब्द था। हीरा डोम की जो कविता 'सरस्वती' में मिलती है, उसका शीर्षक 'एक अछूत की शिकायत' है, एक दलित की नहीं। दलित शब्द तब प्रचलन में ही नहीं था। 'अछूत' के बाद 'हरिजन' शब्द आया। उसका विरोध हुआ, अछूतानन्द जी ने इसके विरोध में एक बहुत ही विचारोत्तेजक कविता लिखी थी। जब आदि हिन्दू आन्दोलन चला तो हमारा साहित्य भी आदि हिन्दू साहित्य हो गया। यह भी एक टर्म था। 'दलित' शब्द सत्तर के दशक में आया, जो आज भी चल रहा है।"[137]

आमतौर पर इस तरह की परिभाषा को ही दलित साहित्य का पर्याय मान लिया जाता है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर कँवल भारती इस बात पर भी विचार करते हैं कि दलित विमर्श को 'दलित पैंथर' से भी जोड़ा जा सकता है, वे अपने ब्लॉग 'दलित विमर्श' की एक पोस्ट 'दलित पैंथर का दस्तावेजी इतिहास' में 'दलित शब्द' पर विचार करते हुए इसे 'दलित पैंथर' के आन्दोलन से जोड़कर देखते हैं। वे लिखते हैं,- " 'दलित पैंथर' अस्सी के दशक का वह क्रांतिकारी आन्दोलन था, जिसने महाराष्ट्र के दलितों को ही नहीं, बल्कि वहाँ की राजनीति को भी प्रभावित किया था। इसी दलित पैंथर के गर्भ से मराठी दलित साहित्य का जन्म हुआ

[136]ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 13
[137] http://kbharti53.blogspot.com/2013/07/, date-30/12/2019,time-05:33

था। इससे पहले दलित शब्द का अस्तित्व तो था, पर वह प्रचलन में नहीं आया था। इस क्रांतिकारी संगठन का निर्माण 29 मई 1972 को हुआ था किन्तु इसने लम्बी उमर नहीं पाई। और पांच साल बाद 7 मार्च 1977 को ही उसे भंग कर दिया गया।"[138]

4.3.2 दलित: शब्द का अर्थ, विभिन्न विद्वानों के अनुसार

दलित साहित्य के सन्दर्भ में ब्लॉगर एस.आर. दारापुरी अपने ब्लॉग 'दलित मुक्ति' की एक पोस्ट 'पूना पैकट: एक पुनर्मुल्यांकन' में विचार करते हुए लिखते हैं कि,- "भारतीय हिन्दू समाज में जाति को आधारशिला माना गया है। इस में श्रेणीबद्ध असमानता के ढांचे में अछूत सबसे निचले स्तर पर हैं जिन्हें 1935 तक सरकारी तौर पर ' डिप्रेस्ड क्लासेज' कहा जाता था। गांधी जी ने उन्हें 'हरिजन' के नाम से पुरस्कृत किया था जिसे अधिकतर अछूतों ने स्वीकार नहीं किया था। अब उन्होंने अपने लिए 'दलित' नाम स्वयं चुना है जो उनकी पददलित स्थिति का परिचायक है।"[139]

इस तरह हम देखते हैं कि किसी भी शब्द के अर्थ को परिभाषित करने, विश्लेषित करने के अपने नियम हैं। यह नियम कहां तक सार्थक है इसे ठीक-ठीक बता पाना आसान नहीं है क्योंकि दलित शब्द को इस तरह से परिभाषित करने के क्रम में यह बता पाना आसान नहीं है कि किस समुदाय का दमन हुआ है? और किस समुदाय का कितना दमन (सताया गया है) हुआ है? यह बात भी साफ तौर पर नहीं कही जा सकती है कि अमुक समुदाय का शोषण किस आधार पर किया गया है? और वह शोषण सामाजिक है, सांस्कृतिक है, आर्थिक है या लैंगिक है।

---

[138] http://kbharti53.blogspot.com/2018/07/blog-post_53.html, date-30/12/2019,time-06:33

[139] http://dalitmukti.blogspot.com/search/label/%E0%A4%85%E0%A4%9B%E0%A5%82%E0%A4%A4, date30/12/2019 time- 09:17

अतः दलित शब्द के अर्थ को निश्चित करना ज्यादा जरूरी है। इसलिए दलित साहित्य की अवधारणा पर अपनी कोई राय बनाने से पहले 'दलित' शब्द की अर्थ परंपरा पर विचार करना आवश्यक है। किसी भी शब्द का कोई निश्चित अर्थ नहीं होता बल्कि हर शब्द की अपनी अर्थ परंपरा होती है जो अपने काल और स्थान विशेष की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों द्वारा बदलती और बनती रहती है। अर्थात् नए संदर्भ में नए-नए अर्थ ग्रहण करती रहती है क्योंकि हर एक शब्द अपने आप में एक अवधारणा, एक विचार, एक चिंतन को समेटे रहता है। इस संदर्भ में श्यौराज सिंह बेचैन लिखते हैं,- "दलित वह है जिसे भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति का दर्जा दिया गया है।"[140]

इसी संदर्भ में कंवल भारती लिखते हैं,- "दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गंदे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया है। जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही और वही दलित है, और इसके अंतर्गत वही जातियां आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियां कहा जाता है।"[141] उपर्युक्त संदर्भ के आधार पर विचार करें तो तीन तरह के निष्कर्ष निकलते हैं।

1 दलित वे लोग हैं जो समाज में 'अछूत' हैं जिनको भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति का दर्जा प्रदान किया गया है।

2 दलित वे लोग हैं जिन्हें भारतीय समाज में 'अछूत' और 'आदिवासी' का दर्जा प्रदान किया गया है। अर्थात् अनुसूचित जनजाति।

[140] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ-13
[141] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 13

3 दलित वे लोग हैं जो गरीब हैं या आर्थिक रूप से कमजोर हैं जिनमें लैंगिक रूप से शोषित स्त्रियाँ भी शामिल की जा सकती हैं। वर्तमान समय में 'अछूत' और 'आदिवासी' आंदोलन के अलग-अलग होने की वजह से आदिवासी को दलित की श्रेणी में नहीं रखा जाता है और यह तर्कसंगत भी नहीं है।

इस तरह क्रमशः तीसरे विवाद पर विचार करें तो तीसरे तबके में वे लोग आते हैं जो भूमिहीन हैं, खेतिहर मजदूर हैं, गरीब किसान हैं और आर्थिक रूप से कमजोर स्त्रियाँ हैं। यह सभी दलित की श्रेणी में ही आते हैं। इस संदर्भ में दलित लेखक मोहनदास नैमिशराय की बात करें तो वह 'दलित' शब्द को और अधिक विस्तार देते हैं। वे दलित शब्द को 'सर्वहारा' और 'आर्थिक विषमता' के संदर्भ में देखते हैं और 'सामाजिक विषमता' के शिकार व्यक्ति को दलित मानने के पक्ष में खड़े दिखाई देते हैं। वे लिखते हैं,- "दलित शब्द मार्क्स प्रणीत सर्वहारा शब्द के लिए समानार्थी लगता है। लेकिन इन दोनों शब्दों में पर्याप्त भेद भी हैं। दलित की व्याप्ति अधिक है, तो सर्वहारा की सीमित। दलित के अंतर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक शोषण का अंतर भाव होता है, तो सर्वहारा केवल आर्थिक शोषण तक ही सीमित है। प्रत्येक दलित व्यक्ति सर्वहारा के अंतर्गत तो आ सकता है, लेकिन प्रत्येक सर्वहारा को दलित कहने के लिए बाध्य नहीं कर सकते ...अर्थात् सर्वहारा की सीमाओं में आर्थिक विषमता का शिकार वर्ग आता है, जबकि दलित विशेष तौर पर सामाजिक विषमता का शिकार होता है।"[142] इसी प्रकार दलित शब्द पर विचार विमर्श करते हुए सूर्य नारायण रणशुभे लिखते हैं,- "दलित शब्द की कई मिली जुली परिभाषाएं हैं जिनका अर्थ केवल बौद्ध या पिछड़ी जातियां ही नहीं हैं। समाज में जो भी पीड़ित हैं वह सभी दलित हैं।[143]

---

[142] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 14

[143] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 15

प्रसिद्ध हिंदी आलोचक राजेंद्र यादव,- "दलित शब्द को काफी व्यापक दायरे में देखते हैं। वे स्त्रियों को भी दलित मानते हैं। पिछड़ी जातियों को भी दलितों में शामिल करते हैं।"[144]

लेकिन डॉ. श्यौराज सिंह बेचैन की बात करें तो वे इन तर्कों से सहमत नहीं होते हैं। उनका मानना है कि,- "इससे साहित्य में सही स्थिति सामने नहीं आती। दलित साहित्य उन अछूतों का साहित्य है जिन्हें सामाजिक स्तर पर सम्मान नहीं मिला। सामाजिक स्तर पर जातिभेद के जो लोग शिकार हुए हैं, उनकी छटपटाहट ही शब्दबद्ध होकर दलित साहित्य बन रही है।"[145]

इस संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि के मत पर विचार करें तो वे लिखते हैं,- "दलित शब्द व्यापक अर्थ बोध की अभिव्यंजना देता है। भारतीय समाज में जिसे अस्पृश्य माना गया वह व्यक्ति ही दलित है। दुर्गम पहाड़ों, वनों के बीच जीवन-यापन करने के लिए बाध्य जनजातियां और आदिवासी, जरायमपेशा घोषित जातियां सभी इस दायरे में आती हैं। सभी वर्गों की स्त्रियाँ दलित हैं। बहुत कम श्रम मूल्य पर चौबीसों घंटे काम करने वाले श्रमिक, बंधुआ मजदूर दलित की श्रेणी में आते हैं।"[146]

इस तरह विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दलित वह है जिसका आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, लैंगिक सभी आधार पर शोषण या उत्पीड़न हुआ हो। यहाँ पर विचार करें तो मोहनदास नैमिशराय और ओमप्रकाश वाल्मीकि ने मार्क्स के सर्वहारा और श्रमिक वर्ग पर विचार किया है और अपनी परिभाषाओं में कम मूल्य पर श्रम करने वाले श्रमिकों को भी दलित श्रेणी में माना है, परंतु कुछ जगहों पर ओमप्रकाश वाल्मीकि का मानना है कि,- "दलित शब्द उस व्यक्ति के लिए प्रयोग

[144] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 15
[145] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 15
[146] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 15

होता है जो समाज व्यवस्था के तहत सबसे निचले पायदान पर हैं। वर्ण व्यवस्था ने जिसे अछूत या अंत्यज की श्रेणी में रखा। उसका दलन हुआ। इस समूह को ही संविधान में अनुसूचित जातियां कहा गया है जो जन्मना अछूत हैं।[147]

इन परिभाषाओं के आधार पर विचार करें तो यह कहा जा सकता है कि दलित जाति में पैदा हुआ व्यक्ति कुछ भी लिख दे, वह दलित साहित्य हो जाए अर्थात् हम उसे दलित साहित्य मान लें यह तर्कपूर्ण नहीं लगता है। जब तक दलित चेतना दलित लेखन में व्यक्त नहीं होगी तब तक साहित्य केवल शब्दों का मायाजाल मात्र ही रहेगा और यह सोच दलित समाज के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।

इस संदर्भ में गैर दलित हिंदी आलोचकों ने दलित साहित्य पर तरह-तरह से सवाल उठाए हैं। लेखक काशीनाथ सिंह लिखते हैं,- "क्या दलितों पर लिखने के लिए दलित होना जरूरी है?"[148] इस तरह के अनेक सवाल उठते रहे हैं लेकिन अभी तक ऐसे प्रश्नों का मुकम्मल जवाब नहीं मिल पा रहा है।

4.3.3 दलित-विमर्श: अवधारणा और स्वरूप

दलित साहित्य दलित चेतना का साहित्य है। इसके बारे में ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं,- "दलित की व्यथा, दुःख, पीड़ा, शोषण का विवरण देना या बखान करना ही दलित चेतना नहीं है,...चेतना का सीधा संबंध दृष्टि से होता है जो दलितों की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक भूमिका की छवि के तिलिस्म को तोड़ती है। वह है दलित चेतना। दलित मतलब मानवीय अधिकारों से वंचित, सामाजिक तौर पर जिसे नकारा गया हो। उसकी

[147] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 15

[148] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, भूमिका से

चेतना यानी दलित।"[149] यहाँ हम देखते हैं कि ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित चेतना को जाति विशेष के खाँचे से बाहर निकाल कर एक बड़े फलक पर देखने का प्रयास करते हैं।

ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित चेतना के माध्यम से दलित रचनाकारों और गैर दलित रचनाकारों की प्रामाणिकता पर भी विचार करते हैं। वे इस बात को मानने के पक्ष में हैं कि दलित रचनाकार ही प्रामाणिक दलित साहित्य का लेखन कर सकता है। इस संदर्भ में वे लिखते हैं कि,- "कई विद्वानों, रचनाकारों आलोचकों का मत है कि दलितों पर लिखने के लिए दलित होना जरूरी नहीं है। उनका तर्क है कि घोड़े पर लिखने के लिए घोड़ा होना जरूरी नहीं है। लेकिन दलित लेखक इस तर्क से सहमत नहीं है। घोड़े की पीड़ा को समझे बगैर उसका बाह्य-चित्रण उसकी भावनाओं का काल्पनिक रेखांकन भर ही होगा। थका माँदा, भूखा-प्यासा घोड़ा अपने मालिक के प्रति क्या भाव रखता है, इसे सिर्फ घोड़ा ही बता सकता है।"[150]

हम देखते हैं कि यहाँ पर ओमप्रकाश वाल्मीकि दलित लेखक को ज्यादा महत्व देते हैं, उनके द्वारा लिखे गये साहित्य को प्रामाणित साहित्य मानने के पक्ष में दिखाई देते हैं। हालाँकि इस संदर्भ में नामवर सिंह का मानना है कि कोई लेखक दलित कुल में जन्म लेने मात्र से ही दलित चेतना का संवाहक नहीं हो जाता है। जन्मना दलित ही दलित चेतना का प्रतिनिधि होगा, दूसरा कोई नहीं हो सकता यह बात गलत है।

दलित चेतना के महत्व और विकास पर विचार करते हुए मैनेजर पाण्डेय दलितों द्वारा लिखे गए साहित्य को प्रामाणिक साहित्य मानते हैं। वे कहते हैं,- "मुझे लगता है कि जब तक अपने बारे में लिखे हुए दलितों के साहित्य का पर्याप्त विकास नहीं होता, तब तक गैर-दलितों

[149] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 29
[150] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 36

द्वारा दलितों के बारे में लिखे गए साहित्य को भले ही दलित साहित्य कहा जाए, लेकिन सच्चा दलित साहित्य वही होगा जो दलितों के बारे में स्वयं दलित लिखेंगे। ... दलितों के जीवनानुभव और उसकी अभिव्यक्ति के प्रसंग में ज्योतिबा फुले का यह कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है कि गुलामी की यातना को 'जो सहता है वही जानता है' और जो जानता है, वही पूरा सच कह सकता है। सचमुच राख ही जानती है जलने का अनुभव कोई और नहीं।"[151]

मैनेजर पांडेय दलितों के जीवनानुभव और उसकी अभिव्यक्ति के लिए दलितों द्वारा लिखे गए साहित्य को ही प्रामाणिक और दलित चेतना से युक्त साहित्य मानते हैं। वे कहते हैं कि जब तक दलित साहित्य का विकास नहीं हो जाता तब तक दलित साहित्यकार को पर्याप्त मौका दिया जाना चाहिए। ताकि वे अपने भोगे हुए यथार्थ और गुलामी की यातना को प्रामाणिक ढंग से व्यक्त कर सकें, क्योंकि राख ही जानती है जलने का दर्द कोई और नहीं।

4.3.4 दलित-विमर्श: वर्ग एवं वर्ण का सवाल

दलित विमर्श को समझने के लिए वर्ग और वर्ण को समझना आवश्यक है क्योंकि भारतीय समाज की संरचना में वर्ग एवं वर्ण दोनों घुले हुए है। अर्थात् भारतीय समाज की संरचना को समझने के लिए वर्ग और वर्ण को समझना जरूरी है। हमारे समाज में वर्ग की संरचना के आधार पर जो लोग भारत की संरचना को समझने का प्रयास करेंगे वह जाति की सच्चाई का ठीक-ठीक मूल्यांकन नहीं कर पाएंगे वहीं दूसरी तरफ जाति के आधार पर भारतीय समाज की संरचना को समझने का प्रयास करेंगे तो भी अनेक जटिलताएं छूट जाएंगी जिन्हें आप ठीक तरह से नहीं समझ पाएंगे।

अतः जाति और वर्ग दोनों की वास्तविकता को समझे बगैर भारतीय समाज की जटिलता को नहीं समझ पाएंगे क्योंकि वर्ग की धारणा का आधार आर्थिक होता है और जाति का आधार आर्थिक और सामाजिक दोनों होता है। इस सन्दर्भ मैनेजर पाण्डेय लिखते हैं,-

---

[151] मैनेजर पाण्डेय 'अनभै सांचा', नई दिल्ली:वाणी प्रकाशन, 2012 पृष्ठ संख्या- 285-286

"यह ध्यान में रखने की बात है कि वर्ग की धारणा का आधार आर्थिक होता है, जबकि वर्ण या जाति का संबंध आर्थिक के साथ-साथ सामाजिक स्थिति से भी होता है। इसलिए जब कुछ लोग मार्क्सवाद के नाम पर भारतीय समाज की वर्णवादी संरचना की उपेक्षा करते हुए किसानों और मजदूरों की एकता की बात करते हैं, तब वे यह भूल जाते हैं कि एक सवर्ण किसान से दलित किसान की या एक सवर्ण मजदूर से दलित मजदूर की सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति भिन्न होती है।"[152]

भारतीय समाज में वर्ग एक धारणा है और जाति वास्तविक सच्चाई है। यह दोनों कहीं एक साथ मिलते हैं तो कहीं एक दूसरे का विरोध करते हैं। इस संदर्भ में मैनेजर पाण्डेय लिखते हैं,- "शहरों में काम करने वाले मजदूर लगभग एक तरह का जीवन जीते हैं और एक साथ रहते भी हैं। लेकिन जब वे गांव लौटते हैं तो उनकी सामाजिक स्थिति उनकी जाति के अनुसार बन जाती है। यही नहीं, शहर में भी एक जैसी नौकरी करने वाले दो लोग, जिनमें एक ब्राह्मण हो और एक दलित दोनों किराए का मकान खोजने निकलें तो दोनों के साथ समाज एक जैसा व्यवहार नहीं करता। इससे जाहिर है कि भारतीय समाज में अनेक स्तरों पर वर्ण या जाति की भूमिका वर्ग से अधिक प्रभावशाली है।"[153]

अतः भारतीय समाज की जटिल संरचना को सिर्फ जाति या वर्ग के आधार पर नहीं समझा जा सकता है। भारतीय समाज की संरचना को संपूर्णता में समझने के लिए जाति और वर्ग दोनों को महत्व देना पड़ेगा। मैनेजर पाण्डेय जाति को भारतीय समाज की वास्तविक सच्चाई मानते हैं और वर्ग को एक मार्क्सवादी अवधारणा के रूप में देखते हैं। यहाँ यह बात स्पष्ट होती है कि किसी भी अवधारणा को समझने के लिए उस समाज की वास्तविक

---

[152] मैनेजर पाण्डेय, अनभै सांचा, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ- 283

[153] मैनेजर पाण्डेय, अनभै सांचा, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ- 283-284

समस्याओं को समझना आवश्यक है क्योंकि वास्तविक समस्या को समझे बिना उस समाज की अवधारणा का ठीक-ठीक मूल्यांकन नहीं कर सकते।

4.3.5 सहानुभूति और स्वानुभूति का प्रश्न

सहानुभूति का अर्थ है कोई कमजोर, पीड़ित, वंचित व्यक्ति जो दुःख झेल रहा है उसके प्रति करुणा का भाव उत्पन्न होना। अर्थात् इसमें व्यक्ति दूसरे के दुःख को समझता है और उसकी मुक्ति के लिए, दुख निवारण के लिए, जो छटपटाहट का भाव जागृत होता है वह भाव सहानुभूति कहलाता है तथा स्वानुभूति का अर्थ स्व+अनुभूति=आत्मसाक्षात्कार से है। अर्थात् इसका अर्थ 'अपने निजी जीवन के अनुभव से है'। हालाँकि सहानुभूति और स्वानुभूति के सन्दर्भ में एक लम्बी बहस चल रही है। जो आज भी कायम है।

इस संदर्भ में मैनेजर पाण्डेय का मानना हैं कि,- "प्रेमचंद और निराला की दलित जीवन से जुड़ी रचनाओं को देखा जा सकता है। लेकिन सारी सहानुभूति, करुणा, सहृदयता और परकाय प्रवेश की कला के बावजूद गैर-दलितों द्वारा दलितों के बारे में लिखे गए साहित्य में कला चाहे जितनी हो, परंतु अनुभव की वह प्रामाणिकता नहीं होती जो किसी दलित द्वारा अपने समुदाय के बारे में स्वानुभूति की पुनर्रचना से उपजे साहित्य में होती है।"[154]

दलित साहित्य में स्वानुभूति की चर्चा के संदर्भ में पी. एन. सिंह का मानना है कि दलित साहित्य दोहराव का शिकार हो रहा है और इसमें मौलिकता का अभाव दिखाई पड़ रहा है। इसके पीछे का बड़ा कारण दलित साहित्य को सहानुभूति तक सीमित रखने की प्रवृत्ति है। क्योंकि दलित साहित्य को शिल्पगत विविधता और नवीनता की आवश्यकता है। दलित साहित्य अब किशोरावस्था को पार कर चुका है। इसके रचनाकार रचनात्मक स्तर पर प्रौढ़ हो

---

[154] मैनेजर पाण्डेय, अनभै सांचा, नई दिल्ली:वाणी प्रकाशन, 2012 पृष्ठ संख्या- 285

चुके हैं। वे यहाँ तक कहते हैं कि दलित साहित्य में उपन्यास, नाटक एवं प्रबंधकाव्य जैसी विधाओं के अभाव का एक महत्वपूर्ण कारण 'सहानुभूति' की लक्ष्मण रेखा है।

4.3.6 विभिन्न ब्लॉग में दलित छवि

सृष्टि के औपनिवेशिक काल से आज तक भारतीय सामाजिक संरचना में शूद्र, वैश्य, पंडित, क्षत्रिय चार ऐसे वर्ण रहे हैं जिन्होंने अपने अपने स्तर पर समाज के विकास में अपना अहम योगदान दिया है। इन चारों वर्णों में से शूद्र वर्ग एक ऐसा वर्ग रहा है जिसकी आर्थिक सामाजिक स्थिति सृष्टि के आरंभिक काल से लेकर आधुनिक समय तक दयनीय ही बनी हुई है। शताब्दियों से प्रभुत्ववादी वर्ग ने सामाजिक संरचना में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले सभी संसाधनों पर अपना कब्जा जमा कर दलितों को मुख्यधारा से विमुख कर हाशिए पर जीवन व्यतीत करने के लिए मजबूर किया है। समय-समय पर अनेक बुद्धिजीवी दलितों की आवाज बनकर उनकी समस्याओं और उनके शोषण की कहानी को समाज के सम्मुख रखते हैं। एक समय में जब खड़ी बोली के विकास के साथ-साथ साहित्य की विभिन्न विधाओं में जनमानस के शोषण को अभिव्यक्ति देने का कार्य शुरू होता है और हाशिए पर जीवन व्यतीत कर रहे दलितों को भी अभिव्यक्ति मिलती है।

वर्तमान समय में टेक्नोलॉजी के माध्यम से जहाँ सभी कुछ व्हाट्सएप, ट्विटर, फेसबुक, ब्लॉग इत्यादि माध्यमों से साझा किया जा रहा है। दलित वर्ग भी आज इसी टेक्नोलॉजी को माध्यम बना कर अपने शोषण की कहानी को चित्रित कर रहा है। वर्तमान समय में बहुत से ब्लॉगर्स ब्लॉग के माध्यम से दलितों के शोषण व उनसे जुड़ी हुई समस्याओं को आवाज दे रहे हैं। जिनमे दलित मुक्ति, दलित विमर्श, international dalit solidarity network, dalitweb.org, दलितों से जुड़े ब्लॉग में ब्लॉगर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं।

'दलित मुक्ति ब्लॉग' दलितों से जुड़ी हुई समस्याओं तथा उनके शोषण की गाथाओं को पूरी बेबाकी के साथ उठाता है 'दलित मुक्ति ब्लॉग ' की शुरुआत 2011 में हुई थी यह ब्लॉग ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य व ज्वलंत मुद्दों पर सक्रिय भूमिका का निर्वाह कर रहा है। 24 सितंबर 1932 ईस्वी को महात्मा गाँधी और अंबेडकर के बीच हुआ पूना पैक्ट समझौता जिसमें बाबा साहब अंबेडकर को दलित वर्ग के लिए पृथक निर्वाचन मंडल को त्याग कर दलित वर्ग के लिए आरक्षित सीटों की संख्या प्रांतीय विधान-मंडलों में 71 से बढ़ाकर 147 और केंद्रीय विधायिका में कुल सीटों की संख्या 18 परसेंट स्वीकार करनी पड़ी थी।

इसी संदर्भ को एस.आर. दारापुरी ऑल इंडिया पिपुल्स फंड के राष्ट्रीय प्रवक्ता 'पूना पैक्ट समझौता' की पुनः व्याख्या करते हुए अपनी एक पोस्ट 'पूना पैक्ट :एक पुनर्मूल्यांकन' में लिखते है,- "दलित कई प्रकार की वंचनाओं एवं निर्योग्यताओं को झेलते रहे हैं। उनका हिन्दू समाज एवं राजनीति में बराबरी का दर्जा पाने के संघर्ष का एक लम्बा इतिहास रहा है। जब श्री. ई.एस. मान्तेग्यु, सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट फॉर इंडिया, ने पार्लियामेंट में 1917 में यह महत्वपूर्ण घोषणा की कि अंग्रेजी सरकार का अंतिम लक्ष्य भारत को डोमिनियन स्टेट्स देना है तो दलितों ने बम्बई में दो मीटिंगें करके अपना मांग पत्र वाइसराय तथा भारत भ्रमण पर भारत आये सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट फॉर इंडिया को दिया। परिणामस्वरूप निम्न जातियों को विभिन्न प्रान्तों में अपनी समस्यायों को 1919 के भारतीय संवैधानिक सुधारों के पूर्व भ्रमण कर रहे कमिशन को पेश करने का मौका मिला।"[155]

---

[155] http://dalitmukti.blogspot.com/search/label/%E0%A4%AA%E0%A5%82%E0%A4%A8%E0%A4%BE%20%E0%A4%AA%E0%A5%88%E0%A4%95%E0%A4%9F , Date - 18/03/2020, time - 17:26

4.3.7 दलितों की मुक्ति का प्रश्न और पूँजीवाद

ब्लॉगों में दलित विमर्श के अन्य पहलूओं पर भी विचार किया गया है जैसे कि दलित उत्थान के प्रश्न की बात करें तो, ब्लॉगर जगदीश्वर चतुर्वेदी अपने ब्लॉग 'नया जमाना' की एक पोस्ट 'नवजागरण और शूद्रों की मुक्ति के सवाल' के सन्दर्भ में एक प्रश्न उठाते है कि,- "दलित मुक्ति का सवाल जहाँ एक ओर दलितों की मुक्ति से जुड़ा है वहीं दूसरी ओर यह सवाल फुले-अम्बेडकर के सत्ता विमर्श से जुड़ा है । इन दोनों को अंग्रेजों के शासन से कोई गंभीर शिकायत नहीं है । ये दोनों ही तत्कालीन सत्ता से हमदर्दी रखते हैं । सवाल यह है क्या दलितों की मुक्ति पूंजीवाद में संभव है? क्या पूंजीवादी सत्ता विमर्श में वैकल्पिक नजरिए से शामिल हुए बगैर दलित के लिए संघर्ष करना संभव है?"[156] यह ब्लॉगर की अपनी राय है यह कहा तक और किस हद तक सही है यह बात ठीक – ठीक बता पाना आसान नहीं है क्योंकि इस पर अभी और चिंतन होना शेष है ।

अतः मुक्ति मानव की स्वाभाविक चेष्टा होती है, मनुष्य की प्रकृति में मुक्ति का प्रश्न अनुस्यूत होता है, पर कई बार सत्ता संरचना ऐसी होती है कि मुक्ति का प्रश्न आधिपत्य की संरचना के भीतर दबा रह कर सुलगता रहता है, ठन्डे पुआल को अंगीठी से हमेशा डर बना रहता है, अंगीठी परम्परा के भीतर का ही हिस्सा होता है, इसी परम्परा में अश्वघोष, सरहपा, कबीर, तुलसीदास, ज्योतिबाफुले, अम्बेडकर जैसे लोग हुए हैं जिसने मुक्ति को सामाजिक संरचना का अपरिहार्य प्रश्न बनाया है, इसलिए दलित मुक्ति का सवाल फुले अम्बेडकर के सत्ता विमर्श से जुड़ा सवाल है ।

---

[156] http://jagadishwarchaturvedi.blogspot.com/search/label/%E0%A4%A6%E0%A4%B2%E0%A4%BF%E0%A4%A4%20%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%B9%E0%A4%BF%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%AF, Date - 18/03/2020, time - 17:36

आजादी के 73 साल बाद दलितों की स्थिति दयनीय बनी हुई है। आजादी के 73 सालों में कई बार सत्ता परिवर्तन हुए पर दलितों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति में कोई भी परिवर्तन दिखाई नहीं देता।

कहा जाता है कि आजादी से पूर्व वैदिक काल में दलितों को कुओं से पानी पीने का अधिकार नहीं था, पढ़ाई करने का अधिकार नहीं था, मंदिर में प्रवेश का अधिकार नहीं था। ब्राह्मणों द्वारा वेदों का उच्चारण मात्र सुन लेने मात्र से दलितों के कानों में शीशा डाल दिया जाता था, अगर कोई दलित मंत्र उच्चारण करे ले तो उसकी जिह्वा काट दी जाती थी उसे लाठी-डंडों से पीटा जाता था। अगर दलित की परछाई किसी सवर्ण के ऊपर पड़ जाती थी तो उसे विभिन्न प्रताड़नाओ का सामना करना पड़ता था केवल जाति के नाम पर अछूत समझा जाता था, ऐसा अछूत जिसे देखने सुनने मात्र से ही धर्म भ्रष्ट हो जाता था।

4.3.8 दलित समस्या और कानून

दलितों के उत्थान के सन्दर्भ में ब्लॉगरों का मानना है कि- कानून बनाना मात्र दलित समस्या का समाधान नहीं है**,** तमाम विचारक हैं , जो कानून बनाने को ही एकमात्र दलितों की समस्या का समाधान मानते हैं, जब कि वास्तविकता इसके विपरीत है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर 'कंवल भारती अपनी एक ब्लॉग पोस्ट 'दलित अस्मिता का अर्थ' में लिखते हैं,- ''स्वतन्त्र भारत के संविधान ने जब उन पर लादी गई अस्पृश्यता समाप्त कर उन्हें समान मानवाधिकार प्रदान किए, तो सवर्ण मानसिकता उसे अपनी धर्म-संहिता में हस्तक्षेप मानकर उसे आज भी समाज में स्वीकार नहीं करती। इसीलिए, स्कूलों में उनके बच्चों के साथ बदसलूकी, उनकी स्त्रियों के साथ बलात्कार और उनकी स्वतन्त्रता को कुचलने के लिए उन पर हर तरह के जुल्म किये जाते, जहाँ तक कि उन्हें मौत के घाट उतारने में भी उन्हें कोई संकोच नहीं होता है। इस सबके मूल में वही जातीय पहचान है, जो इस तरह गढ़ी गई है कि मनुष्य के रूप में उनका कोई

मूल्य ही नहीं है ।?"[157] अतः दलित के उत्पीड़न को लेकर कई सख्त कानून बनाए गये हैं किन्तु तमाम कानून बनाने के बाद भी दलितों का उत्पीडन पूरी तरह से खत्म नहीं हो पाया है।

4.3.9 दलित विमर्श सीमाएँ एवं सम्भावनाएं

भारतीय साहित्य में विमर्श को अलग-अलग परिप्रेक्ष्य में बांट कर देखा जा रहा है दलित विमर्श भी उन्हीं विमर्शों में से एक है। अब सवाल यह उठता है कि दलित कौन है? तो भारतीय संविधान में वर्णित कुछ जातियों को सुप्रीम कोर्ट ने अनुसूचित जाति का नाम दिया है। साहित्य में उन्हीं जाति के लोगों को 'दलित' श्रेणी में बाँटकर देखा जाता है। साहित्य में इन्हीं जाति के लोगों को 'दलित' शब्द के रूप में रूढ़ बना दिया गया है। जो कि गलत है क्योंकि दलित शब्द का तात्पर्य ऐसे लोगों से है जिन्हें दबाया गया है, जिनके अधिकारों का हनन किया गया है और जिन्हें समाज की मुख्यधारा से काटकर अलग कर दिया गया है। ऐसे लोग किसी भी जाति या धर्म के लोग हो सकते हैं, उन्हें किसी जाति धर्म में बांधकर देखना उनके अर्थ को संकुचित करना है।

दलित सिर्फ संविधान में वर्णित अनुसूचित जाति के लोगों के लिए प्रयुक्त हो, यह बात तार्किक नहीं लगती है। मेरा मानना है कि हर वह मनुष्य दलित है जो मुख्यधारा से अलग-थलग पड़ा हुआ है, जबकि साहित्य में ऐसा नहीं माना गया है। जहाँ तक दलित साहित्य का संबंध है उसमें भी भेद-भाव बढ़ता गया है। अनुसूचित जाति के लोगों द्वारा लिखे गए साहित्य को 'दलित साहित्य' कहा जाता है परन्तु इस पर भी विवाद है।

इस सन्दर्भ में आलोचकों का एक खेमा ऐसा है जो अनुसूचित जाति से संबंध रखने वाले लेखकों द्वारा लिखे गए साहित्य को ही 'दलित साहित्य' मानने के पक्ष में है जबकि दूसरा

---

[157]http://kbharti53.blogspot.com/2015/09/blog-post.html?m=1, Date - 18/03/2020, time - 17:30

खेमा किसी खास वर्ग के लोगों तक ही सीमित करके देखने की इस प्रवृति को ठीक नहीं मानते हैं। उनका मानना है कि समाज में उपेक्षित, वंचित और गैर दलित लेखकों द्वारा लिखे गए साहित्य को भी दलित साहित्य की मान्यता देनी चाहिए बशर्ते उनके लेखन में दलित चेतना निहित हो। चाहे उसकी जाति अनुसूचित जाति हो या सामान्य जाति हो।

4.3.10 दलित चेतना का अस्तित्तव बोध और ब्लॉग

दलित चेतना का अस्तित्व बोध जरुरी है। यह एक विचारणीय बिंदु है कि दलित चेतना का आरम्भ कब से हुआ तथा कब दलित साहित्य एवं विमर्श ने एक व्यवस्थित स्वरूप लिया। यह जानना आवश्यक है। इस सन्दर्भ में विचार करें तो, साहित्य में 'दलित शब्द' का प्रयोग कबसे शुरू होता है इसकी चर्चा के सन्दर्भ हमें दोनों वर्गो के लेखकों को 'दलित साहित्य' में स्थान देना चाहिए। साहित्य में 'दलित शब्द' का प्रयोग कबसे शुरू होता है इसकी चर्चा के सन्दर्भ में बजरंग बिहारी तिवारी लिखते हैं,- "बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा प्रयुक्त 'ब्रोकन मैन' के पर्याय के तौर पर दलित शब्द प्रयुक्त होना शुरू हुआ। उनके परिनिर्वाण के दो वर्ष बाद 1958 में दलित के साथ साहित्य का सचेत प्रयोग किया है। इस प्रकार 'दलित साहित्य' पदबंध अस्तित्व में आया।"[158]

इस तरह हम देखते हैं कि बजरंग बिहारी तिवारी के कथन से यह बात साफ जाहिर होती है कि बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा प्रयुक्त 'ब्रोकन मैन' के पर्याय के तौर पर दलित शब्द (1958) में प्रयोग में आया। लेकिन कोई भी विचार या चिंतन अचानक जन्म नहीं लेता। उसके पीछे एक लंबी परंपरा होती है, जो किसी न किसी रूप में ऊर्जा का संचार करती रहती है। यह ठीक वैसा ही है जैसा कि कोई मीनार जितनी ऊंची होती है उसकी नींव उतनी ही गहरी

---

[158] https://www.jansatta.com/sunday-column/broken-man-dr-bhimrao-ambedkar-dalit-dalit-india-litrature/53043/,date 31/12/2019, time-07:08

होती है। परंतु हमें मीनार की बाहरी सूरत तो दिखाई देती है, लेकिन मीनार की नींव और उसमें लगी मजबूत ईंटे दिखाई नहीं देती हैं, जिस पर मीनार का भार टिका होता है।

आज 21वीं सदी के लोकप्रिय विमर्शों में 'दलित विमर्श' का महत्त्वपूर्ण स्थान है जिसकी नींव में ऐसी कई मजबूत ईंटें लगी हैं जो दिखाई तो नहीं देती लेकिन इस बात का एहसास जरुर करा देती है कि नींव जितनी गहरी होती है, मीनार उतनी ही मजबूत होती है। इस उदाहरण को ध्यान में रखते हुए दलित विमर्श की चर्चा करें तो हम देखेंगें कि- आज जिस तरह से दलित विमर्श पर विचार किया जा रहा है उस तरह से रामचंद्र शुक्ल ने विचार नहीं किया है लेकिन निर्गुण मत, कबीर, रैदास और दादू आदि पर विचार करते हुए वे लिखते हैं,-"इसमें कोई संदेह नहीं कि कबीर ने ठीक मौके पर जनता के उस बड़े भाग को संभाला जो नाथपंथियों के प्रभाव से प्रेमभाव और भक्ति रस से शून्य और शुष्क पड़ता जा रहा था। उनके द्वारा यह बहुत ही आवश्यक कार्य हुआ। इसके साथ ही मनुष्य की सामान्य भावना को आगे करके निम्न श्रेणी की जनता में उन्होंने आत्म गौरव का भाव जगाया।"[159]

यहाँ हम देखते हैं कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने निम्न श्रेणी की जनता में आत्म गौरव का भाव जगाने के कार्य को कबीर की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि मानते हैं। जिस पर विचार करने की जरुरत है। क्योंकि आज भी 'दलित विमर्श' कबीर से अपनी परंपरा को इसलिए जोड़ पाता है क्योंकि कबीर ने निम्न श्रेणी की जनता में जिनमें ज्यादातर दलित और दमित जाति एवं वर्ग के लोग आते हैं, उनमें कबीर ने आत्मगौरव का भाव जगाने में सफलता हासिल की है।

इस संदर्भ में देवेंद्र चौबे का मानना है कि हिंदी में दलित जीवन से जुड़ी हुई रचनाएं यद्यपि कबीर, रैदास, हीरा डोम, निराला, प्रेमचंद, राहुल सांकृत्यायन के यहाँ मिलती है लेकिन

[159] रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, विश्वभारती पब्लिकेशन,नई दिल्ली, संस्करण:2016,पृष्ठ-संख्या- 55-56

उनकी रचनाओं की पहचान दलित साहित्य के रूप में न होकर हाशिये अथवा निम्न वर्गीय साहित्य के रूप में होती हैं। वे लिखते हैं,- "हिंदी में दलित जीवन से जुड़ी रचनाओं की शुरुआत यद्यपि कबीर, रैदास, हीरा डोम, निराला, प्रेमचंद, राहुल सांकृत्यायन जैसे रचनाकारों से होती है, लेकिन उनकी रचनाओं की पहचान दलित साहित्य के रूप में कम, हाशिये अथवा निम्नवर्गीय समाज पर केंद्रित साहित्य के रूप में अधिक होती है।"[160] इस संदर्भ में हजारी प्रसाद द्विवेदी की बात की जाए तो, वे दलित जीवन से जुड़ी रचनाओं की शुरुआत कबीर, रैदास से बहुत पहले अश्वघोष और सरहपा से मानने के पक्ष में दिखाई देते हैं। वे कहते है ऐसा नहीं है कि, उच्च वर्ग के लोगों ने तटस्थता का ध्यान नहीं रखा है। उन्होंने भी उग्र स्वर में लेखन कार्य किया है इसके लिए वे अश्वघोष और सरहपा का हवाला देते हैं। वे इस बात की भी चर्चा करते हैं कि दलित लेखन में उग्रता और तीव्रता का महत्वपूर्ण स्थान है।

वे लिखते हैं,- "उच्च वर्ग के लोगों ने सदा तटस्थता का ही अवलंबन नहीं किया, कभी-कभी उन्होंने भी उग्रतम आक्रमण किया है। अश्वघोष (कालिदास के पूर्ववर्ती कवि) की लिखी हुई वज्रसूची एक ऐसी ही पुस्तक है। सरोरुहपाद (सरहपा) नामक सहजयानी सिद्ध जाति व्यवस्था के भयंकर विरोधी थे। वे कहते हैं,- 'ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुए थे; जब हुए थे तब हुए थे। इस समय तो वे भी दूसरे लोग जिस प्रकार पैदा होते हैं वैसे ही पैदा हो रहे हैं, तो फिर ब्राह्मणत्व रहा कहाँ?'"[161]

इस संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि की चर्चा करें तो वे बुद्ध के क्षत्रिय जाति (गैर दलित) होने की वजह से उनके लेखन को दलित साहित्य की परंपरा में तो मानते हैं, लेकिन दलित साहित्य के अंतर्गत नहीं रखते हैं। वे कहते हैं,- "समकालीन हिंदी दलित कविता की

---

[160] देवेन्द्र चौबे, आधुनिक साहित्य में दलित विमर्श, ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली , संस्करण 2005, पृष्ठ संख्या- 57

[161] हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली, संस्करण:2006, पृष्ठ संख्या- 42-43

पूर्वपीठिका के रूप में संत कवियों का योगदान महत्वपूर्ण कहा जा सकता है। लेकिन दलित कविता संत कवियों से शुरू होती है इसे नहीं माना जा सकता है। क्योंकि दलित कविता जिस वैचारिक और मुक्ति-संघर्ष से एक विस्फोट के रूप में सामने आई है, वहाँ संतकालीन कविताएं वैसा प्रभाव छोड़ने में असमर्थ रही हैं"[162]

4.3.11 दलित समस्या आर्थिक बनाम सामाजिक

कंवल भारती अपने ब्लॉग 'दलित विमर्श' की एक पोस्ट 'आरक्षण, जातिवाद और दलित-मुक्ति का प्रश्न' में लिखते है कि दलित अछूत है इसी वजह से उनसे जातिगत भेदभाव किया जाता है। वे लिखते हैं, वर्तमान में कुछ विचारकों ने दलित समस्या को आर्थिक पहलू से परिभाषित करने का प्रयास किया है किन्तु दलित विचारकों ने इस अवधारणा को स्वीकार नहीं किया है। उनके मत में दलित समस्या आर्थिक न होकर सामाजिक है। इस संदर्भ में कंवल भारती अपने ब्लॉग 'दलित विमर्श' की एक पोस्ट 'आरक्षण, जातिवाद और दलित-मुक्ति का प्रश्न' में लिखते है कि दलित अछूत है इसी वजह से उनसे जातिगत भेदभाव किया जाता है। वे लिखते हैं,- "दलित जातियां गरीबी की वजह से समान अधिकारों और सुविधाओं से वंचित नहीं थीं, बहुत सी दलित जातियां उत्पादन से जुड़ी थीं और उनके पास पैसा था। वे पैसा देकर पढ़ सकते थे, पर उनके लिये शिक्षा के दरवाजे बन्द थे। उनकी इतनी हैसियत थी कि वे सोने के जेवर खरीद सकते थे और पक्का घर बना सकते थे। पर उन्हें साफ कपड़े और जेवर पहनने की मनाही थी, पक्के मकान बनाने की मनाही थी, मन्दिरों में घुसने और राजमार्गों पर चलने तक पर पाबन्दी थी। यहाँ तक कि उन्हें गन्दे, घृणित और कठोर काम करने के सिवा स्वच्छ और सम्मान जनक व्यवसाय करने की भी आजादी नहीं थी। वे भारतीय समाज-व्यवस्था में अछूत थे, जिन्हें छूना तो दूर, सवर्ण हिन्दू उनकी परछाई से भी बच

[162] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2010), मुख्यधारा और दलित साहित्य, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-65

कर चलते थे ।" [163] अतः निष्कर्ष रूप में कहें तो दलित साहित्य जाति प्रथा के विरुद्ध एक संघर्ष का साहित्य हैं। उसका स्वर जातिवाद की चक्की में पिसते हुए मानव की उग्रता और आक्रामकता का स्वर है। जिसका कारण वर्षों से होने वाला अन्याय और अत्याचार है। यही कारण है कि दलित साहित्य में जातिवाद की अमानवीयता के प्रति बड़ा आक्रोश है । जातिवाद के कारण लंबे समय से दलितों पर अन्याय और अत्याचार होते रहे हैं। इसी वजह से दलित साहित्य में आक्रोश का होना सम्भव है।

इस संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि कहते हैं कि यह आक्रोश वर्णवादी व्यवस्था के खिलाफ है और दलित साहित्य पूरे समाज की मुक्ति की भावना से परिपूर्ण साहित्य है। उनका मानना है कि,- "दलित लेखन केवल दलितों के अधिकार एवं मूल्यों तक ही सीमित नहीं है बल्कि सामाजिक संदर्भों के साथ जुड़कर समूचे समाज की अस्मिता और मूल्यों की पहचान बनता है।"[164]

कवंल भारती दलित विमर्श को दलितों के अधिकारों तक सीमित नहीं मानते। वे उस आम धारणा का विरोध करते हैं, जिसमें दलित विमर्श को महज दलितों की समस्याओं से जोड़कर देखा जाता है। वे दलित समस्या को राष्ट्र की समस्या के रूप में देखते हैं और दलित की मुक्ति को राष्ट्रीय मुक्ति के रूप में देखते हैं। इस सन्दर्भ में उनका मानना है कि,- "दलित विमर्श सिर्फ एक जाति का विमर्श नहीं है, जैसा कि आम धारणा है कि किसी दलित समस्या को लेकर किया गया विमर्श ही दलित विमर्श है। यह धारणा गलत है। दलित विमर्श के केंद्र में दलित समस्या को नहीं नकारा जा सकता है। ... इसके केंद्र में दलित मुक्ति का प्रश्न राष्ट्रीय मुक्ति का प्रश्न है।"[165]

[163] http://kbharti53.blogspot.com/2013/10/,date-31/12/2016,time-13:06

[164] ओमप्रकाश वाल्मीकि (2001), दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 22

[165] कंवल भारती, दलित-साहित्य की भूमिका, पृष्ठ-14

4.4 'हिंदी ब्लॉग और आदिवासी विमर्श'

4.4.1 आदिवासी शब्द का अर्थ परिभाषा एवं स्वरूप

आदिवासी कौन है? इस संबंध में अभी तक स्पष्टता नहीं बन पाई है। समाजशास्त्रियों एवं साहित्यकारों द्वारा हुए आदिवासी लेखन में कई स्तरों पर अंतर्विरोध दिखाई पड़ता है। इस संदर्भ में हम 'आदिवासी' शब्द पर विचार करें तो विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार की परिभाषाएं दी हैं परन्तु आदिवासी समाज की कोई भी पूर्णरूपेण परिभाषा अभी तक प्रचलित नहीं हो पाई है।

हालाँकि समय-समय पर आदिवासी की विभिन्न परिभाषाएं दी गई हैं, परन्तु यह परिभाषाएं केवल विशेष परिस्थिति की ही हैं जो किसी जनजाति विशेष के लिए ही उपयुक्त सिद्ध होती हैं। एक जनजातीय समाज दूसरे जनजाति समाज से भिन्न होता है, इसलिए सामाजिक, राजनीतिक, भाषिक तथा जनसंख्या के आधार पर इनकी विशेषताएं भी अलग अलग होती हैं।

कहा जाता है कि आदिवासी वे हैं जो किसी देश के मूल एवं प्राचीनतम निवासी हैं। हिंदी के 'आदिवासी दर्शन' पोस्ट में ब्लॉगर लिखते हैं,- "आदिवासी कोई जाति या कोई धर्म नहीं है, आदिवासी उन जातियों का समूह है, जो भारत में अनादिकाल से वास कर रहे हैं, जैसे कि मुंडा, हो, गरासिया, भील, भिलाला इत्यादि। आदिमजाति के समूह को 'आदिवासी' कहा जाता है।"[166] इस तरह हर देश में वहाँ के आदिवासियों को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है।

कुछ विद्वानों का मानना है कि आदिवासी शब्द ज्यादा उपयुक्त है तो, कुछ आदिम जातियाँ, तो कुछ इन्हें निर्जन क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियाँ मानते हैं। इस संदर्भ में रमणिका

[166] http://adiwasidarsan.blogspot.com/p/blog-page_88.html , date- 04/09/2020, time- 06:07

गुप्ता लिखती हैं,- "आदिवासी शब्द के समानांतर अनेक शब्दों का प्रयोग होता आ रहा है। जिसके कारण इस शब्द की अवधारणा और अर्थ के संबंध में विवाद बना हुआ है। जिन शब्दों का हिंदी में प्रयोग हुआ है, वह हैं - गिरिजन, वनवासी, प्राचीन निवासी, अनुसूचित जनजाति ये शब्द एक सीमित अर्थ को व्यक्त करते हैं। गिरिजन का अभिप्राय है - पर्वत की कंदराओं में रहने वाला। इससे यह ध्वनित होता है कि आदिवासी केवल पर्वत का निवासी है और उसका विस्तार अन्यत्र नहीं है। वनवासी शब्द का अभिप्राय है जंगल/ वन का निवासी। यह शब्द एकांगी अर्थ को ध्वनित करता है। अतः यह स्वीकृत नहीं हो सकता। प्राचीन निवासी शब्द का आशय है वह प्रजाति, जो किसी देश, क्षेत्र में प्राचीन समय से निवास करती रही हो। इसके लिए यह जरूरी नहीं है कि उसका आरंभिक निवास वही क्षेत्र रहा हो। अतः यह शब्द भी इस रूप में पूर्णरूपेण 'आदिवासी' अर्थ की अवधारणा को व्यक्त नहीं करता है। जनजाति शब्द लैटिन 'tribuz' के अंग्रेजी शब्द 'tribal' के पर्याय के रूप में हिंदी में गढ़ा गया। यह शब्द अपने आप में भ्रामक और अनिश्चित है। अनुसूचित जनजाति सांविधानिक शब्द है।"[167]

इसी सन्दर्भ में वे आगे लिखती हैं,- "आदिवासी शब्द अंग्रेजी के Aboriginal (आदिम), Indigenous (मूलवासी) के पर्याय के रूप में मान्य और स्वीकृत है। आदिवासी शब्द अपने आप में इस अर्थ को व्यक्त करता है कि- देश विशेष का प्राचीनतम, आदिम या मूलनिवासी। 'आदिवासी' अपनी भाषिक विशिष्टता, संस्कृति, प्रजाति एवं प्रकृति आधारित धर्म के कारण समाज की मुख्यधारा से अलग होता है। यही इसकी विशिष्टता भी है और अन्य समाजों से इसके अलगाव का कारण भी।"[168] इस सन्दर्भ में 'आदिवासी दर्शन' पोस्ट में ब्लॉगर लिखते हैं,- "आदिवासी शब्द आदि + वासी दो शब्दों का बना है जिसका अर्थ

---

[167] रमणिका गुप्ता , युद्धरत आम आदमी (त्रैमासिक) , अंक – 90 , जनवरी – मार्च – 2008 , पृष्ठ संख्या – 81
[168] रमणिका गुप्ता , युद्धरत आम आदमी (त्रैमासिक) , अंक – 90 , जनवरी – मार्च – 2008 , पृष्ठ संख्या – 81

अनादि काल से + भौगोलिक स्थान पर वास करने वाला व्यक्ति, समुदाय = मूलवासी / आदिवासी ऐसा होता है। आज आदिवासियों के कई नाम हैं, जो लोगों ने अपने राजनैतिक फायदों के लिए दिए हैं, जैसे कि वनवासी, वनबन्धु, जंगली, मूलनिवासी, गिरिजन, बर्बर, एबोरिजनल, जनजाति है । आदिवासियों का सांविधानिक नाम 'अनुसूचित जनजाति (Schedule Tribe) ST' है।"[169] अतः आदिवासियों की अपनी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था होती है जो इस समुदाय को मुख्यधारा के समाज से अलग करती है। उन्हें जानना है तो उनकी संस्कृति को जानना और समझना होगा। आदिवासी संस्कृति की अपनी विशिष्ट पहचान है । इसके अंतर्गत जाति समानता, लिंग समानता, सहभागिता, संयोगिता, सामूहिकता, भाईचारा एवं प्रकृति से गहरा लगाव है। ये प्रकृति प्रेमी हैं , जो अन्य संस्कृतियों से आदिवासी को अलग करती हैं। आदिवासी संस्कृति सरल एवं साधारण जीवन पर बल देती है। प्रकृति के साथ चलती है, प्रकृति की सहयोगी होती है।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर डॉ. गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं,- " कोई भी आंदोलन किसी तिथि विशेष से अचानक शुरू नहीं हो जाता उसके उद्भव और विकास में तमाम परिस्थितियां अपनी भूमिका निभाती हैं समकालीन आदिवासी लेखन और विमर्श की शुरुआत हमें 1991 के बाद से माननी चाहिए। नई आर्थिक नीतियों ने आदिवासी शोषण उत्पीड़न की प्रक्रिया तेज की इसलिए उसका प्रतिरोध भी मुखर हुआ । प्रतिरोध का स्वरूप राष्ट्रीय था इसलिए प्रतिरोध से निकली रचनात्मक ऊर्जा देशभर में फूटी इसमें आदिवासी और गैर आदिवासी रचनाकार दोनों पर बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रहे हैं। इस साहित्य का भूगोल समाज भाषा संदर्भ से साहित्य से उसी तरह पृथक है जैसे स्वयं आदिवासी समाज और यही पार्थक्य इसकी मुख्य विशेषता है"[170] आदिवासी संस्कृति में प्रकृति के नियम

[169] http://adiwasidarsan.blogspot.com/p/blog-page_88.html , date- 04/09/2020, time- 06:20
[170]http://gsmeena.blogspot.com/2013/02/blog-post.html,05/07/2020,07:30

के अंतर्गत संग्रह की अपेक्षा त्याग, प्रतिशोध की अपेक्षा दया, क्षमा आदि को विशेष महत्व दिया जाता है क्योंकि आदिवासी समाज की जरूरतें बिल्कुल सरल, सहज व सामान्य तथा सीमित हैं। किसी भी वस्तु का एकत्रीकरण इनकी संस्कृति में नहीं है, इनके यहाँ प्रकृति पूजा का विशेष महत्व है। इनके पूजा स्थल कोई इमारत या भवन नहीं होते बल्कि खुला आकाश होता है, जहाँ कभी भी पूजा-पाठ कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर अपनी पोस्ट 'आदिवासी दर्शन' में लिखते हैं,- "आदिवासी संस्कृति, सभ्यता और व्यवहार सभी धर्मों से बढ़कर है, पहले खुद को समझो बाद में अपने आदिवासी होने पे गर्व करो, जब तक आप आदिवासी क्या है ? यह समझेंगे ही नहीं तब तक आप अपने आप में 'गर्व' नहीं कर सकोगे क्योंकि आपकी नजर में आदिवासी अर्थ जैसे फिल्मों में दिखाते हैं वैसा हिप-हिप-हुर्रे, झिंगालाला हो हो, झिंगालाला हो हो, अधनंगे, चोर-लूटेरे, जंगली, इंसान को खाने वाला ही है, मैं खुद को आदिवासी होने पर गर्व करता हूँ, क्योंकि ...हम इस देश के मालिक हैं और सदियों से इस देश में निवास करते हैं, आदिवासी का अर्थ ही किसी भौगोलिक स्थान पे अनादिकाल से निवास करना है और मैं वो आदिवासी हूँ जो भारत में सदियों से रह रहा हूँ, भारत देश का मालिक हूँ।"[171]

अतः आदिवासी संस्कृति और प्रकृति के बीच एक गहरा एवं आत्मीय रिश्ता होता है। यही कारण है कि प्रकृति प्रदत्त वृक्षों को आदिवासियों ने अपने जीवन से जोड़ लिया है जबकि सभ्य कहे जाने वाले और विकसित संस्कृति वाले समाज से प्रकृति का संबंध संघर्षमूलक रहा है। इसलिए वहाँ प्रकृति का दोहन, विनाश या आजकल जो संरक्षण का विचार आया है वह महज भौतिक उपयोगिता के स्तर का है। वर्तमान युग में प्रकृति से इनका संबंध सिर्फ वैज्ञानिक विकास, औद्योगिक विकास और वाणिज्यिक विकास तक ही सीमित नजर आता है।

[171] http://adiwasidarsan.blogspot.com/p/blog-page_88.html , date- 04/09/2020, time- 06:30

4.4.2 आदिवासी साहित्य की विशिष्टता और हिंदी का ब्लॉग लेखन

आदिवासी समाज में साहित्य रचने की प्रकृति पुरातन काल से ही रही है, लेकिन उस साहित्य का स्वरूप लिखित ना होकर मौखिक रहा है । इसके अंतर्गत अनगिनत लोक कथाएं, कहानियां, पहेलियाँ, किम्वदंतियाँ, लोकगीत, विनतीमंत्र, आराधना वंदना आदि विस्तृत रूप में लोक में व्याप्त रही हैं, जो उनके पर्वों, धार्मिक अनुष्ठानों, सांस्कृतिक अनुष्ठानों, शादी-ब्याह तथा विभिन्न रीति-रिवाजों में क्रमशः गाये, सुनाए, जाते रहे हैं ।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर डॉ. अजय खरते (अजय खरते) लिखते हैं,- "आदिवासी जीवन दर्शन किसी भी वर्गीकरण अर्थात् विभाजन के पक्ष में नहीं है, उनके समाज में समरूपता और समानता है, इसलिए उनका दर्शन और साहित्य भी विभाजित नहीं है । वह एक ही है । वे अपने साहित्य को 'आरेचर' कहते हैं और आरेचर अर्थात् ऑरल + लिटरेचर । उनके आज का लिखित साहित्य भी उनकी वाचिक यानी पुरखा साहित्य की परंपरा का ही साहित्य है । आरेचर की अवधारणा सबसे पहली युगांडा के आदिवासी लेखक पियो जिरिमू ने प्रस्तुत की थी जिसे दुनिया के अधिकांश आदिवासी लेखकों और साहित्यकारों ने स्वीकार किया ।"[172]

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर डॉ. गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं,- "आदिवासी लोक में साहित्य सहित विविध कला माध्यमों का विकास तथाकथित मुख्यधारा से पहले हो चुका था लेकिन वहाँ साहित्य सृजन की परंपरा मूलतः मौखिक रही जंगलों में खदेड़ दिए जाने के बाद भी आदिवासी समाज ने इस परंपरा को अनवरत जारी रखा । ठेठ जन भाषा में होने और सत्ता प्रतिष्ठानों से दूरी की वजह से यह साहित्य आदिवासी समाज की ही तरह उपेक्षा का शिकार हुआ । आज भी सैकड़ों देशज भाषाओं में आदिवासी साहित्य रचा जा रहा है जिसमें से अधिकांश से हमारा संवाद कायम

[172] https://jaykharte.blogspot.com/2018/03/blog-post_26.html, date- 04/09/2020, time- 06:36

होना अभी शेष है।"[173] इस तरह आदिवासी साहित्य की अवधारणा पर विचार करने से पूर्व इस बात पर विचार कर लेना चाहिए कि आदिवासी साहित्य की विशिष्टता और आवश्यकता क्या है ? इस दृष्टि से सर्वप्रथम यह देखना चाहिए कि आदिवासी कौन है? इस संदर्भ में विचार करें तो संयुक्त राष्ट्र ने अपने घोषणा पत्र आदिवासी राष्ट्र या समुदाय को परिभाषित किया है। इसके अनुसार,- "आदिवासी राष्ट्र का तात्पर्य उन लोगों के वंशजों से है जो किसी देश की वर्तमान भूमि के पूरे या कुछ भाग पर विश्व के अन्य भागों की किसी भिन्न संस्कृति अथवा नस्ल के लोगों द्वारा पराजित कर दिए जाने या उनके साथ किसी समझौते के तहत अथवा अन्य किसी तरह से वर्चस्वहीन अथवा औपनिवेशिक स्थिति में धकेल दिए जाने के पहले ही वहाँ रह रहे थे।"[174]

आदिवासी वह समुदाय है जो भारतवर्ष का सबसे प्राचीन समुदाय रहा है। जिसे सभ्यता के विकास के साथ-साथ समाज और सत्ता से दूर किया जाता रहा है। इस वजह से मुख्यधारा के समाज से उनका समाज और जीवन अलग रूप में विकसित होता रहा है। ऐसे में आदिवासी समुदाय को जानना समझना और व्याख्यायित करना अत्यंत आवश्यक बन जाता है। आदिवासी समुदाय सदियों से संघर्षपूर्ण जीवन जीता रहा है प्रकृति के साथ-साथ सत्ता के साथ भी उसका संघर्ष आजीवन चलता रहा है।

अतः आदिवासी साहित्य प्रतिरोध का साहित्य है, जो आदिवासी साहित्य के हितों और रक्षा की भावना से प्रेरित है। यह साहित्य परिवर्तनकारी साहित्य है। इसमें आदिवासियों का जीवन संघर्ष व्यक्त हुआ है। इस साहित्य में जल, जंगल और जमीन को बचाने की मुहिम है तो दूसरी तरफ आदिवासियों पर सदियों से हो रहे अत्याचार और शोषण के खिलाफ प्रतिकार का भाव है।

---

[173] http://gsmeena।blogspot।com/2013/02/blog-post।html,05/07/2020,07:28

[174] रमणिका गुप्ता , आदिवासी अस्मिता का संकट , पृष्ठ संख्या - 52

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर अपनी पोस्ट आदिवासी समाज की चुनौतियाँ में लिखते हैं,- “जमीन ही आदिवासी समाज का मूल आधार है। जमीन हम आदिवासियों के लिए संपत्ति नहीं है बल्कि यह हमारी पहचान, अस्मिता, संस्कृति, विरासत और अस्तित्व है। हमारे पूर्वजों ने जंगल-झाड़ को साफ कर तथा उँचा-नीचा स्थल को कोड़कर खेती योग्य जमीन बनाया। उन्होंने जमीन को हमारे लिए सुरक्षित रखने हेतु अपना खून बहाया और कुर्बानी दी।”[175] आदिवासी साहित्य मानवीय मूल्यों पर आधारित वह साहित्य है जो आदिवासियों की रक्षा के साथ-साथ शेष विश्व की बेहतरी का साहित्य है। इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता आदिवासी साहित्य को परिभाषित करती हुई लिखती हैं,- “आदिवासी साहित्य जीवन का साहित्य है वह प्रकृति का सहयोगी-सह-अस्तित्व का अभ्यस्त, ऊंच-नीच, भेद-भाव, छल-कपट से दूर है। वह जमाखोरी या संपत्ति जुटाने की भावना से मुक्त है। वह अन्याय का विरोधी और सामाजिक न्याय का पक्षधर है। उसके साहित्य में इन्हीं सब की अभिव्यक्ति है। जीवन की समस्याएँ और प्रकृति से लगाव उसके साहित्य का आधार है।”[176]

इस सदर्भ में ब्लॉगर लिखते हैं,- “आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक एवं कुटुम्ब व्यवस्था की अपनी अलग पहचान रही है। इन लोगों में पर्यावरण वन –संरक्षण करने की प्रबल वृत्ति है। अतः वन एवं पर्यावरण वन्य-जीवों से उतना ही प्राप्त करते हैं, जिससे उनका जीवन सुलभता से चल सके और आने वाली पीढ़ी को भी वन-स्थल धरोहर के रूप में सौंप सकें। इन लोगों में पर्यावरण वन संवर्धन, वन्य जीवों एवं पालतू पशुओं का संरक्षण करने की प्रवृत्ति परम्परागत है। इस कौशल दक्षता एवं प्रखरता के फलस्वरूप आदिवासियों ने

---

[175] https://adivasihunkar.blogspot.com/search/label/%E0%A4%9C%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%A8 19/04/2020,time 08:53

[176] गंगा सहाय मीणा (संपा.) , आदिवासी साहित्य विमर्श , ‘रमणिका गुप्ता का लेख- आदिवासी लेखन : एक उभरती चेतना’ , पृष्ठ संख्या - 35

पहाड़ों, घाटियों एवं प्राकृतिक वातावरण को संतुलित बनाये रखा ।"[177] अतः आदिवासी साहित्य जीवन की समस्याओं और प्रकृति से लगाव का साहित्य है । प्राचीन काल से ही प्रकृति के साथ सखा भाव और संघर्ष के माध्यम से ही आदिवासियों ने अपने जीवन को निर्मित करने का प्रयास किया है। इसलिए आदिवासी प्रकृति से प्रेम करने वाला समुदाय है। जीवन को उत्सव मानकर जीने वाला समुदाय है। ऊंच-नीच, भेद-भाव, छल -कपट एवं संपत्ति एकत्रित करने जैसी चीजों को महत्व नहीं देने वाला समुदाय है। वह प्रकृति के साथ ही मानव जीवन का अस्तित्व स्वीकार करने वाला समुदाय है। इसलिए आदिवासी संस्कृति में प्रकृति का मुनाफे के लिए दोहन करने के विरुद्ध प्रवृत्ति दिखाई देती है। आदिवासी संपत्ति में सबका समान अधिकार स्वीकार करते हैं। यही सारे विचार उनके साहित्य में भी प्रस्फुटित हुए हैं। अतः आदिवासियों का जीवन दर्शन ही आदिवासी साहित्य की मूल चेतना है।

4.4.3 आदिवासी साहित्य की कसौटी और हिंदी ब्लॉग

आदिवासी साहित्य के चिंतकों का मानना है कि आदिवासी साहित्य की कसौटी मुख्यधारा के साहित्य से अलग होनी चाहिए, क्योंकि आदिवासी जीवन, मुख्यधारा के जीवन से अलग एक विशिष्ट जीवन शैली पर आधारित होता है। इसलिए इस पर आधारित साहित्य भी अलग एवं विशिष्ट साहित्य होगा।

इस सन्दर्भ में डॉ. गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं,- "यह आदिवासी साहित्य की अवधारणा के निर्माण का दौर है आदिवासी साहित्य अस्मिता की खोज दिकुओं द्वारा किए गए और किए जा रहे शोषण के विभिन्न रूपों के उद्घाटन और आदिवासियों पर मंडराते संकटों और उसके मद्दे नजर हो रहे प्रतिरोध का साहित्य है। यह उस परिवर्तनकामी चेतना का रचनात्मक हस्तक्षेप है जो देश के मूल निवासियों के वंशजों के प्रति

---

[177] https://jaykharte.blogspot.com/2018/03/blog-post_26.html, 19/04/2020,time 08:58

किसी भी प्रकार के भेदभाव का पुरजोर विरोध करती है और उनके जल, जंगल, जमीन को बचाने के हक में उनके आत्मनिर्णय के अधिकार के साथ खड़ी होती है।"[178]

इस सन्दर्भ में एक और ब्लॉगर जो इस सन्दर्भ में विचार करते हुए लिखते है,- "जब तक आदिवासी क्षेत्रों के प्राकृतिक वातावरण में सेंध नहीं लगी थी, तब तक हमारी आरण्यक-संस्कृति बरकरार बनी रही। आधुनिक भौतिकवादी समाज ने भी कम कहर नहीं ढाया। इनकी उपस्थिति से उनके परम्परागत मूल्यों एवं सांस्कृतिक मूल्यों का जमकर ह्रास हुआ है। साफ़-सुथरी हवा में विचरने वाले, जंगल में मंगल मनाने वाले इन भोले -भाले आदिवासियों के जीवन में जहर सा घुल गया है। आज इन आदिवासियों को पिछड़ेपन, अशिक्षा, गरीबी, बेकारी एवं वन-विनाशक के प्रतीक के रूप में देखा जाने लगा है। उनकी आदिम संस्कृति एवं अस्मिता को चालाक और लालची उद्योपति खुले आम लूट रहे हैं। जंगल का राजा अथवा राजकुमार कहलाने वाला यह आदिवासीजन आज दिहाड़ी मजदूर के रुप में काम करता दिखलायी देता है। चंद सिक्कों में इनके श्रम-मूल्य की खरीद-फ़ारोख्त की जाती है और इन्हीं से जंगल के पेडों और जंगली पशु-पक्षियों को मारने के लिए अगुआ बनाया जाता है। उन्होंने सपने में भी कल्पना नहीं की होगी कि पीढ़ी दर पीढ़ी जिन जंगलों में वे रह रहे थे, उनके सारे अधिकारों को ग्रहण लग जाएगा।"[179]

रोज केरकेट्टा ने भी गंगा सहाय मीणा के साथ हुई बातचीत में कहा कि,- "जब आप यह मानते हैं कि आदिवासी एक विशिष्ट संस्कृति है, फिर उसके साहित्य को परखने के लिए भी एक विशिष्ट सौंदर्य बोध की जरूरत होगी। इस ओर हमारे आदिवासी लेखकों का ध्यान है और ना ही हिंदी का। यह समझना होगा कि हिंदी साहित्य को आदिवासी लेखन समृद्ध कर रहा है तो उसका समुचित मूल्यांकन उसकी विशिष्ट संस्कृति, जीवन शैली और मूल्य से किया

---

[178] http://gsmeena ।blogspot ।com/2013/02/blog-post ।html,05/07/2020,07:33

[179] https://jaykharte.blogspot.com/2018/03/blog-post_26.html, 19/04/2020,time 08:59

जाए। मूल्यांकन की यह नई चुनौती है। हिंदी की सौंदर्य दृष्टि को इसे स्वीकार करते हुए अपना विस्तार करना ही होगा। हिंदी के लेखकों, पाठकों को आदिवासी हिंदी लेखन को स्थान देना पड़ेगा।"[180]

अतः रोज केरकेट्टा आदिवासी साहित्य के लिए विशिष्ट सौंदर्य-बोधीय दृष्टि की आवश्यकता पर प्रकाश डालती है। उनका मानना है कि आदिवासी लेखन हिंदी साहित्य का ही विस्तार है। यह लेखन अपनी एक विशिष्ट पहचान के कारण हिंदी साहित्य को समृद्धि प्रदान कर रहा है। इसलिए इसका मूल्यांकन भी विशिष्ट सांस्कृतिक मूल्यों व जीवनशैली के आधार पर किया जाना चाहिए। यह एक चुनौतीपूर्ण कार्य है ,लेकिन हिंदी साहित्य को इसके लिए सौंदर्यबोधीय दृष्टि विकसित करनी चाहिए।

इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "आदिवासी साहित्य की कसौटी प्रचलित सौंदर्यशास्त्र के आधार पर तय नहीं की जा सकती। दरअसल यह लोक साहित्य है, जिसके लेखक अनाम और अज्ञात होते हैं। आदिवासी साहित्य के केंद्र में समूह का अनुभव होता है। उसका समकालीन साहित्य भी समूह के प्रति हो रहे अन्याय, बढ़ती उपेक्षा, बढ़ते आक्रोश व बेबसी तथा समूह में पनपती बदलाव की इच्छा व संकल्प की अभिव्यक्ति ही है। इसलिए आदिवासी साहित्य की कसौटी जो भी हो, वह उसके भीतर की ही उपज होगी। उस सृजित साहित्य की भंगिमा, तेवर और गंध के आधार पर ही उस साहित्य का मूल्यांकन होगा। वर्तमान प्रचलित सौंदर्यशास्त्र आदिवासी साहित्य के विस्तृत फलक को नाप नहीं सकता, क्योंकि वह व्यक्ति तक सीमित है, जबकि आदिवासी साहित्य अनुभवों से लैस होता है एवं समूह और प्रकृति के आर-पार जाता है।"[181] इस सन्दर्भ में डॉ गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग

[180] गंगा सहाय मीणा (संपा.) ,आदिवासी साहित्य विमर्श , 'गंगा सहाय मीणा की रोज केरकेट्टा से बातचीत', पृष्ठ संख्या -34

[181] रमणिका गुप्ता , आदिवासी लेखन : एक उभरती चेतना , पृष्ठ संख्या – 87

'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं,-"आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व के लिए इतना गहरा संकट इससे पहले नहीं पैदा हुआ जब सवाल अस्तित्व का हो तो प्रतिरोध भी स्वाभाविक है सामाजिक और राजनीतिक गतिरोध के अलावा कला और साहित्य के द्वारा भी प्रतिकार की आवाजें उठी और वही समकालीन आदिवासी साहित्य का मुख्य स्वर हो गया।"[182]

अतः आदिवासी साहित्य की कसौटी आदिवासी साहित्य के भीतर से ही जन्म लेगी। आदिवासी साहित्य में मौजूद प्रतिरोध और गंध आदि ही आदिवासी साहित्य के मूल्यांकन का आधार होना चाहिए। आदिवासी साहित्य सामूहिक अनुभवों पर आधारित होता है, जबकि हिंदी साहित्य में प्रचलित सौंदर्यशास्त्रीय आधार व्यक्ति मन की उपज है। आदिवासी साहित्य में सामूहिकता के साथ प्रकृति की भी केंद्रीय भूमिका होती है। इसलिए आदिवासी साहित्य की कसौटी के निर्माण में आदिवासी साहित्य की मूल प्रवृतियों एवं आदिवासी जीवन-दर्शन का संज्ञान अनिवार्य हो जाता है।

4.4.4 आदिवासी अस्मिता, अस्तित्व का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

दलित विमर्श में अस्मिता या पहचान का प्रश्न मुख्य प्रश्न है। अस्तित्व की समस्या उनके यहाँ नहीं है। दलितों का पूरी तरह से अनादर होने के बावजूद भी वर्ण व्यवस्था मूलक समाज ने उनको अपने ही इर्द-गिर्द रखा है, लेकिन आदिवासी समाज का मामला इससे बिल्कुल अलग है। तथाकथित मुख्यधारा के समाज ने आदिवासियों को हमेशा शंका की ही नजर से देखा, इसलिए मुख्यधारा के समाज और आदिवासी समाज के बीच सीधा संपर्क कभी नहीं रहा। इस तरह आदिवासी समाज को हमेशा हाशिए पर ही रहने को मजबूर होना पड़ा है। जिस कारण मुख्य धारा के बीच काफी भ्रमित धारणाएँ बन गई हैं। कुछ लोग तो यह भी कह देते हैं कि आदिवासी लोग गंवार और असभ्य होते हैं। इस भ्रम को तोड़ने का काम

[182] http://gsmeena.blogspot.com/2013/02/blog-post.html,05/07/2020,07:25

आदिवासी साहित्य ही करता है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर अजय खरते लिखते हैं,- "आदिवासी की चिंता जल, जंगल, जमीन, भाषा और संस्कृति की है जो आदिवासी अस्मिता के लिए आवश्यक है। आदिवासी संस्कृति ही भारतीय संस्कृति की नींव है। आदिवासियों की संस्कृति और सभ्यता महान थी, महान है और महान रहेगी। आदिम समुदाय का बौद्धिक प्रकल्प प्रकृति की तरह विशाल है। कमी केवल विवेक, तर्कशील विश्लेषण और अभिव्यक्ति में है। आदिवासी न आस्तिक है, न नास्तिक है, वह तो सिर्फ वास्तविकता में विश्वास रखता है, इसलिए बस इसे समझने की जरूरत है।"[183]

अतः आदिवासी समाज का जीवन मूल्य बहुत ही उदार और आधुनिक है। वहाँ किसी प्रकार का नस्लीय भेदभाव नहीं है न ही प्रेम को लेकर कुण्ठा या श्रेणीबद्धता का कोई भाव है। सभी काम आदिवासी मिल-जुलकर करते हैं। इससे उनके अंदर मौजूद सहभागिता के गुण का भी पता चलता है।

इस सन्दर्भ में डॉ. गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं,- "आदिवासी साहित्य की उस तरह कोई केंद्रीय विधा नहीं है जिस तरह स्त्री लेखन और दलित साहित्य की आत्मकथात्मक लेखन की है कविता कहानी उपन्यास नाटक सभी प्रमुख विधाओं में आदिवासी और गैर आदिवासी रचनाकारों ने आदिवासी जीवन समाज की प्रस्तुति की है आदिवासी रचनाकारों ने आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व के संघर्ष में कविता को अपना मुख्य हथियार बनाया है। आदिवासी लेखन में आत्मकथात्मक लेखन केंद्रीय बिंदु नहीं बना सका क्योंकि स्वयं आदिवासी समाज 'आत्म' से अधिक समूह में विश्वास करता है अधिकतर आदिवासी समुदायों में काफी बाद तक भी निजी और निजता की धारणाएं घर नहीं कर पाई। परंपरा, संस्कृति, इतिहास से लेकर शोषण और उसका प्रतिरोध

[183] https://jaykharte.blogspot.com/2018/03/blog-post_26.html, 19/04/2020,time 09:05

सब कुछ सामूहिक है। समूह की बात आत्मकथा में नहीं जन कविता में ज्यादा अच्छे से व्यक्त हो सकती है।"[184] आदिवासी प्रश्नों पर विचार करने वाले बहुत से विद्वान 'जनजाति' शब्द के प्रयोग को एक षड्यंत्र का हिस्सा मानते हैं। इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "आदिवासी कौन है? क्या यह उसकी अस्मिता, अस्तित्व और इतिहास का प्रश्न है। इसलिए शुरुआत हमें 'जनजाति' शब्द से ही करनी होगी, क्योंकि यह शब्द उनकी अस्मिता को दिग्भ्रमित ही नहीं करता, बल्कि उनके अस्तित्व पर भी एक सवाल पैदा करता है। आदिवासियों की कोई जाति नहीं होती। फिर वे जनजाति कैसे बना दिए गए? उन्हें कबीला कहा जा सकता है, लेकिन जाति नहीं।"[185]

आदिवासी समुदाय जाति-व्यवस्था वाले कथित मुख्यधारा के समाज एवं उसकी गतिविधियों से अप्रभावित जीवन जीता रहा है। आदिवासियों को दुर्गम जंगलों -पहाड़ों में रहने को बाध्य किया जाता रहा है। आदिवासी को वनवासी भी कहा जाता है इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "आज भी उन्हें 'आदिवासी' के बजाय 'वनवासी' कह कर तथा 'घर वापसी' के नाम पर 'धर्मांतरण' की साजिश रची जा रही है।"[186]

आदिवासी समुदाय को ईसाई और हिंदू धर्म की तरफ से दबाव का सामना करना पड़ रहा है। पहले क्रिश्चियन धर्म के प्रतिनिधियों द्वारा उनका धर्म परिवर्तन किया गया और अब पुनः हिंदू बनाने का प्रयास 'घर वापसी' के नाम पर किया जा रहा है। ऐसा 'आदिवासी' की जगह उन्हें 'वनवासी' समझे जाने की वजह से ही संभव हो रहा है। वन में निवास करने वाला कोई भी व्यक्ति वनवासी हो सकता है परंतु आदिवासी नहीं हो सकता। आदिवासी चिंतकों का यह मानना है कि आदिवासी भारत भूमि का मूल निवासी है और उसका अपना अलग धर्म

[184] http://gsmeena।blogspot।com/2013/02/blog-post।html,05/07/2020,07:38
[185] रमणिका गुप्ता , आदिवासी अस्मिता का संकट , पृष्ठ संख्या – 51
[186] रमणिका गुप्ता , आदिवासी लेखन : एक उभरती चेतना , पृष्ठ संख्या – 87

है। आदिवासी हिंदू या क्रिश्चियन नहीं है, जैसा आजकल सामान्य रूप से समझ लिया जाता है। आज आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व पर चौतरफा आक्रमण हो रहा है।

रमणिका गुप्ता इस संदर्भ में लिखती हैं,- "अस्तित्व, अस्मिता और आत्मसम्मान उनके लिए अनिवार्य है। अस्मिता की रक्षा के लिए उनकी भाषा और संस्कृति का जिंदा रहना जरूरी है, तो अस्तित्व के लिए जरूरी है जल, जंगल, जमीन का होना। जल-जंगल-जमीन विहीन आदिवासी की कल्पना करना असंभव है।"[187]

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर अजय खतरे लिखते हैं,- "आदिवासी की चिंता जल, जंगल, जमीन, भाषा और संस्कृति की है जो आदिवासी अस्मिता के लिए आवश्यक है। दोस्तों इसलिए आदिवासियों की संस्कृति और सभ्यता महान थी। महान है, और महान रहेगी बस इसे समझने की जरुरत है। धरती को बचाने के लिए आज नहीं, तो कल आदिवासियों के रास्ते पर आना ही होगा, क्योंकि लालच पर आधारित अर्थव्यवस्था को जारी रखने से दुनिया नहीं बचेगी। आदिवासियों जैसा प्रकृति के साथ जीना, सह अस्तित्व को स्वीकार करना, भेदभाव को खत्म करना व सभी के अधिकारों की रक्षा करना होगा।"[188]

आदिवासियों की भाषा का लोप उनकी संस्कृति से जुड़ा हुआ है। आज कई आदिवासी भाषाएँ लुप्त होने के कगार पर हैं। इससे उनकी संस्कृति पर भी विपरीत असर पड़ रहा है। आदिवासियों की भाषा और संस्कृति की रक्षा आदिवासी अस्मिता से जुड़ा हुआ प्रश्न है। भाषा और संस्कृति के अभाव में कोई भी समुदाय अपनी पहचान स्थापित नहीं कर सकता। दूसरी तरफ जल-जंगल-जमीन का दोहन कर आदिवासी समुदाय के अस्तित्व पर ही हमला किया जा रहा है। उनके जीवन यापन के संसाधनों को छीने जाने की वजह से उनका जीवन

---

[187] रमणिका गुप्ता , आदिवासी : लेखन एक उभरती चेतना , पृष्ठ संख्या 84

[188] https://jaykharte.blogspot.com/2018/03/blog-post_26.html, 19/04/2020,time 09:10

खतरे में पड़ता जा रहा है। प्रकृति के अस्तित्व पर ही आदिवासियों का जीवन निर्भर करता है। इस पूंजीवादी दौर में प्रकृति ही सबसे ज्यादा उपेक्षित है। जिस कारण आदिवासियों का संकट भी बढ़ता ही जा रहा है। ऐसे में आदिवासियों के अस्तित्व का प्रश्न बहुत जरूरी बन गया है। आदिवासी साहित्य, आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व को संपूर्णता में देखे जाने का समर्थक है।

इस संदर्भ में हरिराम मीणा लिखते हैं,- "जब आदिवासी अस्मिता को परिभाषित किया जाता है तो समग्र संस्कृति को केंद्र में रखना होगा जिसमें भाषा, धर्म, मिथक, प्रथाएँ, जीवन-शैली, खान-पान, वेशभूषा, गणचिन्ह, सौंदर्यबोध निषेध, आवास, परंपरागत ज्ञान, मानवेतर प्राणी जगत व प्रकृति तत्वों से सम्बन्ध, स्वायत्तता, जीवनयापन, पर्वोत्सव, किम्वदंतियां, मुहावरे, गल्प, गीत-संगीत, स्त्री-पुरुष संबंध, परिवार-समाज व बस्तियों की दशा आदि से संबंधित बहुत सारी बातें विमर्श के केंद्र में शामिल होंगी।"[189] आदिवासी अस्मिता पर विचार करते हुए उपरोक्त सभी चीजों पर गंभीरता से ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके अभाव में हम आदिवासी अस्मिता को संपूर्णता में नहीं समझ सकते हैं।

4.4.5 आदिवासी समाज का संकट, विस्थापन की समस्या और हिंदी ब्लॉग

आदिवासियों के अस्मिता और अस्तित्व के पीछे सबसे बड़ी समस्या विस्थापन की रही है। जल, जंगल और जमीन से बेदखली की वजह से 'बेदखली' आदिवासियों के लिए बड़ी समस्या की वजह बन रही है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर लिखते हैं,- "जमीन ही आदिवासी समाज का मूलाधार है। जमीन हम आदिवासियों के लिए संपत्ति नहीं है बल्कि यह हमारी पहचान, अस्मिता, संस्कृति, विरासत और अस्तित्व है। हमारे पूर्वजों ने जंगल-झाड़ को साफ कर तथा ऊंचा-नीचा स्थल को कोड़कर खेती योग्य जमीन बनाया। उन्होंने जमीन को हमारे

[189] हरिराम मीणा , आदिवासी दुनिया , पृष्ठ संख्या - 170

लिए सुरक्षित रखने हेतु अपना खून बहाया और कुर्बानी दी ।"[190] इसलिए विस्थापन की समस्या पर विचार करना जरूरी प्रश्न बन गया है । यह समस्या आदिवासी विमर्श की महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक है। डॉ गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं,- "आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व के लिए इतना गहरा संकट इससे पहले नहीं पैदा हुआ जब सवाल अस्तित्व का हो तो प्रतिरोध भी स्वाभाविक है सामाजिक और राजनीतिक गतिरोध के अलावा कला और साहित्य के द्वारा भी प्रतिकार की आवाजें उठी और वही समकालीन आदिवासी साहित्य का मुख्य स्वर हो गया ।"[191]

डॉ. गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं,- "आदिवासी लोक में साहित्य सहित विविध कला माध्यमों का विकास तथाकथित मुख्यधारा से पहले हो चुका था लेकिन वहाँ साहित्य सृजन की परंपरा मूलतः मौखिक रही जंगलों में खदेड़ दिए जाने के बाद भी आदिवासी समाज ने इस परंपरा को अनवरत जारी रखा। ठेठ जन भाषा में होने और सत्ता प्रतिष्ठानों से दूरी की वजह से यह साहित्य आदिवासी समाज की ही तरह उपेक्षा का शिकार हुआ। आज भी सैकड़ों देशज भाषाओं में आदिवासी साहित्य रचा जा रहा है जिसमें से अधिकांश से हमारा संवाद कायम होना अभी शेष है ।"[192]

अतः ब्लॉगर का मनना है कि आदिवासी समाज में साहित्य के साथ-साथ और भी विभिन्न प्रकार के कलारूपों का विकास बहुत पहले ही हो गया था, लेकिन यह साहित्य और कला रुप लिखित रुप में न होकर मौखिक रुप में थें, इसलिए मुख्यधारा के सामाज के सामने उपेक्षित हो गये। आदिवासी साहित्य और कला रूप की यह उपेक्षा ठीक उसी प्रकार हुई जिस प्रकार आदिवासी की हुई।

---

[190] https://adivasihunkar.blogspot.com/search/label/%E0%A4%9C%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%A8, 19/04/2020,time 09:10

[191] http://gsmeena ।blogspot ।com/2013/02/blog-post ।html,05/07/2020,07:25

[192] http://gsmeena ।blogspot ।com/2013/02/blog-post ।html,05/07/2020,07:28

एक दूसरी पोस्ट में इसी सन्दर्भ को विस्तार देते हुए डॉ. गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में ही लिखते हैं, - "यह आदिवासी साहित्य की अवधारणा के निर्माण का दौर है आदिवासी साहित्य अस्मिता की खोज दिकुओं द्वारा किए गए और किए जा रहे शोषण के विभिन्न रूपों के उद्घाटन और आदिवासियों पर मंडराते संकटों और उसके मद्दे नजर हो रहे प्रतिरोध का साहित्य है। यह उस परिवर्तनकामी चेतना का रचनात्मक हस्तक्षेप है जो देश के मूल निवासियों के वंशजों के प्रति किसी भी प्रकार के भेदभाव का पुरजोर विरोध करती है और उनके जल, जंगल, जमीन को बचाने के हक में उनके आत्मनिर्णय के अधिकार के साथ खड़ी होती है।"[193] ब्लॉगर इस बात पर जोर देते हुए कहते हैं कि- यह समय आदिवासी सहित्य के विस्तार का समय है, साहित्य और अपने लोगों को संगठित और मजबूत करने का समय है, अपने हक की लड़ाई लड़ने का समय है, समाज में अपने समान अधिकारों के लिए प्रतिरोध करने का समय है। यह समय जल, जंगल, जमीन को बचाने के लिए आत्मनिर्णय लेने का समय है। अतः अपने अधिकार पाने के लिए सबको साथ लेकर खड़े होने का समय है।

इस सन्दर्भ में डॉ. गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं,- "आदिवासी साहित्य की उस तरह कोई केंद्रीय विधा नहीं है जिस तरह स्त्री लेखन और दलित साहित्य की आत्मकथात्मक लेखन की है कविता कहानी उपन्यास नाटक सभी प्रमुख विधाओं में आदिवासी और गैर आदिवासी रचनाकारों ने आदिवासी जीवन समाज की प्रस्तुति की है आदिवासी रचनाकारों ने आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व के संघर्ष में कविता को अपना मुख्य हथियार बनाया है। आदिवासी लेखन में आत्मकथात्मक लेखन केंद्रीय स्थान नहीं बना सका क्योंकि स्वयं आदिवासी समाज 'आत्म' से अधिक समूह में विश्वास करता है अधिकतर आदिवासी समुदायों में काफी बाद तक भी निजी और निजता की

[193] http://gsmeena।blogspot।com/2013/02/blog-post।html,05/07/2020,07:33

धारणाएं घर नहीं कर पाई। परंपरा, संस्कृति, इतिहास से लेकर शोषण और उसका प्रतिरोध सब कुछ सामूहिक है। समूह की बात आत्मकथा में नहीं जन कविता में ज्यादा अच्छे से व्यक्त हो सकती है।"[194]

अतः आदिवासी लेखन की अभी तक कोई केंद्रीय विधा नहीं बन पायी है, जिस तरह स्त्री और दलित लेखन की केंद्रीय विधा है। इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि जिस समाज में अभी अस्मिता -अस्तित्व का संकट हो, जिस समाज को अभी भी अपने जिन्दा रहने का प्रमाण देना पड़ता हो, उस समाज में के लिए साहित्य की केंद्रीय विधा के रुप में लेखन आसन नहीं है, हालाँकि गैर आदिवासी रचनाकारों ने आदिवासी साहित्य में लेखन का कार्य किया है, लेकिन जिस प्रकार सहानुभूति और स्वानुभूति के फर्क को झूठलाया नहीं जा सकता वैसे ही आदिवासी समाज के ज़िंदा रहने के सर्टिफिकेट की माँग को भी झूठलाया नहीं जा सकता। आज स्थिति यह है कि जो सही मायने में आदिवासी हैं वह आज भी जंगल में अपने जीवन को बचाए रखने के लिए संघर्ष कर रहें है तो दूसरी तरफ अधिकतर लोगों को यह भी नहीं पता है कि सरकार ने उनके लिए कौन-कौन सी योजनाओं को चलाया है। यह आदिवासी समाज की बड़ी विडम्बना है। विकास के नाम पर कोई भी सरकार जब चाहे तब उन्हें उनके जल-जंगल-जमीन से खदेड़ देती है।

इस सन्दर्भ में डॉ. गंगा सहाय मीणा अपने ब्लॉग 'आदिवासी साहित्य' में लिखते हैं, - "आजादी से पहले आदिवासियों की मूल समस्याएं वनोपज पर प्रतिबंध तरह-तरह की लगान, महाजनी शोषण, पुलिस प्रशासन की ज्यादतियां आदि हैं जबकि आजादी के बाद भारत सरकार द्वारा अपनाए गए। विकास के मॉडल ने आदिवासियों से उनके जल, जंगल और जमीन छीनकर उन्हें बेदखल कर दिया विस्थापन उनके जीवन की मुख्य समस्या बन गई है।

[194] http://gsmeena ।blogspot ।com/2013/02/blog-post ।html,05/07/2020,07:38

इस प्रक्रिया में एक ओर उनकी सांस्कृतिक पहचान उनसे छूट रही है दूसरी ओर उनके अस्तित्व की रक्षा का प्रश्न खड़ा हो गया है। अगर वह पहचान बचाते हैं तो अस्तित्व पर संकट खड़ा होता है और अगर अस्तित्व बचाते हैं तो सांस्कृतिक पहचान नष्ट होती है। इसलिए आज का आदिवासी विमर्श अस्तित्व और अस्मिता का विमर्श है।"[195]

इस सन्दर्भ में रमणिका गुप्ता भी लिखती हैं, - "उसकी समस्या है जमीन से बेदखली, विस्थापन, पलायन। उसकी चाहना है - जमीन की वापसी और पुनर्वास।"[196]

अतः जमीन की बेदखली से उपजी हुई समस्या है विस्थापन। जिसकी वजह से पलायन हो रहा है। विस्थापन से अस्तित्व का प्रश्न संकट में आ जाता है और पलायन से अस्मिता का संकट बढ़ने लगता है। इसलिए विस्थापन आदिवासी दुनिया की सबसे कड़वी हकीकत के साथ-साथ बड़ी समस्या भी है। विस्थापन की वजह से पलायन की घटनाएँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। रोजगार की तलाश में दूसरे प्रदेश जाना या अपने ही क्षेत्र में विस्थापन की वजह से मजदूर बन जाना आदिवासियों की नियति बन गई है और विस्थापित आदिवासी अनेक कोशिशों के बावजूद अपनी जड़ों की तरफ वापस नहीं लौट पाता है। इस संदर्भ में हरिराम मीणा लिखते हैं,- "परंपरागत बस्तियों से किसी का भी विस्थापन भारी त्रासदी का कारण बनता है और आदिवासी तो अपना परिवेश किसी भी दृष्टि से नहीं छोड़ना चाहता, चाहे उसे कितने भी प्रलोभन दिए जाएं। वह परंपरा और प्रकृति से बंधा हुआ रहता आया है।"[197]

दरअसल विस्थापन का असर कई पीढ़ियों तक पड़ता है। उसका एक सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक पक्ष भी है। उदाहरण के तौर पर हम फिजी, मॉरीशस, सूरीनाम आदि देशों में मजबूरन ले जाए गए गिरमिटिया को देख सकते हैं। विस्थापन का सर्वाधिक

---

[195] http://gsmeena ।blogspot ।com/2013/02/blog-post ।html,05/07/2020,07:40

[196] रमणिका गुप्ता , आदिवासी : लेखन एक उभरती चेतना , पृष्ठ संख्या - 194

[197] हरिराम मीणा , आदिवासी दुनिया , पृष्ठ संख्या - 141

प्रभाव आदिवासी संस्कृति पर पड़ा है। इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "जिन लोगों की संस्कृति खत्म हो जाती है, उनकी पहचान भी खत्म हो जाती है। आज आदिवासियों की शेष पहचान भी खत्म करने की साजिश हो रही है। ... आज आदिवासियों की मुख्य समस्या विस्थापन और पलायन है। ऐसे तो आदिवासी सदियों से खदेड़ा जाता रहा है। आदिवासी अपने तीन मूल अधिकारों के प्रति अति संवेदनशील हैं, जिनसे उसकी पहचान ही नहीं, जीविका भी जुड़ी है। वह है जल, जंगल, जमीन।"[198]

अतः जल, जंगल, जमीन से बेदखल किया गया आदिवासी अपनी अस्मिता और अस्तित्व की चुनौती से घिरा हुआ है। विस्थापन की समस्या ने उसके अस्तित्व को खतरे में डाल दिया है। विस्थापन के कारण पलायन करने वाला आदिवासी आज अपनी जीविका के लिए बड़ा ही चिंतित और संकटग्रस्त है। ऐसे में उसकी भाषा और संस्कृति भी नष्ट होती जा रही है और संस्कृति के अभाव में आदिवासी समुदाय का अस्तित्व और अस्मिता नगण्य है।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर ग्लैडसन डुंगडुंग अपनी पोस्ट 'आदिवासी हितों का संरक्षण हो सर्वोपरि' में लिखती हैं,- " आदिवासी हर कीमत पर अपनी जमीन की रक्षा सुनिश्चित करना चाहते हैं क्योंकि जमीन उनके लिए संपत्ति न होकर उनकी पहचान, संस्कृति, इतिहास, विरासत और अस्तित्व है।"[199]

रमणिका गुप्ता भी लिखती हैं कि आदिवासी की अस्मिता और संस्कृति जिन आधारों पर टिकी होती है, आज विकास के नाम पर उसे ही निशाना बनाया जा रहा है। जिस जमीन पर आदिवासी सदियों से रहते आ रहे हैं वहाँ से उनका विस्थापन उनके भाषा और संस्कृति के विनाश की एक बड़ी वजह है।

---

[198] रमणिका गुप्ता, आदिवासी : लेखन एक उभरती चेतना , पृष्ठ संख्या – 121-122

[199] https://adivasihunkar.blogspot.com/search/label/%E0%A4%86%E0%A4%A6%E0%A4%BF%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%B8%E0%A5%80, 19/04/2020, time 09:15

इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "आदिवासियों के विकास, उनकी भाषा-संस्कृति तथा उनकी पहचान की रक्षा के केंद्र में मुख्यतः जमीन है। झारखंड हो या छत्तीसगढ़ अथवा अन्य आदिवासी बहुल प्रदेश, वहाँ की गरीब जनता के लिए भूमि का प्रश्न महत्वपूर्ण है।"[200] इस सन्दर्भ में ब्लॉगर Dr. Ajay Kharte (Jay Kharte) लिखते हैं,- "भारत की आज़ादी के उपरांत नयी आर्थिक नीतियों के तहत विश्व स्तर पर बनने वाले खुले बाज़ार की नीतियों ने भारत के आदिवासियों की सामाजिक, सांस्कृतिक अस्तित्व की सुरक्षा की एक बड़ी समस्या खड़ी कर दी है। देशी-विदेशी व्यावसायिक कम्पनियों के बड़े पैमाने पर आदिवासी क्षेत्रों में पूँजी निवेश के कारण संविधान के अस्तित्व का ही संकट खड़ा हो रहा है। आदिवासियों की जीविका का प्रमुख स्रोत जल, जंगल और ज़मीन की सुरक्षा के लिये बनाये गये संवैधानिक प्रावधानों की उपेक्षा के कारण आदिवासियों के हाथों से बड़े पैमाने पर ज़मीन और जंगल पर मालिकाना हक निकलता जा रहा है। इतना ही नहीं इनके क्षेत्रों मे विकास के नाम पर उनकी ज़मीन छीन कर उन्हें विस्थापित किया गया जिसके कारण उन्हें अपनी रोज़ी रोटी के लिये पलायन झेलना पड़ रहा है।"[201] अतः भूमि का प्रश्न सिर्फ आदिवासी से संबंधित नहीं है बल्कि विकास के नाम पर जमीन का अधिग्रहण विगत दशकों में तेजी से बढ़ा है, जिसमें आदिवासी, दलित, किसान सभी शामिल हैं। ये सभी भूमि अधिग्रहण के खिलाफ आवाज उठा रहे हैं, क्योंकि जमीन के साथ-साथ उस पर रहने वाले लोगों की संस्कृति भी जुड़ी होती है। लोक कथाएँ, आचार-व्यवहार, रीति-रिवाज आदि बहुत से अर्थ जमीन से जुड़े होते हैं, जो भूमि अधिग्रहण के साथ नष्ट होने लगते हैं।

4.4.6 आदिवासी, माओवाद की समस्या का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

[200] रमणिका गुप्ता (संपा .) , आदिवासी : विकास से विस्थापन , पृष्ठ संख्या – 10-11

[201] https://jaykharte.blogspot.com/2018/03/blog-post_26.html,17/04/2020, 04:32p.m.

माओवाद जिसे उग्र वामपंथ के नाम से जाना जाता है, जो आदिवासी समाज की सबसे बड़ी समस्याओं में से एक है। सरकार और माओवादी हिंसा के बीच बेकसूर आदिवासी पिसते जा रहे हैं जिस कारण आदिवासी समाज की अस्मिता और अस्तित्व खतरे में पड़ता जा रहा है। इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "भारत में आदिवासी की अस्मिता पर संकट तो सदियों से आता-जाता ही रहा है, लेकिन अब तो खतरा उनके अस्तित्व पर ही है। नक्सलवाद के नाम पर अब उसे कानूनी रूप से सरकारी हिंसा का शिकार बनाने की तैयारी हो गई है।"[202]

अतः उग्र वामपंथ की वजह से आदिवासी समाज का अस्तित्व खतरे में पड़ता जा रहा है। आदिवासी बाहुल्य क्षेत्रों में वेश कीमती संसाधन पाए जाते हैं। जिस कारण उद्योगों, खदानों का विकास तेजी से आदिवासी क्षेत्रों में फैलता जा रहा है। इससे एक तरफ आदिवासी विस्थापित हो रहे हैं तो दूसरी तरफ अस्तित्व एवं अस्मिता की रक्षा के लिए एकजुट भी हो रहे हैं, जोकि महत्वपूर्ण बात है।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर ग्लैडसन डुंगडुंग अपनी पोस्ट 'सारंडा में अंतिम सांस लेता नक्सल आन्दोलन?' में लिखते हैं,- "आज नक्सल आन्दोलन आदिवासी समाज को उखाड़ने, समाप्त करने का एक जरिया बनकर रह गया है और निश्चित तौर पर जॉनसन से पूछा गया प्रश्न उसका प्रतिबिंब है आदिवासियों ने जॉनसन से पूछा माओवादियों ने आज तक कितने पूँजीपतियों की हत्या की है माओवादियों ने कौन-कौन से कंपनियों को आदिवासी इलाके से भागने पर मजबूर किया है आदिवासियों को अधिकार और न्याय दिलाने के नाम आए माओवादी लोग उनकी ही हत्या क्यों कर रहे हैं माओवादियों के रहते हुए हमारी जमीन,

[202] रमणिका गुप्ता , आदिवासी अस्मिता का संकट , पृष्ठ संख्या – 31

जंगल, पहाड़, पानी और खनिज की लूट क्यों हो रही है सारंडा जंगल में क्यों नए कंपनियों का आगमन हो रहा है आदिवासियों को अपना गांव छोड़ने पर क्यों मजबूर किया जा रहा है माओवादी लोग कंपनियों से पैसा क्यों लेते हैं माओवादी लोग गांव के विकास कार्यों को क्यों रोक कर रखा है जॉनसन के पास अधिकांश प्रश्नों का कोई तर्कसंगत जवाब नहीं था वह पूरी तरह से गिर चुका था और अंततः उसे जान देकर कीमत चुकानी पड़ी।"[203]

आदिवासी क्षेत्रों में भूमि अधिग्रहण कर सरकार उनकी जमीनों को औद्योगिक बस्तियों में परिवर्तित करती जा रही है। ऐसा कई जगहों पर हुआ है परंतु जैसे-जैसे आदिवासियों में जागरूकता फैल रही है वैसे-वैसे वे अपने अस्तित्व और अस्मिता की रक्षा के लिए सरकार के खिलाफ तथा बड़ी-बड़ी कंपनियों के खिलाफ एकत्रित होकर संगठित विरोध कर रहे हैं। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर लिखती हैं,- "हमें मजबूती के साथ सरकार को बताना होगा कि हम पहले आदिवासी हैं, बाद में भी आदिवासी हैं और आखिरी में भी आदिवासी हैं, हम आदिवासी ही भारत देश के प्रथम निवासी और संरक्षक हैं। हमें अपनी आदिवासी पहचान की मजबूत दावेदारी करने के साथ-साथ अपनी भाषा एवं संस्कृति को भी बचाना होगा।"[204] इस विरोध को नक्सलवाद का नाम देकर आदिवासी आंदोलन को दबाने का प्रयास किया जा रहा है जबकि इनका आंदोलन अहिंसात्मक रहा है, उनके सामने जब अस्तित्त्व की रक्षा का प्रश्न आता है तो, वे संगठित होकर जल-जंगल-जमीन की लड़ाई लड़ते हैं। ऐसे में जंगल एवं खदानों का अधिग्रहण करना सरकार के लिए मुश्किल हो जाता है तब आदिवासी आंदोलनों को माओवादियों द्वारा संचालित आंदोलन मानकर उसे दबाने का प्रयास किया जाता है।

---

[203] https://adivasihunkar.blogspot.com/search/label/%E0%A4%A8%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B8%E0%A4%B2%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%A6,17/04/2020, 04:32p.m.

[204] https://adivasihunkar.blogspot.com/search/label/%E0%A4%9C%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%A8,17/04/2020, 04:42p.m.

इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "दरअसल नक्सलवाद ग्रामीण क्षेत्र के किसानों से जुड़ा है। आदिवासी मूलतः किसान हैं। जमीन और जंगल के बिना आदिवासी की पहचान ही नहीं होती।"[205]

अपनी बात को और स्पष्ट करती हुई इसी संदर्भ में आगे लिखती हैं,- "आदिवासी बसावटे, प्रायः देश के खनिज और जंगलों से भरे समृद्ध क्षेत्र में ही होती हैं। बाहरी लोगों की घुसपैठ बढ़ने के साथ इन प्रश्नों में बेरोजगारी, भुखमरी और गरीबी बढ़ी, जिससे असंतोष पनपा ... समाज और सरकार ने उनका दमन और शोषण करने वाली शक्तियों को और भी अधिक बलवान किया है।... आदिवासी समझ ही नहीं पाता-किस तरफ जाए, किस तरफ न जाय, क्या करें क्या ना करें? और जब से कोई रास्ता नहीं सूझता,तो वह नक्सलवाद की तरफ जाता है।"[206] अतः रमणिका गुप्ता का मानना है कि आदिवासी समाज की दुर्दशापूर्ण स्थिति स्थानीय प्रशासन और सरकार की उदासीनता के कारण है। आदिवासी इसी वजह से माओवाद की तरफ प्रवृत होते हैं। यह बात सत्य है कि आदिवासी बहुल इलाकों में आदिवासियों का भी भीषण शोषण एवं दोहन हुआ है। स्थानीय प्रशासन भी आदिवासियों की जगह साहूकारों एवं ठेकेदारों की ही मदद करते हैं। भुखमरी और गरीबी से आदिवासियों में असंतोष की भावना बढ़ी है और आदिवासी अपने ही क्षेत्र में लगातार अजनबी होते जा रहे हैं।

इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं कि नक्सलवाद प्रताड़ित एवं शोषित ग्रामीण किसान, खासकर आदिवासी युवा किसानों में पनप रही हताशा और खालीपन को भरता है।"[207]

---

[205] रमणिका गुप्ता , आदिवासी अस्मिता का संकट , पृष्ठ संख्या – 31

[206] रमणिका गुप्ता , आदिवासी अस्मिता का संकट , पृष्ठ संख्या – 31

[207] रमणिका गुप्ता , आदिवासी अस्मिता का संकट , पृष्ठ संख्या – 32

माओवाद आदिवासियों की हताशा को कुछ हद तक दूर करने में सहायक है, लेकिन आदिवासी भोले-भाले और निश्चल होते हैं। वह हताशा और निराशा में माओवाद की तरफ प्रवृत्त होते हैं, लेकिन आदिवासी समाज मूलतः अहिंसात्मक समाज है। उनकी निश्चलता और हताशा का फायदा माओवादी उठा रहे हैं जिस कारण आदिवासियों का नुकसान हो रहा है। इस तरह हम देखते हैं कि सरकार की तरफ से होने वाली सैनिक कार्यवाही हो या माओवादियों की तरफ से होने वाली कार्यवाही हो दोनों पाटो में आदिवासी ही पिसता रहा है।

अतः माओवादी हिंसा के कारण आदिवासियों का अस्तित्व खतरे में पड़ता जा रहा है। सरकार को आदिवासी इलाकों में सैनिक कार्यवाही करनी पड़ रही है जिससे आदिवासियों पर संकट मंडराता जा रहा है, जबकि सरकार को चाहिए कि आदिवासियों का विश्वास अर्जित करने के साथ-साथ विकास की अवधारणा का पुनर्मूल्यांकन करे। इतना ही नहीं आदिवासी समाज और उसकी संस्कृति के बारे में सोचें-विचारे और उनकी संस्कृति के उत्थान के लिए कानून बनाए तथा एक अच्छा माहौल निर्मित करें,जहाँ आदिवासी संस्कृति पल्लवित और पुष्पित हो सके।

रमणिका गुप्ता अंचलों से माओवाद के समाधान के बारे में एक सुझाव देती हुई कहती हैं कि,- "परियोजना बनने और विस्थापन से पहले उनकी सहमति, उनका समुचित पुनर्वास, प्रस्थापित होने वाले उद्योगों में उनके रोजगार की सुनिश्चित व्यवस्था, आदिवासियों को उनकी जमीन, जल, जंगल और संसाधनों पर पूर्ण अधिकार, रोजगार की गृह राज्य में गारंटी मिले तभी उनका विस्थापन और पलायन रुक सकता है।... आदिवासी मूलतः किसान है। आदिवासी का अस्तित्व और समृद्धि जंगल और जमीन से नालबद्ध है। मेरा दृढ़ मत है कि

अगर हम बंदूक का विकल्प उनके पास लेकर जाएं, तो वे तो भी जरूर लौटेंगे।"[208] दोनों ओर से हो रही हिंसा का विकल्प ढूँढ कर आदिवासी के पास जाना होगा। उन्हें सरकार की नीतियों के बारे में जो, आदिवासी के हित में है उन्हें बताना होगा और आदिवासी के हितों के लिए उन्हें अमल में लाना होगा, क्योंकि सरकारी नीतियों की अवहेलना की वजह से आदिवासी अंचलों में माओवाद का प्रभाव बड़ा है।

अतः सरकारी नीतियों का बेहतर ढंग से कार्यान्वयन आदिवासी के सामने एक विकल्प का रास्ता तैयार करेगा। तब जाकर माओवाद का प्रभाव असफल होगा और माओवादी होने की जगह आदिवासी होना ही आदिवासियों को सर्वाधिक प्रिय होता है।

4.4.7 आदिवासी, दलित प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

आदिवासी और दलित दोनों समुदायों को भारत में निम्न कोटि का समझा जाता रहा है। जिन्हें अक्सर उपेक्षित और वंचित होना पड़ा है। इसके बावजूद भी दलित और आदिवासी दोनों समुदायों की समस्याएं अलग-अलग रही है। दलित जहाँ मुख्यधारा के समाज में शामिल होते हुए भी वंचित रहने को अभिशप्त रहे हैं। वहाँ आदिवासी समाज को उस वर्ण व्यवस्था आधारित समाज का कभी हिस्सा ही नहीं माना गया। स्वयं अंबेडकर भी इस बात को स्वीकार करते थे। वे भी आदिवासियों को असभ्य एवं जंगली रूप में ही स्वीकार करते थे। यह बात अलग है कि वह आदिवासियों की स्थिति को लेकर चिंतित थे।

डॉ. अंबेडकर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'जाति प्रथा उन्मूलन' में लिखते हैं,- "हालाँकि हमारा देश इस बात पर गर्व करता है कि हमारी सभ्यता हजारों वर्ष पुरानी है, यह मूल आदिम जातियां इसी पुरानी स्थिति में रह रही हैं। न केवल वे असभ्य स्थिति में हैं बल्कि कुछ जातियों

---

[208] रमणिका गुप्ता , आदिवासी अस्मिता का संकट , पृष्ठ संख्या – 44

के काम धंधे भी इसी प्रकार के हैं कि उन सब को आपराधिक जातियों में वर्गीकृत कर दिया गया है। इस तरह हमारी आज की भरी-पूरी सभ्यता की अवस्था में भी एक करोड़ तीस लाख आदमी अभी भी जंगलियों की तरह रह रहे हैं। और वंश-परंपरागत अपराधियों का जीवन बिता रहे हैं। लेकिन हिंदुओं को इसमें कभी कोई शर्म महसूस नहीं हुई।" [209]

अतः अम्बेडकर यह स्वीकार करते हैं कि आदिवासियों के साथ सदियों से अन्याय और अत्याचार होता रहा है। इसका कारण वह हिंदुओं की जाति-व्यवस्था आधारित समाज को मानते हैं जबकि वह खुद स्वीकार करते हैं कि कथित मुख्यधारा के समाज से दूर जंगलों में आदिवासी निवास करते हैं।

इस तरह आदिवासियों को असभ्य समझकर उन्हें सभ्य बनाने का प्रयास एवं उन्हें मुख्यधारा से जोड़ने का प्रश्न ही अंबेडकर में मुख्य रूप से दिखाई पड़ता है। जबकि आदिवासियों कि अपनी विशिष्ट संस्कृति है। अधिकांश दलित चिंतक आदिवासी प्रश्न पर विचार करते हुए इसी दृष्टिकोण से प्रभावित दिखाई पड़ते हैं। इसलिए कई आदिवासी चिंतक दलित चिंतकों द्वारा आदिवासी समस्या पर पर्याप्त ध्यान न देने की वजह से उनकी आलोचना करते हैं।

इस संदर्भ में गंगा सहाय मीणा के साथ हुई बातचीत में रोज केरकेट्टा कहती हैं कि,- "दलित साहित्य को ही लीजिए, दलित साहित्य सिर्फ दलितों की बात करता है। उसने अभिव्यक्त की धार और प्रेरणा 'ब्लैक लिटरेचर और पॉलिटिक्स' से ग्रहण की जो पश्चिमी देशों के आदिवासियों का आंदोलन है। परंतु अपने ही देश के आदिवासियों से सीखना तो दूर, उससे जुड़ने के लिए भी दलित तैयार नहीं है।"[210] अतः रोज केरकेट्टा का मानना है कि दलित

---

[209] बाबा साहेब डॉक्टर अंबेडकर , संपूर्ण वांग्मय , खंड 1, पृष्ठ संख्या 72

[210] गंगा सहाय मीणा (संपा.) , आदिवासी साहित्य विमर्श , 'गंगा सहाय मीणा की रोज केरकेट्टा से बातचीत' , पृष्ठ संख्या – 33

विमर्श आदिवासी साहित्य से प्रेरणा लेकर भी आदिवासी प्रश्नों पर विचार नहीं कर रहा है। दलित विमर्श हिंदी साहित्य में एक संगठित और प्रतिष्ठित आंदोलन के रूप में अपनी पैठ जमा चुका है। ऐसे में वह सिर्फ दलितों का आंदोलन नहीं है बल्कि संपूर्ण शोषित वंचित तबके का आंदोलन है। इसलिए आदिवासी समुदाय की समस्याओं और चुनौतियों को समाज के सामने रखना उसका दायित्व है, जोकि दलित साहित्य नहीं कर पा रहा है। यह आदिवासी समाज के लिए चिंता का विषय है।

आदिवासियों की समस्या के संदर्भ में रमणिका गुप्ता का मानना है कि पहले-पहल अंबेडकर ने आदिवासी समस्या की तरफ सबका ध्यान खींचा था। बाद में दलित नेतृत्व द्वारा आदिवासी प्रश्नों की अवहेलना की गई। इस संदर्भ में वह लिखती हैं,- "ऐसे तो बाबा साहेब अंबेडकर ने ही आदिवासी समस्याओं पर सबका ध्यान खींचा और फिर संविधान बनाते समय इनके संरक्षण व आरक्षण का प्रावधान किया। उनकी मृत्यु के बाद चूँकि दलित नेतृत्व ने आदिवासी मुद्दे, जो दलितों से काफी हद तक भिन्न थे, पर ध्यान नहीं दिया। इसलिए महाराष्ट्र में स्वतंत्र आदिवासी संगठनों की शुरुआत हुई और आंदोलन भी भीतर ही भीतर सुगबुगाने लगा।"[211] अंबेडकर के बाद दलित नेतृत्व की अवहेलना की वजह से आदिवासी साहित्य और विमर्श का अलग रास्ता शुरू हुआ। आदिवासी चिंतक इस बात का आभार मानते हैं कि उन्होंने संविधान में आदिवासियों के संरक्षण व आरक्षण का प्रावधान किया। इसमें आदिवासी समुदायों को काफी सहूलियत हुई है अतः कई स्तरों पर दलित एवं आदिवासी प्रश्न एक होते हुए भी अलग हैं।

इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "दोनों इस मायने में समान है कि इनका साहित्य जीवन, यथार्थ, श्रम उत्पीड़न, शोषण, अभाव, उपेक्षा और अन्याय से जुड़ा है। दलित

---

[211] रमणिका गुप्ता , आदिवासी : लेखन एक उभरती चेतना , पृष्ठ संख्या – 19

साहित्य हो या आदिवासी साहित्य, दोनों ही प्रतिरोध का साहित्य है । दोनों का साहित्य आनंद नहीं देता, सीधे मन पर चोट करता है ।... यह प्रतिबंध साहित्य है, अपनी विचारधारा, सोच, सिद्धांत व जीवन मूल्यों व शैली के प्रति । इन दोनों के जीवन और अभिव्यक्ति के ढंग में फर्क है । इनके स्रोत, सामाजिक ढाँचा, संस्कृति, भौगोलिक स्थितियां, प्रतीक, मिथक, शैली, भाषा, जीवन शैली सभी भिन्न हैं । एक तो सभ्यता के बाहर कर जंगलों में खदेड़ दिया गया तो दूसरे को मनुष्यता से ही बाहर कर अपने ही गांव की सीमा पर पशुतुल्य जीवन जीने को मजबूर कर दिया गया ।... दोनों को ही समाज, इतिहास व साहित्य ने अनदेखा किया है ।"[212]

अतः दोनों ही समुदायों को ऐतिहासिक सामाजिक और साहित्यिक स्तर पर अन्याय का सामना करना पड़ा है । देश की आजादी और विकास में अपार योगदान देने के बावजूद भी दलित और आदिवासी दोनों ही समुदायों को उपेक्षित समझा गया है । दोनों ही समुदायों के ऊपर भयानक शोषण और अत्याचार किया गया है । इस आधार पर देखा जाए तो आदिवासी और दलित दोनों समान रूप से लांछित, वंचित, शोषित और उपेक्षित समुदाय रहे हैं । इसके बावजूद भी इनके प्रति शोषण और अन्याय के आधार अलग-अलग रहे हैं । एक को जाति के आधार पर सूचित किया गया तो दूसरे को तथाकथित विकास के नाम पर जंगलों-बीहड़ों में रहने को मजबूर किया गया । इसलिए इन दोनों समुदायों के जीवन जीने की प्रक्रिया और चुनौतियाँ अलग-अलग हैं, जिनमें हमें पर्याप्त अंतर देखने को मिलता है । इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं,- "आदिवासी और दलित साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए हमें उनके जीवन, जीवन शैली, इतिहास, यहाँ तक कि भूगोल का अध्ययन करना भी जरूरी होगा और साथ ही जरूरी होगा इनकी समानताओं और भिन्नताओं की खोज एवं परख करना ।"[213] अतः दोनों समुदायों की जीवन पद्धति और जीवन तथा इतिहास अलग है इस

[212] रमणिका गुप्ता , आदिवासी : लेखन एक उभरती चेतना , पृष्ठ संख्या – 111-112

[213] रमणिका गुप्ता , आदिवासी : लेखन एक उभरती चेतना , पृष्ठ संख्या – 111

कारण दोनों समुदायों के आदर्श भी अलग-अलग हैं और उनकी समस्याएँ भी। इस संदर्भ में सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू है दोनों समुदायों का भौगोलिक पक्ष का अध्ययन। जैसे- दलितों के संदर्भ में भूगोल का विशेष महत्व नहीं है जबकि आदिवासी के लिए भूगोल का प्रश्न उनकी इतिहास और जीवन पद्धति से जुड़ा हुआ प्रश्न है।

हालाँकि दोनों ही समुदाय का लक्ष्य मानवीय जीवन जीना है लेकिन एक समुदाय को पशुतुल्य जीवन जीने को मजबूर किया गया तो दूसरे समुदाय को पशुवत् ही समझा गया। इसी कारण दोनों की जीवन शैली में पर्याप्त अंतर देखने को मिलता है। दलित जहाँ गाँव के छोर पर जाति का दंश झेलते हुए जीवन गुजार रहे हैं तो दूसरी तरफ आदिवासी समुदाय, मुख्यधारा के समाज से दूर प्रकृति को केंद्र में रखकर अपना जीवन गुजार रहें है।

4.4.8 आदिवासी भाषाओं का प्रश्न और हिंदी ब्लॉग

भाषा का प्रश्न किसी भी समुदाय के अस्तित्व और अस्मिता से जुड़ा प्रश्न होता है। भाषा के साथ संस्कृति का भी जुड़ाव होता है क्योंकि किसी भी समाज की भाषा उसकी संस्कृति की संवाहक होती है। इसलिए एक के नष्ट होने पर दूसरे का भी नष्ट होना अवश्यंभावी होता है और संस्कृति के अभाव में कोई भी समुदाय अपनी अस्मिता को सुरक्षित नहीं रख सकता। ऐसे में उस समुदाय का अस्तित्व या तो समाप्त हो जाता है या दूसरे समुदाय में समाहित हो जाता है।

आदिवासी समाज के संदर्भ में यह तथ्य अत्यधिक प्रासंगिक है। क्योंकि बहुत सारे आदिवासी समुदाय भाषा और संस्कृति के विनाश के कारण लुप्त होने की कगार पर हैं। इसलिए भाषा का प्रश्न सीधे तौर पर आदिवासियों के अस्तित्व से जुड़ा हुआ प्रश्न है। इस सन्दर्भ में आदिवासी समुदाय की भाषा पर बात करें तो उनकी भाषा भी सत्ता वर्ग के निशाने

पर ही रही है । इस संदर्भ में हरीराम मीणा लिखते हैं,- "भाषा एक मानसिकता का प्रतिनिधित्व करती है और भाषा के विलुप्त होने के साथ उस मानसिकता, दृष्टिकोण एवं संस्कृति का नष्ट होना निश्चित है ।"[214]

आदिवासी भाषाओं को अक्सर अनुपयोगी और अप्रासंगिक सिद्ध करने का भी प्रयास किया जाता रहा है । भाषा के प्रश्न को आजीविका के प्रश्न से जोड़कर देखा जाता है । आजीविका प्रदान करने के अभाव में भाषा को उपेक्षित घोषित कर दिया जाता है । भारत के प्रभुत्व वर्ग के लिए आदिवासी भाषाओं की आज कोई जरूरत नहीं बची है । बल्कि यह बाधक ही ज्यादा हैं । हिंदी भाषा को भी कई बार ऐसे ही कारणों से प्रासंगिकता के प्रश्नों से जूझना पड़ता है । हिंदी भाषा एवं साहित्य की प्रासंगिकता का प्रश्न चर्चा में उठता रहता है और कई बार 'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग' की तरफ से भी हिंदी भाषा की प्रासंगिकता पर प्रश्न उठाए जाते हैं । ऐसे में हिंदी भाषी लोगों का भी दायित्व है कि वे आदिवासी भाषा-भाषी लोगों के साथ एकता प्रदर्शित करें । प्रभुत्व वर्ग जहाँ अपने हितों को साधने के लिए भाषा का प्रयोग करता है वही आम आदमी चाहे वह आदिवासी हो या गैर आदिवासी वह अपने जीवन व्यवहार के लिए भाषा का प्रयोग करते हैं ।

किसी भी राष्ट्र के लिए विभिन्न भाषाओं का अस्तित्व हितकर होता है क्योंकि विभिन्न संस्कृतियों से मिलकर ही कोई राष्ट्र संपूर्ण होता है । इस संदर्भ में विचार करते हुए निर्मला पुतुल लिखती हैं,- "दरअसल भाषा की मौत व्यक्ति की मौत से बड़ी परिघटना है । भाषा एक सामाजिक संपत्ति है, सामूहिक विरासत है । इसलिए किसी की भाषा की मौत का अर्थ है एक जाति, एक समुदाय, एक समूह के पूरे वजूद की समाप्ति, भाषा की मौत के साथ ही उस जाति,

[214] हरिराम मीणा , आदिवासी दुनिया , पृष्ठ संख्या – 132

समुदाय, समूह का इतिहास, भूगोल, सांस्कृतिक मूल्य सौंदर्य चेतना का अंत हो जाता है जिसका निर्माण सदियों-सदियों में बड़ी मुश्किल से होता है।"[215]

अतः भाषा व्यक्ति न होकर एक सामाजिक संपत्ति होती है। इसकी एक सामाजिक विरासत होती है। जिससे उसके बोलने वालों का अस्तित्व जुड़ा होता है। किसी भी भाषा का निर्माण एक दिन में नहीं होता बल्कि वर्षों के जीवनानुभव उसमें निहित होते हैं। भाषा पीढ़ी दर पीढ़ी विकसित होती रहती है इसलिए किसी की भाषा का संरक्षण बेहद जरूरी होता है। और आदिवासी भाषाएँ विलुप्त होने की कगार पर हैं। इसलिए उनका संरक्षण आवश्यक है अन्यथा एक भरा पूरा संसार विलुप्त हो जाएगा और प्रकृति के अनेक अनकहे राज जैसे पृथ्वी को बचाकर रखने का तरीका आदि सब लुप्त हो जाएगें। बाजारवाद के इस दौर में जहाँ मुनाफा ही प्रथम शर्त है वहाँ आदिवासी भाषाओं को बचाना मनुष्यता को बचाना है। इसलिए,- "आदिवासी विमर्श में आदिवासी भाषाओं को बचाने का सवाल बुनियादी चिंताओं में शामिल है। जिन तत्वों से आदिवासी अस्मिता प्रभावित होती है उनमें आदिवासियों की भाषा भी एक प्रमुख तत्व है।"[216] इस सन्दर्भ में ब्लॉगर अपनी पोस्ट औद्योगिक विकास का परिणाम में लिखते हैं,- "औद्योगिक विकास के नाम पर हो रहे प्राकृतिक संसाधनों का बेहिसाब दोहन के पीछे दो बड़े कारण हैं - लालच और मुनाफाखोरी पर आधारित बाज़ारू अर्थव्यवस्था और खरीद-बिक्री वाला लोकतंत्र। आज की अर्थव्यवस्था लालच और मुनाफाखोरी पर आधारित है। कारपोरेट घराना और राजनतिक दलों के बीच बहुत बड़ा गठजोड है। यह गठजोड़ प्राकृतिक संपदा के लूट का मूल कारण है। इनके लिए पर्यावरण

[215] गंगा सहाय मीणा (संपा .) , आदिवासी साहित्य विमर्श , 'निर्मला पुतुल का लेख – 'वैश्विकरण के भँवर में आदिवासी भाषा – साहित्य' , पृष्ठ संख्या – 65

[216] गंगा सहाय मीणा (संपा.), आदिवासी साहित्य विमर्श, सम्पादकीय, पृष्ठ संख्या – 11

कोई मायने नहीं रखता। यही गठजोड़ जंगलों और पहाड़ों को नष्ट करते हुए ईंट, सीमेंट, बालू, गिट्टी और लोहा से बना कंक्रीट का जंगल खड़ा कर रहे हैं।"[217]

अतः आदिवासी मातृभाषाओं के प्रति बेहद संवेदनशील होते हैं। दलित विमर्श में जहाँ भाषाओं को बचाने की चिंता न्यूनतम है, वहीं आदिवासी विमर्श में मातृभाषाओं का प्रश्न उनके अस्तित्व और अस्मिता से जुड़ा हुआ प्रश्न बना हुआ है। आदिवासी समुदाय की सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक अस्मिता को कायम रखने के लिए आदिवासी भाषाओं को भी जीवित रखना अत्यंत आवश्यक है।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर अपनी पोस्ट 'आदिवासी फिलासफी से ही बचेगी दुनिया में लिखती हैं,- "आदिवासी भाषाओं में 'लाभ, मुनाफा, लालच, शोषण एवं दोहन' जैसे शब्द नहीं हैं। इसलिए वे न मुनाफा कमाने के लिए सोचते हैं, न किसी का शोषण करते हैं और न ही प्राकृतिक संसाधनों का दोहन। बल्कि वे प्रकृति के साथ जीते हैं और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग अपने रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करने के लिए करते हैं। आदिवासी जंगलों के अंदर रहते हैं, जंगलों की सुरक्षा करते हैं और वनोपज से अपने रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करते हैं न कि वे पूरा जंगल को ही काट कर रख लेते हैं। लेकिन स्वयं को मुख्यधारा, सभ्य, शिक्षित, विकसित एवं आधुनिक घोषित कर चुका गैर-आदिवासी समाज के शब्दकोश में 'लाभ, मुनाफा, लालच, शोषण एवं दोहन' शब्द मौजूद हैं। इसलिए यह समाज सिर्फ मुनाफा कमाकर अपनी लालच को पूरा करने के लिए एक-दूसरे का शोषण एवं प्राकृतिक संसाधनों का बेहिसाब दोहन करता है।"[218]

---

[217] https://adivasihunkar.blogspot.com/search/label/%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%95%E0%A4%BE%E0%A4%B8,18/04/2020,04:42p.m.

[218] https://adivasihunkar.blogspot.com/search/label/%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%95%E0%A4%BE%E0%A4%B8,22/04/2020, 04:42p.m.

निष्कर्ष रूप में कहें तो आदिवासियों की उपस्थिति कथित मुख्यधारा के समाज के साथ उसके साहित्य में नगण्य रही है, जबकि आदिवासी हमारे व्यापक समाज के ही अभिन्न अंग हैं इसलिए उनके अस्तित्व के बगैर समाज का स्वाभाविक विकास नहीं हो सकता। आदिवासी विमर्श, साहित्य के साथ-साथ समाज को भी प्रभावित करने का काम करता है। कई आदिवासी समुदायों की भाषा और संस्कृति लुप्त होने की कगार पर है। अतः कोई भी देश अपनी विविधता में ही सर्वश्रेष्ठ तरीके से जीवित रह सकता है। एक देश के तौर पर हमारे दायित्व को गंभीर तरीके से बोध कराने का काम आदिवासी विमर्श कर सकता है। इसलिए आदिवासी भाषाओं का संरक्षण और संवर्धन हम सबकी जिम्मेदारी है तभी हमारे देश की संस्कृति और ज्यादा विशिष्ट और समृद्ध होगी।

4.5 हिंदी ब्लॉग और सांप्रदायिकता

सांप्रदायिकता का अर्थ है- विशेष रूप से देने योग्य, अर्थात यदि किसी बालक ने हिंदू धर्म में जन्म लिया है तो उसे हिंदू धर्म की ही शिक्षा मिल सकती है किसी और धर्म की नहीं। इस प्रकार की अवधारणा साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देती है। इस पर विचार करें तो, - सांप्रदायिकता का अर्थ हुआ एक पंथ, एक मत, एक धर्म या एक वाद। इससे न केवल हमारा भारतवर्ष बल्कि विश्व के अनेक देश जूझ रहें हैं। इस प्रकार सांप्रदायिकता एक जटिल तथा विश्वव्यापी समस्या है।

सांप्रदायिकता के कारणों की पड़ताल करें तो मुख्य रूप से अपनी पूजा-पाठ-उपासना-विधियों, खान-पान-रहन-सहन के तौर-तरीकों, जाति-नस्ल आदि की भिन्नताओं को ही धर्म का आधार मानना तथा अपनी मान्यता वाले धर्म को सर्वश्रेष्ठ और दूसरी मान्यता वाले धर्म को निकृष्ट मानना, उनके प्रति द्वेष-भाव पालना और फैलाना जैसे लक्षण सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने का कार्य करते हैं। इस तरह अपने लिए श्रेष्ठता और दूसरों के प्रति निकृष्टता का यह भाव सामाजिक विघटन का कारण बनता है, क्योंकि इससे सामाजिक रिश्ते खंडित होते हैं और परस्पर शंका-अविश्वास का भाव

बढ़ता जाता है जो सामाजिक विभाजन को जन्म देता है। परिणाम स्वरूप एक ओर अलग-अलग धर्म को मानने वालों की बस्तियां अलग-थलग होने लगती हैं, तो दूसरी ओर यह अलगाव आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि कारणों से जुड़कर देश की टूटन का कारण भी बनता है।

हमारे देश 'भारतवर्ष' की बात करें तो, इस प्रकार की अलगाववादी-प्रवृत्ति का शिकार होकर भारत विभाजन के अत्यंत भयावह दौर से गुजर चुका है। हमें दोबारा ऐसे भयावह मंजर से गुजरना न पड़े इसके लिए हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी धर्म के अनुयायी के द्वारा कोई भी ऐसी बात नहीं सुनना चाहिए जो देश को खंडित करने वाली हो, देश को तोड़ने वाली हो। हमें इस तरह की बातों का पुरजोर विरोध करना चाहिए जो देश को तोड़ने वाली हो। हमें सर्वधर्म समभाव के मूल को समझना चाहिए क्योंकि यदि धर्म के नाम पर राष्ट्र बनेगा तो यह संभव है कि आगे चलकर नस्ल, जाति, भाषा आदि के आधार पर राष्ट्र बनने की कवायद शुरू हो जाए।

यदि ऐसा हुआ तो विविधता में एकता वाले भारतवर्ष की तस्वीर खंडित हो सकती है। ऐसे विविधता वाले वर्तमान भारतीय राष्ट्र में धर्म पर आधारित राज्य-राष्ट्र की बात करना और उनके समर्थन को बढ़ावा देना कहां तक सही है ? इस पर अभी विचार होना शेष है। अतः सांप्रदायिकता वर्तमान समय में सबसे अधिक चर्चित, वैचारिक और विवादित अवधारणा है, जिसका वर्तमान समय में किसी भी समाज के मूल्यांकन का सबसे बड़ा आधार माना जाता है।

भारत एक विशाल देश है, जहाँ सदियों से विभिन्न धर्मों के लोग आपस में मिल-जुल कर रह रहे हैं। आपसी भाई-चारा, प्रेम-सौहार्द, बहु-समाजवाद जैसी समृद्ध परंपराओं ने देश की पहचान को बनाए रखा है तथा भारत की सभ्यता और संस्कृति ने विकास की अलग पहचान बनाई है, जिसका वैश्विक स्तर पर किसी न किसी रूप में गुणगान सदैव होता रहता है, क्योंकि संविधान में भारतवर्ष को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य का दर्जा दिया गया है और अल्पसंख्यक समुदायों के संरक्षण के लिए कई

प्रावधान किए गए हैं। राज्य प्रशासन किसी विशेष धर्म, जाति, लिंग के आधार पर कोई भेद-भाव नहीं करता। सभी के लिए समान अवसर मिले हैं।

हमारी संवैधानिक व्यवस्था ऐसी बनाई गई है ताकि कोई अपने आप को अलग-थलग न महसूस करें। इसके लिए भारतीय संविधान में सभी प्रकार के सकारात्मक उपाय किए गए हैं, हालाँकि इसके बावजूद भी साम्प्रदायिक घटनाएं होती रहती हैं। इन घटनाओं को रोकने के लिए सरकार सांप्रदायिक सद्भाव के अनेक उपाय करती रहती है तो दूसरी तरफ संविधानिक, कानूनी, प्रशासनिक, आर्थिक, आदि उपायों को भी मजबूती से पालन करती है।

साम्प्रदायिक सद्भाव पुरस्कार समारोह, 2009 में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने साम्प्रदायिक् सद्भाव और राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि- ''भारत विश्व के सभी महान धर्मों का देश रहा है। कई धर्म भारत में शुरू हुए और कई यहाँ आकर पनपे। इस उप-महाद्वीप में सदियों तक ऐसा अद्भुत सामाजिक और बौद्धिक वातावरण रहा है, जिसमें न केवल अलग-अलग धर्म शांतिपूर्वक साथ-साथ विकसित हुए हैं, बल्कि उन्होंने एक-दूसरे को समृद्ध भी किया है। यह हमारा पुनीत कर्तव्य है कि हम इस महान परम्परा को आगे बढ़ाएं। मैं समझता हूं कि सरकार और सभ्य समाज की संस्थाओं को निरंतर इस पर नजर रखनी चाहिए और धर्म के नाम पर हिंसा करने वालों के खिलाफ आवाज उठानी चाहिए। कोई भी धर्म हिंसा की इजाजत नहीं देता। कोई भी धर्म नफरत का प्रचार नहीं करता और न ही दूसरों से बैरभाव रखने की बात कहता है। जो लोग धार्मिक चिन्हों और मंचों का इस्तेमाल हिंसा, धार्मिक द्वेश और विवादों के लिए करते हैं वे अपने धर्म के सच्चे प्रवक्ता नहीं हैं। लेकिन हम यह भी जानते हैं कि हमारे समाज सहित सभी समाजों में असामन्जस्य फैलाने वाले लोग होते हैं। इसलिए यह और भी महत्वपूर्ण है कि जो लोग आज पुरस्कार प्राप्त कर रहे हैं, हम ऐसे लोगों को मान्यता दें और उनकी प्रशंसा करें, जो साम्प्रदायिक सद्भाव

और राष्ट्रीय एकता के लिए निःस्वार्थ भाव से कार्य करते हैं। यह हमारा कर्तव्य है कि हम ऐसे विवेकशील लोगों को प्रोत्साहन दें।''[219]

इस सन्दर्भ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भी कहा था, ''सम्प्रदायवाद हाल के दिनों में उग्र रूप लेने लगा है। अराजकता एक दैत्य है, जिसके कई रूप हैं। अंततः यह सभी के लिए दुखदायी है, उनके लिए भी, जो शुरू में इसके लिए जिम्मेदार होते हैं।''[220]

सरकार ने साम्प्रदायिक सद्भाव को जनमानस में बढ़ावा देने के लिए समय-समय पर अनेक कदम उठाए हैं। जैसे राष्ट्रीय एकता परिषद (1960 के दशक में) की स्थापना और राष्ट्रीय साम्प्रदायिक सद्भाव फाउंडेशन (1992) की स्थापना शामिल है तथा समय-समय पर जनता में साम्प्रदायिक सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न प्रकार के संबंधित दिशा निर्देश समय-समय पर जारी करती रहती हैं।

4.5.1 साम्प्रदायिकता और हिन्दू-मुस्लिम

भारत में सांप्रदायिकता के उदय के कई कारण हैं बीसवीं शताब्दी में शुरू में बंगाल विभाजन, मुस्लिम लीग की स्थापना और हिंदू महासभा को सांप्रदायिकता के उदय का कारण माना जाता है। (यह कहाँ तक सही है इस पर अभी और विचार होना है।) इसके बाद 1909 में मुसलमानों को अलग प्रतिनिधि चुनने का अधिकार देना मुस्लिम लीग का पाकिस्तान का प्रचार और धर्म के नाम पर देश के बंटवारे से सांप्रदायिकता को और भी तेज गति से बढ़ावा मिलना जैसे कई पहलू जिम्मेदार है। आजादी के बाद भी सांप्रदायिकता एक गंभीर समस्या बनी हुई है। भारत में सांप्रदायिक हिंसा की

[219]https://www.facebook.com/notes/gk/%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A5%8D%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%AF%E0%A4%BF%E0%A4%95-%E0%A4%B8%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B5-%E0%A4%94%E0%A4%B0-%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4/367195776715590,21/09/2020 ,16:20

[220]https://www.facebook.com/notes/gk/%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A5%8D%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%AF%E0%A4%BF%E0%A4%95-%E0%A4%B8%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B5-%E0%A4%94%E0%A4%B0-%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4/367195776715590,21/09/2020 ,16:20

घटनाओं पर नजर दौड़ाएं तो हम जान सकते हैं कि सांप्रदायिकता कितना गंभीर मुद्दा है। गृह मंत्रालय की रिपोर्ट के मुताबिक देश में लगभग 5000 सांप्रदायिक हिंसा की घटनाएं हो चुकी हैं। 1977 तक जितनी भी हिंसात्मक घटनाएं हुई उनमें से 11.6% सांप्रदायिकता की वजह से हुई। 1982 में यह प्रतिशत बढ़ गया था 17.6% हो गया और 1982 के बाद तेजी से बढ़ा और 50% तक हो गया। इस तरीके से सांप्रदायिकता की समस्या लगातार बढ़ती ही जा रही है।

4.5.2 सांप्रदायिकता, ब्रिटिश नीतियां और पाकिस्तान

भारत में सांप्रदायिकता के उदय के कई कारण माने जाते हैं जिसमें सबसे बड़ा कारण ब्रिटिश नीतियां और पाकिस्तान का निर्माण है। भारत में अंग्रेजों ने फूट डालो और शासन करो की नीति के जरिए हिंदू-मुस्लिम एकता को खत्म कर दिया और धर्म के नाम पर देश का बंटवारा हुआ जिससे सांप्रदायिकता तेजी से बढ़ती चली गई और काफी सारे साम्प्रदायिक संगठन बनने लगे ।

आजादी के बाद बीसवीं शताब्दी में कई धार्मिक संगठनों ने जैसे- मुस्लिम लीग, हिंदू महासभा आदि। इन संगठनों ने धार्मिक विभेद को कहीं न कहीं बढ़ावा दिया जैसे मुस्लिम लीग ने मुसलमानों के लिए अलग देश की मांग की और हिंदू महासभा ने भारत को हिंदू राष्ट्र बनाने का प्रयास किया। इस तरीके से हिंदू और मुसलमान के संबंध बिगड़ते चले गए जिससे सांप्रदायिकता को बल मिलता गया।

पाकिस्तान के प्रचार – प्रसार ने भी भारत में सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने का कार्य किया। भारत और पाकिस्तान के संबंध शुरू से ही तनावपूर्ण रहे हैं और पाकिस्तान में भारत विरोधी गतिविधियों को हमेशा बढ़ावा दिया है और भारतीय मुसलमानों को आकर्षित करने का प्रयास किया है इसलिए बहुत सारे हिंदू लोगों के मन में यह गलतफहमी बैठ जाती है कि भारतीय मुसलमान पाकिस्तान की वफादारी करते हैं जिससे भारत में सांप्रदायिकता को बल मिलता है और बीच-बीच में होने वाले दंगे फसाद में भी सांप्रदायिकता को बढ़ावा मिलता है जिसे ख़त्म करना आज हम युवाओं

की जिम्मेदारी बन गयी है। इसके लिए जरूरी कदम है कि शिक्षा के प्रचार-प्रसार और कानून को महत्त्व दिया जाय। शिक्षा के द्वारा ही सांप्रदायिकता के खिलाफ लोगों को जागरूक किया जा सकता है। स्कूलों में किताबों के जरिए, कॉलेज में या शिक्षा संस्थानों के द्वारा सांप्रदायिकता की कमी को पढ़ाया जा सकता है ताकि लोग सांप्रदायिकता से नफरत करने लगें। कुछ ऐसी कहानियां बताई जा सकती है जिसमें मुसीबत के वक्त हिंदू मुसलमान की मदद के बारे में बताया जा सकता है। जिससे मेल-जोल को बढ़ावा मिलेगा और सांप्रदायिकता खत्म हो सकती है।

जनमानस को नुक्कड़-नाटकों के जरिए फिल्मों और विज्ञापनों के जरिए भी सांप्रदायिकता के बारे में और उसकी कमियों के बारे में बताया जा सकता है तथा सरकार सख्त कानून बनाकर सांप्रदायिकता को खत्म कर सकती है जैसे कोई नेता धर्म के नाम पर कोई भाषण देता है या लोगों को भड़काने की कोशिश करता है तो उसके खिलाफ सरकार को सख्त से सख्त कानूनी कारवाई करनी चाहिए। अगर कोई धार्मिक विषयों पर लोगों की शांति भंग करता है तो उनके लिए सरकार जरुरी कारवाई कर सकती है। कानून सभी के लिए बराबर हो किसी को कोई छूट न दी जाए जिससे नेता या कोई भी इस प्रकार की गतिविधि में भाग न ले सके।

4.5.3 साम्प्रदायिकता और धार्मिकता

साम्प्रदायिकता और धार्मिकता दो पृथक् दिखने वाले किन्तु परस्पर निर्भर तत्त्व हैं। धार्मिकता एक व्यापक तत्त्व है तथा साम्प्रदायिकता उसके अंतर्गत निहित एक विचारधारा मात्र है। प्राचीन काल में धर्म का स्वरुप अत्यंत व्यापक तथा विस्तृत था जो अपने अंदर सभी लोगों को अपनी-अपनी आस्था के पालन की स्वतंत्रता प्रदान करता था। यही व्यक्तिगत आस्था तथा देवोपासना का स्वतंत्र विचार ही भारतीय अर्थों में साम्प्रदायिकता का मूल है किन्तु ये विचार वर्तमान तथा विदेशियों द्वारा परिभाषित तथा थोपी गयी साम्प्रदायिकता की भावना से पृथक् है।

हिन्दू धर्म के अंतर्गत विभिन्न सम्प्रदाय हमारी धार्मिक स्वतंत्रता के परिचायक थे जबकि वर्तमान की साम्प्रदायिकता राजनैतिक तथा सामाजिक वर्चस्व की इच्छा का अस्त्र है। निश्चय ही हिन्दू धर्म के अंतर्गत विकसित सम्प्रदायों में भी झगड़े होते थे लेकिन वे एक समाज विशेष को नष्ट करने की भावना से प्रेरित नहीं थे बल्कि अपनी विचारधारा को लोगों के सामने प्रकट तथा प्रचारित करने की भावना से प्रेरित थे।

अतः हम देखते हैं कि प्राचीन हिन्दू और बौद्धों के बीच कुछ साम्प्रदायिक घटनाओं का उल्लेख करके कतिपय विचारक अपना स्वार्थ सिद्ध करने का प्रयास करते हैं लेकिन अगर हम विचार करें तो बौद्ध धर्म की भावना हिन्दू समाज में सुधार की है न की उसे मिटाने की। यही कारण है कि आरम्भ में हिन्दू मान्यताओं तथा बौद्ध मान्यताओं के बीच में टकराव होता है लेकिन अन्ततोगत्वा हिन्दू धर्म बौद्ध मान्यताओं को स्वीकार कर लेता है तथा महात्मा बुद्ध को दशम अवतार के रूप में स्वीकार कर लेता है और बौद्ध धर्म भी हिन्दू मान्यताओ के साथ सामंजस्य विकसित कर लेता है। किन्तु वर्तमान में साम्प्रदायिकता का स्वरूप जैसा दिखता है, वो विशेष कर के हिन्दू तथा मुस्लिम धर्म के राजनीतिक तथा सामजिक वर्चस्व के संघर्ष का परिणाम है।

इसका प्रारंभ 712 ई. में मुहम्मद बिन कासिम के सिंध पर आक्रमण से शुरू हुआ। उसके पश्चात अपनी राजनीतिक सत्ता को मजबूत करने के लिए तथा सामाजिक और धार्मिक वर्चस्व स्थापित करने के लिए परस्पर संघर्ष का आरम्भ हुआ। वह संघर्ष हमें कई रूपों में दिखाई पड़ता है, लेकिन इस्लाम धर्म मुख्य रूप से धार्मिक चेतना से प्रेरित था इसलिए यह संघर्ष मुख्य रूप से धार्मिक संघर्ष के रूप में केंद्रित हो गया क्योंकि भारतीय समाज राजनैतिक रूप से पहले ही मुसलमानों से पराजित हो गया था परन्तु धार्मिक रूप से उसने कभी पराजय स्वीकार नहीं की थी। मुसलमानों की तरफ से अपने वर्चस्व के लिए यह आवश्यक था कि वह हिन्दू धर्म को पराजित करें और हिन्दू धर्म के

लिए यह आवश्यक हो गया था कि अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए एकता का कोई संबल स्वीकार्य करें जो की धर्म के रूप में ही संभव था।

हम देखते हैं की मुस्लिम शासकों ने हिन्दू धर्म को मिटाने का प्रयास किया जिसके लिए मंदिरों को ध्वस्त किया, बड़े पैमाने पर क़त्लेआम किया और अनुचित कर लगाये जिससे हिन्दू धर्म के अनुयायी हतोत्साहित हो। यही संघर्ष वर्तमान में साम्प्रदायिकता का मूल है लेकिन किसी भी समाज को अपनी रक्षा के लिए बचाव से ही काम नहीं चलता है बल्कि उसे प्रतिउत्तर भी देना होता है इसलिए अपने बल तथा शक्ति के अनुसार दोनों धर्मों ने एक संघर्ष का रूप ग्रहण कर लिया और यह संघर्ष केवल शासकों तक सीमित न रहकर सामान्य जनता तक पहुँच गया। इस संघर्ष में आग में घी तब पड़ा जब दो धार्मिक समाजों के बीच में एक तीसरा धर्म अंग्रेजों का आ गया। अंग्रेजों ने दोनों वर्गों की स्थिति को जानकर अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए इस स्थिति का फायदा उठाया और इस संघर्ष को बढ़ावा दिया।

भारतीय समाज तथा हिन्दू धर्म में एक अद्भुत सहनशक्ति तथा सामंजस्य बैठाने की क्षमता है जो कि धीरे – धीरे स्वयं ही इस समस्या का समाधान कर रहा था लेकिन अंग्रेजों ने हिन्दू धर्म की इस क्षमता को प्रभावित किया और सम्प्रदायिकता की समस्या को बढ़ा दिया जैसे – मुस्लिम समाज का कुछ वर्ग अपने भोजन के लिए गाय का मांस खाता था लेकिन वो गाय के मांस के निर्यात की क्षमता नहीं रखता था परन्तु अंग्रेजों ने बड़े पैमाने पर क़त्लखाने खोलकर गाय के मांस का निर्यात आरम्भ किया और मुस्लिम समाज को गाय की हत्या के लिए अवसर प्रदान करके प्रोत्साहित किया और दूसरी तरफ हिन्दू समाज में मुस्लिम को गाय की हत्या के लिए जिम्मेदार ठहरा कर परस्पर संघर्ष के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार साम्प्रदायिकता को अंग्रेजों द्वारा सामाजिक तथा राजनीतिक वर्चस्व को मजबूत करने के लिए एक हथियार के रूप में प्रयोग किया।

वर्तमान में साम्प्रदायिकता और धार्मिकता के भेद लगभग समाप्त हो गये जिसके परिणाम स्वरूप धार्मिकता को साम्प्रदायिकता के रूप में परिभाषित किया जाने लगा तथा साम्प्रदायिकता को धार्मिकता के रूप में व्याख्यायित किया गया। अतः यद्यपि धार्मिकता तथा साम्प्रदायिकता शाब्दिक रूप में अविरोधी हैं तथा एक दूसरे के पूरक भी हैं किन्तु राजनैतिक और सामाजिक वर्चस्व की कुत्सित छाया में भारतीय समाज के लिए विनाशक तथा भंजक हैं।

4.5.4 साम्प्रदायिकता और संस्कृति

साम्प्रदायिकता का सामाजिक और राजनीतिक साधन के रूप में प्रयोग विदेशी शासकों, आक्रमणकारियों ने अपने स्वार्थ के लिए किया था। अब जबकि शासन विदेशी नहीं है किन्तु शासन स्वदेशी हो या विदेशी उसकी प्रकृति अपनी वर्चस्व की स्थापना होती है, जिसके लिए वह किसी प्रकार का संकोच नहीं करता हैं इसीलिए स्वदेशी शासन होने के बाद भी साम्प्रदायिकता का प्रयोग उसी प्रकार होता रहा।

साम्प्रदायिकता जहाँ दो धर्मों या सम्प्रदायों के मध्य संघर्ष को दर्शाती हैं किन्तु इस साम्प्रदायिकता को आगे करके सम्प्रदाय विशेष अपने समाज विशेष को हानि पहुँचाता है। सबकी आस्था और मतों का भिन्न होना एक अलग बात है तथा उस आस्था पर बिना विचार किए जड़ता से स्थिर होना अलग बात है। इसके अतिरिक्त अपनी आस्था को ही सर्वोत्कृष्ट मान करके अन्य सम्प्रदायों की निंदा तथा आलोचना एवं उन्हें हानि पंहुचाने की भावना साम्प्रदायिकता का नवीन रूप है। साम्प्रदायिकता के इस नवीन रूप की संरचना अचानक से नहीं बल्कि इसके लिए समाज के मस्तिष्क में निरंतर इन्हीं भावों को भरना पड़ता है और यही कतिपय साम्प्रदायवादियों का मुख्य हथियार है जो युवाओं का ब्रेनवॉश करके अपने स्वार्थ के लिए उनका प्रयोग करता है।

यह प्रक्रिया सांस्कृतिक तत्त्वों के गलत व्याख्याओं के द्वारा पूरी की जाती है। संस्कृति अपने आप में एक व्यापक तत्त्व है जो अपने अन्दर समाज के विभिन्न वर्गों द्वारा की जाने वाली विभिन्न गतिविधियों का बोध कराती है, जैसे हिन्दू समाज में ही एक तरफ चूहे को गणेश भगवान का वाहन मानकर उसको पूँजा जाता है तो दूसरे समाज में उसको मारकर खाने का विधान भी मिलता है। यह अपने आप में एक संस्कृति का अंतर्विरोध भी हो सकता है लेकिन गतिरोध नहीं लेकिन साम्प्रदायिकता की वर्तमान अवधारणा संस्कृति के इन्हीं अंतर्विरोधों को गतिरोध के रूप में प्रस्तुत करके संघर्ष का माहौल तैयार करती है। एक बड़े तथा प्राचीनतम समाज में विभिन्न समूहों तथा आवश्यकता के अनुरूप उनकी गतिविधियों का होना कोई अस्वाभाविक नहीं है लेकिन अंतर्विरोधों का प्रयोग करके समाज को तोड़ने की विधि कदापि उचित नहीं कही जा सकती।

इसी तरह एक और उदहारण पर विचार करें तो , हमारे आचार-विचार, रहन-सहन, पहनावा-ओढ़ावा, खान-पान ये सभी संस्कृति के अंग माने जाते हैं। इस सन्दर्भ में खान-पान के एक ज्वलंत सवाल पर ज्यादा बल देखने को मिल रहा है जैसे आज गाय का सवाल ज्यादा महत्त्वपूर्ण बन गया है, जो कि हमारे बीच अरसे से रहा है। इस सन्दर्भ में प्रेमचंद एक जगह लिखते, ‘हाँ, हाँ, मुसलमान गाय की कुर्बानी करते हैं और उनका माँस खाते हैं लेकिन हिन्दुओं में भी ऐसी जातियाँ मौजूद हैं, जो गाय का माँस खाती हैं यहाँ तक कि मृतक माँस भी नहीं छोड़तीं।' इसके बाद वे एक अहम सवाल पूछते हैं, 'संसार में हिन्दू ही एक जाति है, जो गो-मांस को अखाद्य या अपवित्र समझती है। तो क्या इसलिए हिन्दुओं को समस्त विश्व से धर्म-संग्राम छेड़ देना चाहिए?'

हम देखते हैं कि ‘प्रेमचन्द’ खान-पान में गाय के सवाल को उतना महत्त्व नहीं देते है जैसा कि आज महत्वपूर्ण मुद्दा बनकर उभर रहा है कि गाय और उसके मांस के सेवन को जाति विशेष से जोड़कर देखा जा रहा है। यह कहीं न कहीं फूट डालो और राज करो वाली नीति की तरफ इशारा कर रहा है। अतः हमें इस मुद्दे पर बड़े ही समझदारीपूर्ण तरीके से विचार-विमर्श करना चाहिए।

इसी तरह पहनावे के बारे में भी प्रेमचन्द लिखते हैं कि ‘इलाके के हिन्दू और मुसलमान स्त्री - पुरुष लगभग एक जैसे कपड़े पहनते हैं। 'बंगाल में जाइए, वहाँ हिन्दू और मुसलमान स्त्रियाँ दोनों ही साड़ी पहनती हैं।' उनके मुताबिक, 'संगीत और चित्रकला भी संस्कृति का एक अंग है, लेकिन यहाँ भी हम कोई सांस्कृतिक भेद नहीं पाते। अतः हमें टोपी, बुरका, गमछा , कलेवा से ऊपर उठकर समाज को जोड़ने वाले पहलुओं पर विचार करने की आवश्यकता है। प्रेमचन्द कहते हैं कि ‘हमारी समझ में नहीं आता कि वह कौन सी संस्कृति है, जिसकी रक्षा के लिए साम्प्रदायिकता इतना जोर बाँध रही है।' उनके मुताबिक, 'वास्तव में संस्कृति की पुकार केवल ढोंग है, निरा पाखण्ड और इसके जन्मदाता भी वही लोग हैं जो साम्प्रदायिकता की शीतल छाया में बैठे विहार करते हैं। यह सीधे-सादे आदमियों को साम्प्रदायिकता की ओर घसीट लाने का केवल एक मंत्र है और कुछ नहीं।’

आज का ज़माना साम्प्रदायिक अभ्युदय का नहीं है बल्कि आर्थिक युग का है और आज वही नीति सफल होगी जिससे जनता अपनी आर्थिक समस्याओं को हल कर सके जिससे यह अंधविश्वास, यह धर्म के नाम पर किया गया पाखण्ड, यह नीति के नाम पर गरीबों का शोषण करने की प्रवृत्ति को मिटाया जा सके।

4.5.5 साम्प्रदायिकता के कारण

साम्प्रदायिकता बढ़ने के कई कारण हैं यथा - धार्मिक उन्माद फैलाकर सत्ता हासिल करने की हर कोशिश साम्प्रदायिकता को बढ़ाती है , चाहे वह कोशिश किसी भी व्यक्ति , समूह या दल के द्वारा क्यों न होती हो। थोक के भाव वोट हासिल करने के लिए धर्म-गुरुओं और धार्मिक भावनाओं का इस्तेमाल लगभग सभी दल कर रहे हैं। इसमें धर्म निरपेक्षता की बात कहने वाले राजनीतिक दल भी शामिल हैं। इन दलों ने चुनाव में साम्प्रदायिक दलों के साथ समझौते भी किए हैं और सत्ता हासिल करने के लिए समझौते भी किए हैं, सत्ता में इनके साथ साझेदारी की है। यदि धर्म निरपेक्षता की बात कहने वाले दलों ने मौकापरस्ती की यह राजनीति नहीं की होती तो धर्म-सम्प्रदायाधारित राजनीति करने वालों को इतना बढ़ावा हरगिज नहीं मिलता।

वे सभी लोग साम्प्रदायिकता बढ़ाने में सक्रिय भागीदार हैं , जो व्यवस्था बदलने और समता एवं शोषणमुक्त समाज-रचना की लड़ाइयों को धार्मिक-साम्प्रदायिकता उन्माद उभारकर दबाना और पीछे धकेलना चाहते हैं। हमें याद रखना चाहिए कि धर्म सम्प्रदाय की राजनीति के अगुवा चाहे वे हिन्दू हों , मुसलमान हों , सिख हों , इसाई हों या अन्य किसी धर्म को मानने वाले , आम तौर पर वही लोग हैं , जो वर्तमान शोषणकारी व्यवस्था से अपना निहित स्वार्थ साध रहे हैं – पूँजीपति , पुराने राजे-महाराजे, नवाबजादे, नौकरशाह और नये-नये सत्ताधीश, और समाज का प्रबुद्ध वर्ग, जिससे यह अपेक्षा की जाती है कि साम्प्रदायिकता जैसी समाज को तोड़ने वाली दुष्प्रवृत्तियों का विरोध करेगा, आज वही लोग उपभोक्ता संस्कृति का शिकार होकर मूकदर्शक बने हुए है, और अपने दायित्वों का निर्वाह करना भूल गये है।

साम्प्रदायिकता के दूसरे पहलू पर विचार करें तो, 1906 में मुस्लिम लीग की स्थापना (जो की एक राजनीति पार्टी है) भी बढ़ती साम्प्रदायिकता का एक बड़ा कारण माना जाता है। शुरुआत में यह पार्टी केवल मुसलमानों के शिक्षित वर्ग तक ही सीमित थी। लगभग उसी के आस-पास कई घटनाएँ होती हैं, जैसे-

1 भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने सदस्यों से बड़े पैमाने पर समर्थन प्राप्त करना शुरू कर दिया और इसमें युवा मुस्लिम भी शामिल थे।

2 मोहम्मद अली जिन्ना पाकिस्तान के निर्माण के पीछे प्रमुख शक्तियों में से एक वास्तव में 1920 तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य थे।

3 1906 में, ऑल इंडिया मुस्लिम लीग की स्थापना आगा खान, नवाब के नवाब और नवाब मोहसिन-उल-मुल्क के नेतृत्व में की गई थी। इस तरह से इनका जनाधार मजबूत होता है और आगे चलकर मुस्लिमलीग ने अंग्रेजों द्वारा किये गए बंगाल विभाजन का समर्थन किया और सरकारी सेवाओं में मुसलमानों के लिए विशेष सुरक्षा उपायों की मांग की।

इस अवसर का लाभ उठाते हुए अंग्रेजों ने इसकी उपयोगिता बढ़ाने के सन्दर्भ को साधते हुए, मुस्लिम लीग को मुस्लिम जनता से संपर्क करने और उनका नेतृत्व संभालने के लिए प्रोत्साहित करने का बखूबी काम किया। इसमें खासतौर से शिक्षित मुस्लिम युवा कट्टरपंथी राष्ट्रवादी विचारों से आकर्षित थे। इन नौजवानों ने अलीगढ़ स्कूल और बड़े नवाबों और ज़मींदारों की वफादारी की राजनीति को नापसंद किया। स्व-सरकार के आधुनिक विचारों से प्रेरित होकर, उन्होंने उग्रवादी राष्ट्रवादी आंदोलन में सक्रिय भागीदारी की वकालत की। इस तरह उपरोक्त समीकरण ने कहीं न कहीं भारतीय राजनीति में हिन्दू – मुस्लिम को साम्प्रदायिक नजरिये से देखना शुरू कर दिया।

इस सन्दर्भ मेंब्लॉग लेखक शैलेन्द्र चौहान अपनी एक ब्लॉगपोस्ट 'भारतीय राजनीति में साम्प्रदायिकता को उत्प्रेरक के रूप में उपयोग किया जाता है' में लिखते हैं,- "भारत में जब भी साम्प्रदायिकता की बात चलती है तो उसका आशय हिन्दू मुस्लिम सम्बंधों में आपसी द्वेष से लिया जाता है। यदि साम्प्रदायिक समस्या के समाधान की भी बात की जाती है तो भी हिन्दू मुस्लिम विरोध को समाप्त करने का ही अर्थ लिया जाता है। असल में भारत में सम्प्रदाय का तात्पर्य ही हिन्दू-मुस्लिम विभाजन से है।"[221] अतः भारत में साम्प्रदायिकता को हिन्दू मुस्लिम से जोड़कर देखा जाने लगा है जो कि समाज की बेहतरी के लिए लाभप्रद नहीं हैं।

कुछ ब्लॉगरों का मानना है कि साम्प्रदायिकता की अवधारणा पूरी तरह से राजनीतिक अवधारणा है, जो सत्ता विशेष अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए उत्पन्न करता है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर सत्येन्द्र द्विवेदी अपनी एक पोस्ट 'साम्प्रदायिकता का उद्भव एवं विकास' में लिखते हैं,- "साम्प्रदायिकता के विकास के लिए ब्रिटिश सरकार की औपनिवेशिक नीति काफी हद तक जिम्मेदार है। यदि साम्प्रदायिकता भारत में पनपी और इसने भयावह रूप धारण किया जैसा कि

[221] https://www।pravakta।com/communal-riots-in-indian-politics/,23/08/2020,13:20

1947 के दंगे और भारत विभाजन से स्पष्ट है तो इसके लिए बहुत कुछ अंग्रेजी सरकार जिम्मेदार है, जिसने कि साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया।"[222]

अतः यहाँ हम देखते हैं कि ब्लॉगर सत्येन्द्र द्विवेदी साम्प्रदायिकता के लिए अंग्रेजों को जिम्मेदार मानते हैं,सांप्रदायिकता की परिभाषा पर विचार करें तो सांप्रदायिकता एक विचारधारा है जिसके अनुसार कोई समाज भिन्न-भिन्न हितों से युक्त विभिन्न धार्मिक समुदायों में विभक्त होता है। सांप्रदायिकता से तात्पर्य उस संक्रमण मनोवृत्तिसे है जो धर्म और संप्रदाय के नाम पर पूरे राष्ट्र और समाज के व्यापक हितों के विरुद्ध व्यक्ति को केवल अपने व्यक्तिगत धर्म के हितों को प्रोत्साहित करने तथा उन्हें संरक्षण देने की भावना को महत्व देती है। एक समुदाय या धर्म के लोगों द्वारा दूसरे समुदाय या धर्म के विरुद्ध किए गए शत्रु भाव को सांप्रदायिकता के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। यह एक ऐसी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें सांप्रदायिकता को आधार बनाकर राजनीतिक हितों की पूर्ति की जाती है और जिसमें सांप्रदायिक विचारधारा के विशेष परिणाम के रूप में सांप्रदायिक हिंसा की घटनाएं होती हैं।

सांप्रदायिकता के नकारात्मक और सकारात्मक पक्ष भी देखे जा सकते हैं। सांप्रदायिकता का सकारात्मक पक्ष किसी व्यक्ति द्वारा अपने समुदाय के उत्थान के लिए किए गए सामाजिक और आर्थिक प्रयासों को शामिल करता है, दूसरी तरफ इसका नकारात्मक पक्ष ज्यादा प्रचारित और महत्वपूर्ण रहा है। इसे ही एक विचारधारा के रूप में देखा जाता रहा है जो अन्य समूहों से अलग एक धार्मिक पहचान पर जोर देता है, जो सह-अस्तित्व के अवधारणा को नकारता है इसके बरक्स वह स्वयं के धार्मिक, आर्थिक व व्यक्तिगत हितों को साधता है। सांप्रदायिकता के पनपने और विकास के कुछ और कारणों को निम्नलिखित आधारों से समझा जा सकता है, जिसकी एक निश्चित व्याख्या तो नहीं की जा सकती परन्तु कुछ प्रमुख बिंदुओं को

---

[222] https://gyanpradayani|blogspot|com/2018/02/blog-post_64|html, 23/08/2020,13:25

रेखांकित किया जा सकता है। जैसे - धर्म की एक सार्वभौमिक व्याख्या न करें कुछ लोग एक संकीर्ण मान्यताओं के व्याख्या और परिभाषाओं में जब धर्म को समेट देते हैं, तो सांप्रदायिकता का उदय होता है।विभिन्न संप्रदाय और धर्म की अपनी सामाजिक मान्यताएं हैं, जो एक दूसरे से भिन्न हैं थोड़ी भी असावधानी और नासमझी से यह सांप्रदायिक स्वरूप ले लेती है।

भारत और अन्य देशों में राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं ने समय-समय पर अपने लाभार्थ साम्प्रदायिकता की आग को हवा दी है।इसके साथ ही कुछ विशेष सांप्रदायिक संगठन हर देश में विद्यमान हैं, जो राजनीतिक व सत्ता प्रेरित महत्वाकांक्षाओं से समाज को सांप्रदायिकता, दहशत और आतंकवाद की ओर मोड़ते हैं इसमें प्रशासन और आम जागरूक नागरिक भी समान रूप से दोषी माने जा सकते हैं। साथ ही 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में राजनीति की नई अवधारणा का जन्म हुआ उससे भी सांप्रदायिकता की विचारधारा को बल मिला। संकीर्ण सामाजिक प्रतिक्रियावादी तत्वों ने सांप्रदायिकता को पूर्ण समर्थन दिया तथापि धार्मिकता, सांप्रदायिकता को प्रोत्साहित करने का मूल कारण धार्मिकता नहीं थी बल्कि भारत जैसे देश में शिक्षा का अभाव तथा लोगों में बाह्य जगत संबंधी चेतना न के बराबर थी। धार्मिकता ने सांप्रदायिकता के लिए उत्प्रेरक की भूमिका निभाई तथा तथाकथित तत्वों ने इसे सांप्रदायिकता के वाहन के रूप में प्रयुक्त किया। जिसके कई घातक परिणाम सामने आये -

वर्ष 1947 में भारत का विभाजन

वर्ष 1984 में सिख विरोधी दंगे

वर्ष 1989 में घाटी से कश्मीरी पंडितों का निष्कासन

वर्ष 1992 में बाबरी मस्ज़िद विवाद

वर्ष 2002 में गुजरात में दंगे

वर्ष 2013 में मुज़फ्फरपुर में दंगे आदि।

4.5.6 भारत में सांप्रदायिकता के कारण

सांप्रदायिकता देश काल परिस्थिति निरपेक्ष विचारधारा है । यह व्यक्ति की मानसिक संकीर्णता, कट्टरपन, अशिक्षा, लोभ, अवसर परस्तीसभी को एक साथ प्रदर्शित करता है। यह केवल दो धर्मों के मध्य उत्पन्न होने वाली समस्या नहीं है । यह एक ही धर्म के विभिन्न संप्रदायों में भी उत्पन्न हो सकती। मौलिक रूप से सांप्रदायिकता एक विचारधारा है परंतु भारत में इसको तीन प्रमुख चरणों में देखा जा सकता है।

सांप्रदायिक राष्ट्रवाद- इस विचारधारा में किसी एक ही समूह या किसी विशेष धार्मिक समुदाय का प्रतिनिधित्व करने वाले सभी लोगों के हित समान होते हैं। उदाहरण के लिए यदि उनके हित धार्मिक न भी हैं तो भी वे सभी को समान रूप से प्रभावित करते हैं।

उदारवादी सांप्रदायिकता- इस विचारधारा के अनुसार बहुभाषी समाज में एक धर्म के अनुयायियों के सांसारिक हित दूसरे धर्म के अनुयायियों के सांसारिक हितों से भिन्न है।

चरम या उग्रवादी सांप्रदायिकता- इस विचारधारा के अनुसार विभिन्न धर्मों के अनुयायियों या समुदायों के हित एक दूसरे के विरोधी होते है। इस तरह की व्यवस्था में दो भिन्न धर्म समुदाय एक साथ अस्तित्व में नहीं रह सकते, क्योंकि एक समुदाय के हित दूसरे समुदाय के हित से टकराते हैं। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर रवि रतलामी, अपनी एक पोस्ट में प्रेमचन्द के लेख (साम्प्रदायिकताऔरसंस्कृति)का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि - “साम्प्रदायिकता सदैव संस्कृति की दुहाई दिया करती है। उसे अपने असली रूप में निकलते शायद लज्जा आती है, इसलिए वह गधे की भांति जो सिंह की खाल ओढ़कर जंगल के जानवरों पर रौब जमाता फिरता

था, संस्कृति का खोल ओढ़कर आती है।"[223] अतःभारत में सांप्रदायिकता का विकास इस प्रकार का है।

ऐसा नहीं है कि सांप्रदायिकता का विकास केवल भारत में ही हुआ। यह भी उन्हीं परिस्थितियों का प्रतिफल था जिन्होंने दूसरे समाजों में सांप्रदायिकता जैसी घटनाओं और विचारधाराओं को जन्म दिया था। जैसे जातिवाद विरोध, फासीवाद, उत्तरी आयरलैंड में कैथोलिक-प्रोटेस्टेंट संघर्ष या लेबनान में ईसाई-मुस्लिम संघर्ष परंतु इस पर बात करने से पहले हमें जान लेना आवश्यक है कि सांप्रदायिकता एक आधुनिक विचारधारा है और इसकी जड़ें राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक लक्ष्यों में खोजी जा सकती हैं।

वर्तमान समय में सांप्रदायिक हिंसा की घटनाएँ भारत के साथ-साथ विश्व स्तर पर भी देखी जा रही हैं। धर्म, राजनीति, क्षेत्रवाद, नस्लीयता या फिर किसी भी आधार पर होने वाली सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिये ज़रूरी है कि हम सब मिलकर सामूहिक प्रयास करें और अपनेकर्त्तव्योंका निर्वहन ईमानदारी एवं सच्ची निष्ठा के साथ करें। यदि हम ऐसा करने में सफल हो पाते हैं, तो निश्चित रूप से न केवल देश में बल्कि विश्व स्तर पर सद्भावना की स्थिति कायम होगी क्योंकि सांप्रदायिकता का मुकाबला एकता एवं सद्भाव से ही किया जा सकता है।

इस सन्दर्भ में वरिष्ठ पत्रकार डॉ. आनंद प्रधान अपने ब्लॉग की एक पोस्ट 'सांप्रदायिकता और उसके इलाज पर क्या कहते थे शहीद भगत सिंह' में लिखते हैं,- "भारत वर्ष की दशा इस समय बड़ी दयनीय है। एक धर्म के अनुयायी दूसरे धर्म के अनुयायियों के जानी दुश्मन हैं। अब तो एक धर्म का होना ही दूसरे धर्म का कट्टर शत्रु होना है। यदि इस बात का अभी यकीन न हो तो लाहौर के ताजा दंगे ही देख लें। किस प्रकार मुसलमानों ने निर्दोष सिखों, हिन्दुओं को मारा है और किस प्रकार सिखों ने भी इसके चलते कोई कसर नहीं छोड़ी है। यह मार-काट इसलिए नहीं

---

[223] https://www।rachanakar।org/2016/07/blog-post_51।html, 26/08/2020,07:36

की गयी किफलाँ आदमी दोषी है, वरन इसलिए कि फलाँ आदमी हिन्दू है या सिख है या मुसलमान है। बस किसी व्यक्ति का सिख या हिन्दू होना मुसलमानों द्वारा मारे जाने के लिए काफी था और इसी तरह किसी व्यक्ति का मुसलमान होना ही उसकी जान लेने के लिए पर्याप्त तर्क था। जब स्थिति ऐसी हो तो हिन्दुस्तान का ईश्वर ही मालिक है।"[224]

4.5.7 साम्प्रदायिकता के दुष्परिणाम

साम्प्रदायिकता के अर्थ आज बुरे हो गए हैं। इससे आज चारों और भेदभाव, नफरत और कटुता का जहर फैलता जा रहा है। साम्प्रदायिकता से प्रभावित व्यक्ति, समाज और राष्ट्र एक-दूसरे के प्रति असद्भावों को पहुँचाता है। धर्म और धर्म नीति जब मदान्धता को चुन लेती है , तब वहाँ साम्प्रदायिकता उत्पन्न हो जाती है। उस समय धर्म, धर्म नहीं रह जाता है वह तो काल का रूप धारण करके मानवता को ही समाप्त करने पर तुल जाता है। फिर नैतिकता, शिष्टता, उदारता, सरलता, सहृदयता आदि सात्विक और दैवीय गुणों और प्रभावों को कहीं शरण नहीं मिलती है। सत्कर्त्तव्य जैसे निरीह बनकर किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है। परस्पर सम्बन्ध कितने गलत और कितने नारकीय बन जाते हैं। इसकी कहीं कुछ न सीमा रह जाती है और न कोई अनुमान। बलात्कार, हत्या, अनाचार, दुराचार आदि पाश्विक दुष्प्रवृत्तियाँ हुँकारने लगती हैं। परिणामस्वरूप मानवता का कहीं कोई चिन्ह नहीं रह जाता है।

इतिहास साक्षी है कि साम्प्रदायिकता की भयंकरता के फलस्वरूप ही अनेकानेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भीषण रक्तपात हुआ है। अनेक राज्यों और जातियों का पतन हुआ है। अनेक देश साम्प्रदायिकता के कारण ही पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े गए हैं। अनेक देशों का विभाजन भी साम्प्रदायिकता के फैलते हुए जहर-पान से ही हुआ है।

---

[224] https://www|aajtak|in/india/story/bhagat-singhs-views-on-communalism--221915-2014-09-28, 29/08/2020,13:03

4.5.8 साम्प्रदायिकता रोकने के उपाय

इसके समाधान पर विचार करें तो, साम्प्रदायिक भावनाएं फैलाने वाले व्यक्तियों को कठोर दण्ड दिया जाना चाहिए। सर्वधर्म सम्मेलनो का आयोजन करके धार्मिक सहिष्णुता का प्रचार करने वाले समाज सुधारको को सम्मानित और पुरस्कृत करना चाहिए। शिक्षा राजनीतिक संस्थाओ, नौकरियो में साम्प्रदायिक आधार पर कोई भेदभाव नही बरता जाना चाहिए। शिक्षा के प्रचार प्रसार द्वारा अशिक्षित जनता को साम्प्रदायिकता के दुष्परिणामों से अवगत कराया जाना चाहिए। इसके लिए निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया जाना चाहिए -

साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देने वाली ऐसी किसी भी दुष्प्रवृत्ति के शिकार हम खुद न हों इसका हमें विशेष ध्यान रखना चाहिए तथा समाज में साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देने वाली ताकतों के खिलाफ़ खड़े होना चाहिए। यह ताकत या कोशिश चाहे हिन्दुओं के द्वारा हो या मुसलमानों के द्वारा हो या अन्य किसी भी धर्म को मानने वालों के द्वारा हो। हमें उसका विरोध करना चाहिए।

हमें इन बातों का भी ध्यान रखना चाहिए कि केन्द्र व राज्य सरकारों का कोई भी प्रतिनिधि किसी भी धर्म विशेष के अनुष्ठान में राज्य एवं शासन के प्रतिनिधि के रूप में शामिल नहीं हो , न ऐसे अनुष्ठानों को राज्य द्वारा किसी प्रकार की विशेष सहायता मिले। धर्म-निरपेक्ष राज्य की संवैधानिक घोषणा का यह सर्वथा उल्लंघन है। अतः हमें ऐसे आयोजनों के खिलाफ जनमत का दबाव पैदा कर पुरजोर विरोध करना चाहिए।

एक धर्म की उपासना विधियों, उत्सवों ,पर्वों , के आयोजनों से दूसरे धर्मों की उपासना विधियों, उत्सवों-पर्वों में बाधा न पहुँचे, हमें इन सब बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए। जैसे मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा आदि धार्मिक केन्द्रों में लाउडस्पीकरों का उपयोग और उत्तेजनात्मक घोषणाओं का उग्र उद्घोष नहीं होना चाहिए, जैसा कि आजकल हो रहा है। हमें इन मुद्दों पर आपसी

विचार- विमर्श करके सबकी सहमति से इसका हल निकालना चाहिए क्योंकि यह मुद्दा दिन-प्रतिदिन आपसी सौहार्द को कहीं न कहीं प्रभावित कर रहा है। अतः सभी धर्मों के अनुयायियों को इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि हम अपनी धार्मिक-साम्प्रदायिक भावनायें दूसरे पर थोपने की कोशिश न करें। हमारे विचार-आचार में तेज होगा तो वह दूसरों को भी प्रेरित करेगा। जहाँ तक हो अपनी भावनाओं को मर्यादित रखना चाहिए। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि कोई एक गलती करता है तो उसके जवाब में हम दस गलती न करें। अतः हम न गलती करेंगे , न गलती होने देंगे , न जुल्म करेंगे , न जुल्म सहेंगे की नीति पर चलें।

हमें उन अखबारों , प्रचार-माध्यमों, नेताओं, संगठनों का बहिष्कार एवं विरोध करना चाहिए, जो साम्प्रदायिकता के जहर को फैलाने का कार्य करते हैं। अखबारों में छपने वाले ऐसे लेखों-टिप्पणियों का विरोध हम लिखित रूप में लेख-टिप्पणियाँ-सम्पादक के नाम पत्र लिखकर करना चाहिए – जिनसे साम्प्रदायिकता का जहर समाज में फैलता हो। इसके अलावा स्वतंत्र रूप से पर्चे छापकर इन सब मुद्दों का विरोध करना चाहिए जो सामाजिक सद्भाव को किसी भी तरह से खंडित करने का प्रयास करते हैं और अन्य लोक शिक्षण के माध्यमों से साम्प्रदायिकता के विरुद्ध लोगों को जागृत-संगठित करने का भी प्रयास करना चाहिए।

हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि हम जो भी धर्म , जीवन-शैली, उपासना पद्धति अपनाते हों, अपनाएँ, लेकिन अपने से भिन्न दूसरे धर्मों, जीवन-शैलियों, उपासना – पद्धतियों के प्रति सहिष्णु एवं उदार भाव रखना चाहिए। हमारी इस वृत्ति से ही परस्पर संवाद-सम्बन्ध कायम रहेगा और संवादों-सम्बन्धों के आधार पर ही हम एक दूसरे की कमियों को जान पाएंगे और उन्हें दूर कर पाएंगे। इस सन्दर्भ में कहा गया है,- आर्थिक , सामाजिक एवं सांस्कृतिक गैर-बराबरी समाज और राष्ट्र की सबसे बड़ी कमजोरी है। क्या हम इतिहास के इस तथ्य को नकार सकते हैं कि हमारी इसी सामाजिक कमजोरी के चलते भारतीय समाज और राष्ट्र कमजोर हुआ है, टूटा है, गुलाम हुआ है,हिंसा-प्रतिहिंसा

का शिकार हुआ है ? यदि आर्थिक-सामाजिकऔरसांस्कृतिकगैर-बराबरी बनी रही , बढ़ती रही तो कोई भी धर्म-सम्प्रदाय भारतीय समाज-राष्ट्र को विघटित होने से नहीं रोक पायेगा। पेट भरने, तन ढकने, सर छिपाने के लिए समुचित आवास व्यवस्था एवं शिक्षा- स्वास्थ्य आदि की प्राथमिक मानवीय जरूरतें पूरी करने की अनिवार्य मांग को धार्मिक-उन्माद उभाड़कर लम्बे अरसे तक टाला नहीं जा सकता है। सुदूर पूर्व से लेकर पश्चिम तक विभिन्न रूपों में यह मांगें तीव्र और खतरनाक रूप ले चुकी हैं। इसलिए जरूरी है कि समाज की इस कमजोरी को दूर करने का, मानवीय बराबरी की व्यवस्था लाने का राष्ट्रव्यापी संघर्ष तज करने में हम अपनी सक्रिय भूमिका निभायें।

अतः भारत एक विकासशील देश और उभरती अर्थव्यवस्था है। हमारे नेताओं ने इसे एक विकसित देश और आर्थिक महाशक्ति बनाने का सपना देखा था। यह सपना तब तक साकार नहीं हो सकता जब तक देश की आंतरिक शांति व्यवस्था और खास तौर से सांप्रदायिक सद्भाव बना न रहे। सांप्रदायिक शांति और सद्भाव बनाये रखने पर सरकार को काफी ऊर्जा खर्च करनी पड़तीहै और अगर शांति व्यवस्था बनी रहती है तभी विभिन्न सांप्रदायिक वर्गों के बीच विश्वास बढ़ेगा। ऐसा होने पर ही देश विकास और आर्थिक प्रगति के रास्ते पर आगे बढ़ पायेगा क्योंकि यही समय की माँग है। अन्यथा हम आपस में लड़ते रहेंगे और राज करने वाले 'फूट डालो और राज करो' के ताकतवर हथियार का प्रयोग करते रहेंगे।

आज के समय में साम्प्रदायिकता को पुनःपरिभाषित करने की सख्त आवश्यकता हैं। मेरे विचार से साम्प्रदायिकता का मूल अर्थ है किसी भी धर्म या वर्ग या जाती विशेष का असंवैधानिक, अंध और पक्षपातपूर्ण समर्थन करना। फिर चाहे वह हिन्दू हो, मुस्लिम हो, सिखहो, ईसाईहोआदि। साम्प्रदायिकता मानवता के नाम पर कलंक है। इसे यथाशीघ्र समाप्त करने के बारे में हमें विचार करना चाहिए नहीं तो साम्प्रदायिकता का जहर जब चढ़ता है तो उसे उतारना बड़ा मुश्किल होता है, हमें इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए क्योंकि इस तरह की स्थिति केवल भारत में ही नहीं अपितु सारे विश्व में साम्प्रदायिकता का यह जहरीला साँप

फुफकार मार रहा है। जिसकी वजह से आतंकवाद ने जन्म लिया है। इससे कहीं हिन्दू-मुसलमान आपस में लड़ रहें हैं तो कहीं सिक्ख-हिन्दू लड़ रहें हैं तो कही अन्य जातियों के लोग लड़ रहें हैं, इस तरह दिन-प्रतिदिन दंगे-फसाद बढ़ते ही जा रहे हैं। ऐसा इसलिए हो रहा है क्योंकि चंडीदास का प्रसिद्ध सूत्र 'मानुष सत्य साबार ऊपर' अर्थात 'मानुष सत्य, मनुष्य का सत्य सबसे ऊपर है, उसके ऊपर कोई सत्य नहीं' की बात आज हम सब भूलते जा रहें हैं। अतः हमें ऐसा प्रयास करना चाहिए कि साम्प्रदायिकता कहीं किसी तरह से फैले ही नहीं। हमें ऐसे भाव पैदा करने चाहिए जो इसको जड़ से कुचल दे। अल्लामा इक़बाल ने अपने 'रेख़्ता'में ठीक ही कहा है -

'मजहब नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना।
हिन्दी हैं हम वतन हैं, हिन्दोस्तां हमारा।'

4.6 हिंदी ब्लॉग और पर्यावरण विमर्श

विमर्श के माध्यम से हम किसी समस्या के स्वरूप पर गहनता से विचार करते हैं तथा उसके सभी पहलूओं का विशद तथा विस्तृत विश्लेषण करके समाधान की दिशा में प्रयास करते हैं। वर्तमान समाज की समस्याओं में पर्यावरण की समस्या का प्रमुख स्थान है क्योंकि ये हमारे आवासीय वातावरण को साक्षात प्रभावित करता है। यही कारण है की ब्लॉगरों ने अन्य समस्याओं के साथ-साथ पर्यावरण की समस्या पर भी गहनता से विचार किया है।

किसी भी समस्या पर विचार करने से पूर्व उसकी परिभाषा तथा क्षेत्र पर विचार किया जाता है। ब्लॉगर RBS KUSHWAH अपनी एक पोस्ट 'पर्यावरण को क्यों बचाएँ?' में पर्यावरण की परिभाषा पर विचार करते हुए लिखते हैं- ''पर्यावरण शब्द परि आवरण के संयोग से बना है। 'परि' का आशय चारों ओर तथा 'आवरण' का आशय परिवेश है। दूसरे शब्दों में कहें तो पर्यावरण अर्थात वनस्पतियों, प्राणियों और मानव जाति सहित सभी सजीवों और उनके साथ संबंधित भौतिक परिसर

को पर्यावरण कहतें हैं वास्तव में पर्यावरण में वायु, जल, भूमि, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु, मानव और उसकी विविध गतिविधियों के परिणाम आदि सभी का समावेश होता हैं।"[225]

आज का बेलगाम विकास कई बार ऐसी समस्याएं खड़ी कर जाता है कि उन समस्याओं को हल करना भविष्य की पीढ़ी के लिए अपरिहार्य हो जाता है। इतिहास की गलती को वर्तमान सुधारता है, यह सुधार मांजने की प्रक्रिया से आता है। टी. एस. इलियट अपने 'परंपरा एवं नैतिकता' की अवधारणा नामक निबंध में बार-बार इस बात पर जोर देते हैं कि, Tradition is a matter of much wider significance, it cannot be inherited, and if you want you must obtain it by great labor.

परंपरा कई बार निरंकुश विकास से बचाती है। भारतीय समाज प्रकृति के सानिध्य में ही फला -फूला है। भारतीय परंपरा में गंगा, हिमालय, जिस कदर लोगों की चेतना का हिस्सा है, उससे आप पर्यावरण के प्रति भारतीय समाज की जागरूकता का पता लगा सकते हैं। भारतीय सभ्यता में नदियों का विशेष महत्व रहा है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर मनीष कुमार चौरिया अपनी पोस्ट 'हमारा पर्यावरण संरक्षण अभियान'में लिखते हैं- भारतीय संस्कृति प्रकृति के साथ सहजीवन का ही नाम है। ऋषियों ने आरण्यकों को वनों में तपकर दिव्य ज्ञान का साक्षात्कार किया और उन्हीं के आधार पर एक प्रकृति निष्ठ समग्र जीवन शैली का विकास किया, जो कालान्तर में भारतीय संस्कृति कहलाई, उन्होंने प्रकृति - पर्यावरण के प्रत्येक घटक में अपनी ही आत्मा का विस्तार देखा और सबके संतुलित समन्वित विकास को महत्त्व दिया। पर्वत, नदी, वृक्ष-वनस्पति जीव-जन्तु, पवन-आकाश सभी को देव रूप में

225 https://hindi.speakingtree.in/allslides/%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%B5%E0%A4%B0%E0%A4%A3-%E0%A4%95%E0%A5%8B-%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%82-%E0%A4%AC%E0%A4%9A%E0%A4%BE%E0%A4%8F%E0%A4%81/%E0%A4%86%E0%A4%87%E0%A4%82%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%9F%E0%A5%80%E0%A4%A8-%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE-%E0%A4%95%E0%A4%B9%E0%A4%A4%E0%A5%87-%E0%A4%B9%E0%A5%88%E0%A4%82, 30/09/2020,13:20

स्वीकारा।”[226] हमारे महत्वपूर्ण शहर नदियों के किनारे ही विकसित हुए हैं। अतः शहरों के विकास में प्रकृति का बड़ा योगदान रहा है, लेकिन आज यही प्रकृति को क्षति पहुचाँ रहें है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर मंजू शर्मा अपनी एक पोस्ट ‘पर्यावरण संरक्षण ...’ में एक बकरी की कथा के माध्यम से करारा व्यंग करती है। वे आज के मनुष्य की विडंबना को बकरी की कथा से जोड़ती है। वे कहती हैं- “एक बकरी के पीछे शिकारी कुत्ते भाग रहे थे ...बकरी जान बचा कर अंगूरों की एक झाडी में घुस गयी ...कुत्ते आगे निकल गए ...बकरी ने निश्चिंत होकर अंगूर की बेल के पत्ते खाने शुरू कर दिए और ज़मीन से लेकर ऊपर तक के सारे पते खा डाले ....पते झाडी पर से साफ़ हो गए ...छिपने का सहारा समाप्त हो जाने पर कुत्तों ने उसे देख लिया और मार डाला ...सहारा देने वाले को जो नष्ट करता है, उसकी ऐसी ही दुर्गति होती है ...मनुष्य भी आज सहारा देने वाली जीवनदायनी नदियां, पेड़, पौधे, जानवर, पर्वतों आदि को नुक्सान पहुंचा रहा है और इन सभी का परिणाम भी अनेक आपदाओं के रूप में भोग रहा है।”[227]

साहित्य और पर्यावरण का विशेष रिश्ता हमेशा से ही रहा है। साहित्य ने अपना रूपक और उपमान पर्यावरण से सदैव ग्रहण किया है। औद्योगिक पूंजीवाद की शुरुआत के साथ ही पर्यावरण और समाज के बीच विभेद पैदा हुआ। इस विभेद ने कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि के साथ ही साथ ओजोन परत का इतना ज्यादा क्षरण किया कि पर्यावरण और समाज के बीच के संबंधों पर पुनर्विचार शुरू हुआ। इस सन्दर्भ में अनुपमा सिंह अपने ब्लॉग की एक पोस्ट ‘पर्यावरण और हम’ में लिखती हैं “जैसे-जैसे जनसँख्या बढ़ रही है वैसे वैसे औद्योगिकीकरण भी बढ़ता जा रहा है और इसके लिए लोगों को काम करने की जगह की आवश्यकता है, हर जगह अपार उद्योग बढ़ाये जाने पर जोर दिया जा रहा है लेकिन पर्यावरण के संरक्षण का ध्यान नहीं रखा जाता है। हमारी अर्थव्यवस्था को तेजी से विकसित करने के लिए यह उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं लेकिन अत्यधिक उद्योग स्थापित

[226] https://hindi.speakingtree.in/blog/content-375412, 30/09/2020,13:22
[227] https://hindi.speakingtree.in/blog/paryavaran-sanrakshan, 30/09/2020,13:25

होने से हमारे पर्यावरण पर इसका नकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है। औद्योगिक विकास का एक उचित प्रबंधन हमारी अर्थव्यवस्था को बेहतर उत्पादन और बेहतर पर्यावरण प्रदान कर सकता है।"[228]

आर्थिक विकास और बड़ी-बड़ी संस्था जैसे- IMF, WTO ने कहीं - कहीं सदस्य देशों के भीतर इस धारणा को बढ़ावा दिया कि सभी चीजों की जमानत (Bailout) मिल सकती है। इन संस्थाओं द्वारा थोपे गये उत्तरदायित्व को पूरा करना भी सदस्य देशों की मजबूरी थी।

एक और महत्वपूर्ण घटना यह हुई कि औद्योगिक पूँजीवाद ने समय की परंपरागत धारणाओं को अमूल रूप से बदल दिया। विकास के नए मॉडल और आर्थिक विकास हासिल करने की होड़ में पर्यावरण का मुद्दा विचारकों के बीच से गायब ही रहा, एक तो इस देश का दुर्भाग्य भी ऐसा रहा है कि यह देश आजादी के उपरांत गरीबी और विकास के मॉडल तथा सांप्रदायिक समस्याओं में ही उलझा रहा। औधोगिक पूँजीवाद का जबरदस्त दुष्परिणाम यह हुआ कि समय की जो अवधारणा घरेलू कामों, प्रकृति और मनुष्य के जीवन क्रम से बंधी हुई और उसके अनुरूप थी, पूँजीवाद ने इस अवधारणा को बदलकर समय को मुद्रा में तब्दील कर दिया।

साहित्य में चौदहवीं सदी में ज्याफ्री चौसर द्वारा लिखी गई कविताओं से लेकर स्टीफन डक तक की रचनाओं में घड़ियों ने अपनी उपस्थिति चाँद और तारों के साथ दर्ज कराई। यूरोप में यह वही दौर था जब बड़े शहरों के चर्च और पब्लिक टावरों में घड़ियों के लगाए जाने की शुरुआत हुई। हालाँकि उन्नीसवीं सदी तक धूपघड़ियों का भी इस्तेमाल होता रहा। तदोपरांत इस प्रवृत्ति का ह्रास हुआ, यह प्रकृति के दोहन की शुरुआअत का सूचक था। आधुनिक विश्व को प्रकृति के साथ सामंजस्य, सहअस्तित्व को पहचानने की शुरुआत महात्मा गाँधी ने की थी। इस संदर्भ में उनका प्रसिद्ध कथन – पृथ्वी के पास मनुष्य की जरूरत के लिए काफी संसाधन हैं पर मनुष्य के विलासतापूर्ण

---

228 https://hindi.speakingtree.in/blog/%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%B5%E0%A4%B0%E0%A4%A3-%E0%A4%94%E0%A4%B0-%E0%A4%B9%E0%A4%AE, 30/09/2020,13:26

जीवन के लिए नहीं। इस कथन को सतत धारणीय विकास की आधारशिला माना जा सकता है। ब्लॉगर मदन मोहन बाहेती 'घोटू' अपने ब्लॉग की एक पोस्ट 'प्रकृति और पर्यावरण' में लिखते हैं-

"ये प्रकृति जो तुम्हे प्यार से पाल रही है,

देती अन्न ,नीर,वायु तुमको दुलरा के

यदि ना जो तुम उसका पूरा ख्याल रखोगे ,

तो वो तुम्हे ख़तम कर देगी ,प्रलय मचा के

इसीलिए ये आवश्यक है तुमको, हमको,

पर्यावरण बचाना है ,कर दूर प्रदूषण

वृक्ष बचाओ,हवा और जल शुद्ध रखो तुम,

वरना दूभर हो जाएगा,जीना जीवन "[229]

हम पर्यावरण की समस्या को भविष्य के लिए नहीं छोड़ सकते। वर्तमान दौर में विश्व कोरोना जैसी महामारी से जूझ रहा है। इस सन्दर्भ में मंजू शर्मा अपनी एक पोस्ट 'वायरस और हमारी व्यवस्था' में लिखती हैं- "आज विश्व भर में इस महामारी से सभी देश ग्रसित हैं और चारों और हाहाकार मचा है ... ज़िंदगी मानों रुक सी गयी है ...इस महामारी ने भारत देश में हमारी चिकित्सा प्रणाली की पोल खोल के रख दी है ... आज हालात यह हैं की हस्पतालों में मरीज़ों के लिए बिस्तर नहीं हैं, ऑक्सीजन सिलिंडर्स और वेंटीलेटर बहुत ही कम है और हालत दिन प्रतिदिन बद से बदतर हो रही है ... वास्तविक पिक्चर कोई न्यूज़ चैनल नहीं बता रहा, केवल जिनके घर के लोग इस

[229] https://hindi.speakingtree.in/blog/content-281196, 30/09/2020,13:24

महामारी से पीड़ित हैं, उनसे सच्चाई जानिये ..."[230] यह सब असंतुलित विकास की उपज है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर डॉ. अर्चिका दीदी अपनी एक पोस्ट 'कोरोना संकट में योग-वनौषधि एवं स्वास्थ्य' में लिखती हैं- "इन दिनों देश सहित सम्पूर्ण विश्व पर सबसे बड़ा संकट छाया है कोविड-19 का| इससे मुक्ति के लिए अनेक देश अपने-अपने ढंग से प्रयास कर रहे हैं, वैक्सीन तैयार हो ही रही है। अनेक आयुर्वेदिक व जड़ी-बूटी, वनौषधियों के विशेषज्ञ अपने-अपने स्तर से मनुष्य का 'इम्यून पावर' आंतरिक क्षमता बढ़ाने पर जोर दे रहे हैं। इनका मानना है कि 'प्रकृति व्यक्ति की सबसे महत्वपूर्ण सहयोगी है। जब तक व्यक्ति प्रकृति व पर्यावरण के साथ छेड़-छाड़ नहीं करता, प्रकृति अपना सुरक्षा कवच मानव के साथ बनाये रखती है। पर प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करते ही मनुष्य का बाह्य एवं आंतरिक दोनों सुरक्षा कवच टूटने लगते हैं। व्यक्ति शरीर, मन, भावना तीनों से कमजोर हो उठता है। फिर स्वास्थ्य गड़बड़ाता है।' आज का कोरोना संकट हमारा इम्यून पावर कमजोर करके आंतरिक स्वास्थ्य रक्षा कवच तोड़ने का ही तो प्रयास कर रहा है। ऐसे ही अनेक स्थितियों में व्यक्ति को अपनी आंतरिक क्षमता को बनाये रखने के लिए प्रकृति का ही सहारा लेना होता है, क्योंकि क्रमशः रासायनिक औषधियां तो अपना वजूद खोती जा रही हैं, ऐसे में योग व वनौषधियां भी एक स्वास्थ्य रक्षा का मार्ग है।"[231]

विकासशील देश आज भी किसी न किसी माध्यम से विकसित देशों के उपनिवेश हैं, यही आकर हितों का टकराव भी शुरु होता है। विकासशील देशों पर विकसित देशों के विकास के मॉडल को नहीं थोपा जा सकता है। पर्यावरण की समस्या भविष्य की नहीं, आसन्न खतरे ने इसे आज की समस्या बना दिया है। इस विचार- विमर्श करते हुए, 'स्पीकिंग ट्री' नामक ब्लॉग में ब्लॉगर सद्गुरु

[230] https://hindi.speakingtree.in/blog/corona-virus-aur-hamaari-vyvstha, 30/09/2020,13:27

[231] https://hindi.speakingtree.in/blog/%E0%A4%95%E0%A5%8B%E0%A4%B0%E0%A5%8B%E0%A4%A8%E0%A4%BE-%E0%A4%B8%E0%A4%82%E0%A4%95%E0%A4%9F-%E0%A4%AE%E0%A5%87%E0%A4%82-%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%97%E0%A4%B5%E0%A4%A8%E0%A5%8C%E0%A4%B7%E0%A4%A7%E0%A4%BF-%E0%A4%8F%E0%A4%B5%E0%A4%82-%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%A5%E0%A5%8D%E0%A4%AF, 30/09/2020,13:28

जग्गी वासुदेव लिखते हैं कि- "पर्यावरण आज की समस्या है और आज की ही चिंता का विषय भी। अगर आज हमारा जीवन अद्भुत है, तो इसलिये नहीं कि शेयर बाजार में उथल-पुथल हो रही है या फिर किसी विशेष देश या समाज में विकास दर का प्रतिशत अच्छा है। हमारा जीवन अच्छा इसलिये है कि हम पोषक खाना खा रहे हैं, स्वच्छ जल पी रहे हैं, और शुद्ध हवा में सांस ले रहे हैं। ये पूरी तरह से भुला दिया गया है।"[232]

पर्यावरण संरक्षण और विकास को अक्सर अलग-अलग, यहाँ तक कि कई बार एक दूसरे का विरोधी समझा जाता है, लेकिन सच्चाई यह है कि इन्हें एक साथ लाए बिना वर्तमान पर्यावरणीय और आर्थिक चुनौतियों का सामना करना काफी कठिन है। यह बहुत कम बार देखा गया है कि विकासात्मक परियोजनाओं को पारित करने से पहले उसके संकलित पर्यावणीय पहलुओं पर पर्याप्त संवेदनशीलता से विचार किया गया है।

भारत में वर्ष 2006 में ही पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (एनवायरमेंट एसेसमेंट एक्ट) को अपनाया गया है। साथ ही राष्ट्रीय हरित अधिकरण (एनजीटी) और प्रतिपूरक वनीकरण कोष प्रबंधन एवं योजना प्राधिकरण (AMPA) भी अस्तित्व में है। इसके बावजूद विकासात्मक परियोजनाओं को एकांगी दृष्टिकोण से पारित किया जाता रहा है।

4.6.1 पर्यावरण संरक्षण और धारणीय विकास

भारत में विभिन्न शहरों में जहाँ पर्यावरण प्रदूषण की समस्या सतत रूप से बढ़ रही है ऐसे में विकासात्मक क्रियाकलाप के नाम पर पेड़ों की अंधाधुंध कटाई विरोधाभासी कदम ही प्रतीत होता है। सच तो यह है कि बिना स्वच्छ पर्यावरण के सतत विकास की अवधारणा बेईमानी है। समुचित

---

[232] https://hindi। speakingtree in/blog/%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%B5%E0%A4%B0%E0%A4%A3-%E0%A4%86%E0%A4%9C-%E0%A4%95%E0%A5%80-%E0%A4%B8%E0%A4%AE%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE-%E0%A4%B9%E0%A5%88-%E0%A4%AD%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%AF-%E0%A4%95%E0%A5%80-%E0%A4%A8%E0%A4%B9%E0%A5%80%E0%A4%82,21/09/2020,14:49

विकास के लिए पेड़ एक प्राथमिक घटक है। पेड़ वह गोंद है जो भौतिक दुनिया और प्राकृतिक दुनिया को जोड़ने का कार्य करता है। यह कार्बन प्रच्छादन सौर ऊर्जा का उत्पादन, भौतिक जगत के लिए विभिन्न प्रकार की सामग्री उपलब्ध कराने के साथ-साथ खाद्य श्रृंखला और जैव विविधता के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

भारत में पिछले कुछ दशकों में मेट्रो के लिए वाणिज्य प्रतिष्ठान की स्थापना के लिए कई पेड़ों की तिलांजलि दी जा रही है। हर साल सघन वनों को आग लगने की घटना में इज़ाफा देखने को मिल रहा है, जो चीजें हमें जितनी सुलभता से प्राप्त होती हैं उसके प्रति उदासीन उपेक्षित रवैया हरेक सभ्यता में मौजूद रहा है।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्लेशियर पिघलने एवं वनों की अत्यधिक कटाई से नदियों में बाढ़ आ रही है। समुद्र का जलस्तर सन 1990 के मुकाबले सन 2011 में 10 से 20 सेंटीमीटर तक बढ़ गया है, जिससे तटीय इलाकों में मैंग्रोव के जंगल नष्ट हो रहे हैं। परिणाम स्वरूप समुद्री तूफानों की संख्या बढ़ती जा रही है। प्रतिवर्ष समुद्र में करोड़ों टन कूड़े कचरे एवं खर-पतवार के पहुँचने से विश्व के लगभग एक चौथाई मूंगे की चट्टानें नष्ट हो चुकी हैं, जिसमें समुद्री खाद्य प्रणाली होने से परिस्थितिकी तंत्र संकट में पड़ गया है।

हालाँकि वैश्विक स्तर पर विकास के नए मॉडल पर काफी बहस चल रही है। विकास की अवधारणा में भी बदलाव आ रहा है। यदपि इस बदलाव के ध्वजावाहक वही देश हैं जिसका कार्बन उत्सर्जन विश्व में सबसे ज्यादा है। भारत ने अपनी यात्रा एक प्रकृति सेवक से लेकर विकासशील देश की श्रेणी तक पूरी की है। इतिहास की पहली घटना जो सन 1730 जोधपुर जिले के ग्राम खेजरली में घटित हुई जहाँ विश्नोई प्रजाति के 363 पुरुष, महिलाएं एवं बच्चों ने पेड़ों की रक्षा करते हुए, राजा के सिपाहियों के हाथों अपनी जान गवाई।

पर्यावरण की रक्षा के लिए यह परिघटना संपूर्ण विश्व के लिए प्रेरणा स्रोत बनी और 19वीं सदी में इसी सोच ने भारत में 'वन सत्याग्रह' और 'चिपको आंदोलन' एवं कई देशों में 'ट्री हटगर' के रूप में प्रकृति की रक्षा में को 'जन आंदोलन' को मजबूती दी। प्रख्यात पर्यावरणविद अनुपम मिश्र के गीत की निम्नलिखित पंक्तिया इस संदर्भ में उल्लेखनीय है :-

"कहाँ गया उसे ढूँढो../

सुलगती धूप में छाँव के जैसा/

रेगिस्तान में गाँव के जैसा/

मन के घाव पर मरहम जैसा था वो/

कहाँ गया उसे ढूँढो..."[233]

प्रकृति के साहचर्य की यह लालसा साहित्य की केंद्रीय भूमिका को ही पुष्ट करती है। हिंदी में पर्यावरण विमर्श से संबंधित कई ऐसे ब्लॉग हैं जिनमें पर्यावरण के मुद्दे पर मुखर होकर विचार किया जाता है। एक अनूठी बात यह हुई है कि आध्यात्मिक शिखर की चोटी पर विराजमान कई संत भी पर्यावरण से संबंधित प्रश्न पर विचार कर रहे हैं, ब्लॉगर सद्गुरु जग्गी वासुदेव द्वारा चलाया गया 'कावेरी बचाओ अभियान' तो दक्षिण का सबसे सफल पर्यावरण संरक्षण मुहिम है।

पर्यावरण विमर्श की अवधारणा की कई तहें हैं। एक का पक्ष पर्यावरण की राजनीति से है तो दूसरा पक्ष पारंपरिक तौर-तरीकों में निहित है, यानी पाठ्यगत तथा विचार विमर्श के धरातल पर इसे और विस्तार से समझने की कोशिश करें तो हम पाते हैं कि समाज विज्ञान के भीतर राजनीतिक सिद्धांत और विचारधारा के जितने वर्गीकरण हमें मिलते हैं उतने किसी अन्य विमर्श में नहीं मिलते हैं

[233] https://hindi.indiawaterportal.org/content/anaupama-maisara-kahaan-gayaa-usae-dhauundhao/content-type-page/66722, 01/10/2020,09:25

। मसलन उदारवाद, रूढ़िवाद, मार्क्सवाद, राष्ट्रवाद, समाजवाद, फासीवाद, अराजकतावाद, राष्ट्रवाद, आदि। अकादमिक दुनिया में राजनीतिक विचारधारा को जो जगह हासिल है, वह पर्यावरण विमर्श को नहीं है, यह उस बात को इंगित करता है कि हम पर्यावरण को लेकर कितने उदासीन बने हुए हैं। पर्यावरण की नीति और विमर्श के अध्ययन के अंतर्गत हम बिरले ही किसी विचारधारा को पाते हैं।

बीसवीं शताब्दी तथा इक्कीसवीं शताब्दी 'विमर्श मूलक' युग है। विमर्शों की बहुरंगिता में कहीं-न-कहीं मनुष्य के अवबोध का भी विकास हुआ है। बीसवीं शताब्दी के अंत में पर्यावरण को लेकर जागरूकता बड़ी है। यह जागरूकता पहले सिविल सोसाइटी के स्तर पर देखने को मिलती है, फिर इसका रूपांतरण वैश्विक नीतियों में होता है।

पिछले दशक में प्रदूषण, पर्यावरण अवमूल्यन, जैव विविधता की क्षति तथा पर्यावरणीय संसाधन के दोहन तथा आसन्न संकट ने पर्यावरण के प्रति जागरूकता को बढ़ाया, यद्यपि यह नीतियों तक ही सीमित रहा है।

हालाँकि मानवीय गतिविधियों का असर दुनिया की सभी सरकारों पर पड़ा और हड़बड़ी में उनका ध्यान नीतियों की ओर गया जिसका परिणाम यह हुआ कि, सार्वजनिक नीतियां लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए बनाई गयी थी कि इससे प्रदूषण में कमी आएगी साथ ही सरकार ने प्राकृतिक संसाधनों की निगरानी करना भी शुरू कर दिया।

यह बात भी अविवादित सत्य है कि हरेक देश की सरकारें कई सारी सामाजिक समस्याओं का सामना कर रही हैं और ऐसा भी नहीं है कि हरेक सरकार हरेक समस्या पर समुचित ध्यान भी दे रही है। पर्यावरण की समस्या भी एक सामाजिक समस्या है, पर नीतिनिर्माताओं ने इस समस्या का सरलीकरण कर दिया है, इस सरलीकरण से वैश्विक राजनीतिक को फायदा जरूर हुआ है, परंतु इससे वैश्विक समाज का नुकसान हुआ है। यह नुकसान ऐसे हुआ है कि, कार्बन उत्सर्जन, वनोन्मूलन इत्यादि समस्या को अलग-अलग कोटि में बांट दिया गया है। इससे इस विमर्श की जटिलता थोड़ी

बढ़ गयी है। बीते कुछ सालों में कई ऐसे आंदोलन विश्व में हुए हैं जिसमें पर्यावरण संरक्षण के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता उजागर हुई है, इस उजागर के पीछे उत्प्रेरक की भूमिका में सिविल सोसायटी मौजूद रही है, जो अपने आप में शुभ संकेत है।

4.6.2 पर्यावरण आंदोलन का इतिहास

वायु तथा जल प्रदूषण के मानव जीवन पर दुष्प्रभाव की चिंता रोमन युग से मौजूद रही है। चौदहवीं शताब्दी से लेकर सोलहवीं शताब्दी के दौरान यूरोप में महामारी की शुरुआत होती है। दरअसल प्रदूषण का संबंध हमेशा से महामारी से रहा है। वहीं मृदा संरक्षण की परंपरा, भारत, चीन, तथा पेरु जैसे देश में 2000 सालों से मौजूद रही हैं। यद्यपि इस तरह की परम्परा होने के बावजूद अति आधुनिक दुनियां में पर्यावरण संरक्षण को वह स्थान नहीं मिला।

समकालीन पर्यावरणीय आंदोलन का उदय औद्योगिक क्रांति के फलस्वरुप उपजी स्वास्थ्य संबंधी एवं इसी अवधि के दौरान प्रदूषण में हुई बेतहाशा वृद्धि का परिणाम था। उस वक्त राजनीतिक दर्शन के रूप में उदारवाद का बोलबाला था, जिसके अंतर्गत यह विचार प्रबल था कि सभी सामाजिक समस्याएँ, यहाँ तक कि पर्यावरण की समस्या का हल भी खुले बाजार की तर्ज पर होना चाहिए। वही शुरुआती पर्यावरणविदों का मानना था कि जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए पर्यावरण संरक्षण की जिम्मेदारी सरकार की होनी चाहिए।

1924 में वन्यजीव प्रबंधन के प्रोफेसर अल्डो लियोपोल्ड (Aldo Leopold) (1887 – 1948) ने Land Ethic की (भूमि नीतिशास्त्र) अवधारणा को निरूपित किया, इसके अंतर्गत उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि मानव प्रकृति पर विजय हासिल करने की जिद छोड़ते हुए प्रकृति में एक नागरिक के रूप में खुद को ढालना चाहिए।

उन्नीसवीं शताब्दी से वीसवीं शताब्दी के बीच जितने भी पर्यावरणीय संगठन का उदय हुआ अधिकांश का संबंध मध्यवर्गीय समूह से था, जो प्रकृति संरक्षण, वन्य जीव संरक्षण तथा औद्योगिक विकास के फलस्वरुप प्रदूषण में हो रहे इजाफे व शहरीरूप की समस्याओं से विकसित हुआ था। वहीं दूसरी तरफ ऐसे ही संगठन थे जो अपने स्वभाव में वैज्ञानिकता लिए हुए थे, जिनका उद्देश्य प्राकृतिक इतिहास तथा संरक्षण के प्रयासों की जैविक पहलू पर ज्यादा जोर देती थी। इस तरह के प्रयासों की नुमाइंदगी संयुक्त राज्य अमेरिका ही प्रमुख तौर पर कर रहा था। इसके अतिरिक्त यूरोप में भी इस तरह के उल्लेखनीय प्रयास हो रहे थे। उदाहरण के लिए स्विस वैज्ञानिकों के एक समूह ने सरकार से 34,600 एकड़ जमीन स्विस देशों तथा यूरोप के प्रथम राष्ट्रीय पार्क (1914) के लिए आवंटित करवाया।

1960 की शुरुआत में ग्रीन राजनीतिक आंदोलनों की भी शुरुआत होती है, इस पहल ने वैश्विक स्तर पर विश्व को जागरूक करने का कार्य किया। इस काम में गैर-सरकारी संगठनों की भी भूमिका अहम थी उदाहरण के लिए चिपको आंदोलन इत्यादि। चिपको आंदोलन का महत्व इस बात में भी है कि वन्य संरक्षण को पहली बार महिला अधिकारों के साथ भी जोड़कर देखा गया।

4.6.3 पर्यावरण संरक्षण और जनप्रतिनिधित्व राजनीति

पर्यावरण और राजनीति के अपने-अपने मुद्देहोते हैं जो की एक दूसरे की पूरक हैं, यह बात और है कि आज की राजनीति अपने मुद्दे खुद बनाती है, जबकि पहले की राजनीति मुद्दों से स्थापित होती थी, संकट है कि राजनीति, राज करने तक ही सीमित रह जाए। मध्यवर्ग का उभार राजनीति में संतुलन का उपहार था, औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप मध्यवर्ग का उदय होता है। मध्यवर्ग की निर्णायक भूमिका आपको आज जीवन के हर क्षेत्र में दिखाई पड़ेगी। प्याज की कीमतों का उभार मुद्रास्फीति से उतना नहीं है, जितना मध्यवर्ग की जेबों पर पड़ने वाले भार से।

1970 के बाद द ग्रीन, जिन्हें ग्रीन पार्टी भी कहा जाता है, ये वैसे राजनीतिक समूह हैं, जिनका गठन ही परिस्थितिकी उन्मुख नीतियों के आधार पर हुआ था। इसका एक प्रमुख संगठन है यूरोपियन ग्रीन्स, जिसकी स्थापना जनवरी 1984 में ब्रजेल्स में हुई थी। पर्यावरण केंद्रित जो सबसे महत्वपूर्ण व सफल राजनीतिक पार्टी रही है वह है द ग्रीन (the greans) जिसकी स्थापना पश्चिमी जर्मनी में हुई थी और इसके संस्थापक के हर्बर्ट Gruhl (गृहल), पेट्रा कैली तथा अन्य। इसका उदय लगभग 'ढाई सौ' परिस्थिति तथा पर्यावरणीय सामूहिक विलय से हुआ था। इस पार्टी ने जनता को संगठित करते हुए नाभिकीय ऊर्जा तथा वायु एवं जल प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए प्रयास किया था।

इस तरह की पहल से वैश्विक स्तर पर पर्यावरण संरक्षण की दिशा में सक्रियता बढ़ी है। पर्यावरण आंदोलन ने वैश्विक राजनीति को प्रभावित किया है। पर्यावरण को लेकर वैश्विक चिंतन का पहला मूर्त असर 1992 में रियो डी जेनेरियो (ब्राज़ील) में हुए संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण तथा विकास सम्मेलन, (United nations conference on environment and development) जिसे पृथ्वी सम्मलेन भी कहा जाता है।

भारतीय राजनीति के संदर्भ में पर्यावरण से जुड़ी चिंताओं की बात की जाए तो यह चिंता नदारद है। आजादी के बाद से कमोबेश सभी सियासी दल कुछ तयशुदा एजेंडों को लेकर ही आगे बढ़ते रहे हैं। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर RBS KUSHWAH अपने एक पोस्ट 'पर्यावरण को क्यों बचाएँ?' में लिखते हैं कि इस दिशा में सरकार कुछ स्लोगन्स बनाकर जनता को जागरूक करती रहती है। जो इस प्रकार हैं- " वृक्ष धरा का आभूषण है। करता दूर प्रदूषण है। होगी देश में तभी समृद्धि। रोकनी होगी जनसंख्या वृद्धि। बिना बात क्यों हार्न बजाएं। ध्वनि प्रदूषण क्यों फैलाएं। *पर्यावरण को स्वच्छ बनाएं। रोगों को हम दूर भगाएं। "स्वच्छ रहे हमारा देश। स्वच्छ रहे यह मध्यप्रदेश। मोदी गांधी का यह सपना। स्वच्छ रहे देश यह अपना। हम सब का यही है सपना। स्वच्छ रहे भारत यह अपना। घर पर खुशियों की किलकारी। उच्चतम हों हम परोपकारी। जन्मदिन

पर वृक्ष लगाये। नित पानी दें उसे बचाएँ। घर घर गूंजेगी किलकारी। वृक्ष सदा से परोपकारी। अगर चाहिए लंबी आयु। सेवन करें स्वच्छ जलवायु। * वृक्षारोपण कार्य महान। एक वृक्ष सौ पुत्र समान। *बृक्ष कटा। जीवन घटा। * वन हैं तो हम हैं। *बंजर धरती करे पुकार। वृक्ष लगाओ करो श्रृंगार। *वन जल जीवन। जीवन वन हैं। *प्रकृति करती कार्य महान। हम सब ईश्वर की संतान।"[234]

हमारे यहाँ विकास से जुड़े मुद्दों को अक्सर अनदेखा कर दिया जाता रहा है। हमारे देश का राजनीतिक माहौल धर्म, जाति, गरीबी और भ्रष्टाचार जैसे मुद्दों के इर्द-गिर्द ही सीमित है। भारत की राजधानी यों तो दिल्ली है जहाँ नीतियों को मूर्त रूप प्रदान किया जाता है। आप कल्पना करें कि जिस दिल्ली को सम्बन्धित उच्च न्यायालय गैस चेंबर की संज्ञा देता है उसी दिल्ली की नीतियों से पर्यावरण की चिंता गायब है। हालाँकि इसके लिए दिल्ली सरकार ने कई प्रकार के प्रयास किये हैं। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर RBS KUSHWAH अपनी पोस्ट 'पर्यावरण को क्यों बचाएँ?' में लिखते है कि दिल्ली सरकार ने निम्नलिखित उपाय किये हैं जैसे "१) वाहनों की ऑड-ईवन पॉलिसी, अर्थात एक दिन सम और दूसरे दिन विषम नम्बरों के ही वाहन चलाने की अनुमति। २) दिल्ली प्राधिकरण ने पार्किंग शुल्क बढ़ाया। ३) स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने रोगी भार के लिए तैयार रहने का सभी अस्पतालों को निर्देश दिया है। ४) शहर में ट्रकों के प्रवेश पर प्रतिबंध। ५) सिविल निर्माण पर प्रतिबंध और ग्रेडेड रिस्पांस एक्शन प्लान का सख्त अनुपालन। ६) कुछ समय बंद रहेंगे स्कूल। ७) मेट्रो ने अधिक यात्रा की घोषणा, सार्वजनिक परिवहन बसों की संख्या बढ़ाई जाय। ८) राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण ने औद्योगिक गतिविधियों और प्रतिबंधित-अपशिष्ट जल पर रोक लगाई।"[235] यह उपाय कहाँ तक कारगर होगा यह अभी विचार का विषय है। बेंगलुरु में पानी की

---

234 https://hindi.speakingtree.in/allslides/%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%B5%E0%A4%B0%E0%A4%A3-%E0%A4%95%E0%A5%8B-%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%82-%E0%A4%AC%E0%A4%9A%E0%A4%BE%E0%A4%8F%E0%A4%81/%E0%A4%AA%E0%A4%82%E0%A4%9A-%E0%A4%A4%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B5, 30/09/2020,14:30

235 https://hindi.speakingtree.in/allslides/%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%

प्राथमिक स्रोत 'वर्तुर झील' पूरी तरह प्रदूषित हो चुकी है, लेकिन इस पर अब तक का कोई सार्वजनिक विरोध आयोजित नहीं किया गया है। इसी तरह हैदराबाद के 'हुसैन सागर झील' और अन्य शहरों के महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय श्रोत भी गम्भीर ह्रास झेल रहें हैं। परंतु हम उदासीन बने हुए हैं। ऐसा लगता है कि पर्यावरण को चुनावी मुद्दे बनाने के सवाल पर सिविल सोसाइटी लोगों को जागरूक नहीं कर पाई। भारत आज अभूतपूर्व पर्यावरणीय संकट का सामना कर रहा है। कभी भी हमारी हवा और पानी इतने खराब नहीं हुए, जितने आज हैं। आज की गुणवत्ता इस हद तक खराब हो गई है कि, इसके चलते देश में बड़ी तादाद में लोग मर रहे हैं। विश्व के अन्य सभी देशों के मुकाबले भारत में जहरीली हवा के कारण शिशु मृत्यु दर सबसे अधिक है।

2018 में केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने कुल 315 प्रदूषित नदी खण्डों की पहचान की है। केवल गंगा ही प्रदूषित नहीं है, सभी प्रमुख और छोटी नदियां पानी की निरंतर निकासी और अपशिष्टों के अप्रयुक्त निपटान के कारण प्रदूषण का शिकार हो रही है।

4.6.4 पर्यावरण प्रदूषण और वैश्वीकरण

आज हम वैश्वीकरण के उत्तरोत्तर दौर में पहुंच चुके हैं। वैश्वीकरण इतिहास की गतिमान पूँजी को गति प्रदान करने वाली घटना साबित हुई है। इस दौर की समस्याएं भी वैश्विक ही हैं, जैसे कोरोना महामारी जिसके उपचार के सन्दर्भ में ड्बल्यूएचओ द्वारा कुछ ऐसे निर्देश दिए गए हैं जिनका पालन उन लोगों को अवश्य करना चाहिए जो अभी-अभी कोरोना की चपेट से बचकर निकले हैं। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर तमन्ना अपनी पोस्ट 'डब्ल्यूएचओ ने जारी की नई गाइडलाइंस... कोरोना वायरस से ठीक होने के बाद आवश्य करें ये जरूरी काम' में लिखती हैं-

---

A4%B5%E0%A4%B0%E0%A4%A3-%E0%A4%95%E0%A5%8B-
%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%82-
%E0%A4%AC%E0%A4%9A%E0%A4%BE%E0%A4%8F%E0%A4%81/%E0%A4%86%E0%A4%AA-
%E0%A4%AD%E0%A5%80-%E0%A4%AC%E0%A4%9A%E0%A4%BE-
%E0%A4%B8%E0%A4%95%E0%A4%A4%E0%A5%87-%E0%A4%B9%E0%A5%88%E0%A4%82-
%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%B5%E0%A4%B0%E0%A4%A3,
30/09/2020,14:31

"# मास्क पहने, साफ सफाई रखें और सोशल डिस्टेंसिंग के नियमों का पावन करें

पर्याप्त मात्रा में गर्म पानी पिएं

इम्युनिटी को बढ़ाने वाली दवाइयों और खाद्य पदार्थों का अवश्य सेवन करें

अगर स्वास्थ्य सही है तभी घरेलू काम और प्रोफेशनल काम शुरू करें

नियमित रूप से योगासन और प्राणायाम करें... सामर्थ्य अनुसार ध्यान का भी अभ्यास करें

अपनी डाइट का खास ध्यान रखें... अंतुलित और पौष्टिक आहार ही में जो आसानी से आपको पच जाए

पर्याप्त नींद लें और आराम करें.धूम्रपान और शराब से पूर्ण रूप से दूर रहें

व्यायाम संभव ना हो तो हल्की-फुल्की वॉक अवश्य करें अस्पताल से छुट्टी मिलने के सात दिन बाद डॉक्टर का परामर्श अवश्य लें"[236]

इस वैश्वीकरण का प्रभाव हमारे आपके जीवन पर अंदाजे से भी दूर तक पड़ा है। संस्कृतियाँ ऊपरी-ऊपरी तौर पर एक-दूसरे के नजदीक जरूर आई हैं, परंतु संस्कृति के उन घटकों का आदान-प्रदान नहीं हुआ, जिनसे यह दुनिया भविष्य के लिए और बेहतर बन सकती है।

वैश्वीकरण ने खुशहाली को आर्थिक विकास के मार्ग से खोलना तो चाहा, पर मार्ग पर खड़ी प्रकृति को उसने नजरअंदाज कर दिया। इस नजरअंदाज ने शुरुआत में खुशियाँ ही दी, परंतु बीते कुछ सालों में वृक्षारोपण की जो मुहिम चल रही है, राजमार्ग के किनारे वृक्षारोपण यह क्या बयां करती है। वैश्वीकरण में उपभोग की संस्कृति को बढ़ावा दिया। अतृप्ति, 'संतोषम परमम सुखम' को छोड़कर

[236] https://hindi.speakingtree.in/blog/guidelines-for-corona-patients-after-recovery, 30/09/2020,14:33

आगे जा चुकी है। इसी अतृप्ति ने प्रकृति के साथ सह- सामंजस्य को खत्म करने की कोशिश की, इसके लिए उपभोक्तावाद बेहतर शब्द है।

वैश्वीकरण ने दुनिया के एक कोने से दूसरे कोने तक आर्थिक गतिविधियों को काफी बढ़ा दिया है। इस गतिविधि की वजह से औद्योगिक प्रदूषकों में भी वृद्धि हुई है। कंपनियों को प्रतिस्पर्धी बने रहने के लिए किफायती उत्पादन तकनीकों को अपनाना पड़ रहा है, जो पर्यावरण के लिए काफी हानिकारक साबित हो रहा है।

इसका मतलब यह नहीं है कि वैश्वीकरण का विरोध ही एकमात्र विकल्प हो सकता है, दरअसल यह निर्विवाद सत्य है कि बड़ी कंपनियों का औद्योगिक प्रदूषण में कम योगदान होता है। वहीं छोटी कंपनियां ज्यादा उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार होती हैं, अगर हम वैश्वीकरण से वापस निकलना चाहेंगे तो यही छोटी कंपनियां लागत मूल्य में और कमी लाएंगी जिससे पर्यावरण को और नुकसान पहुंचेगा। इसके उलट विश्व में एक दूसरे से जुड़े रहने से संभव है इको फ्रेंडली तकनीकी का विकास हो जाए , जिससे सभी कंपनियों को फायदा हो सके।

जरूरत है प्रकृति में बदलाव लाने की और वैश्वीकरण जनित उपभोक्तावाद से बाहर आने की। इसके लिए बहुत जरूरी है कि उपभोक्तावाद के दुष्परिणामों पर विचार विमर्श हो। विश्वविद्यालय स्तर पर सतत वहनीय विकास पर चर्चा हो।

विकास की अवधारणा को पर्यावरण के अनुकूल बनाने की जरूरत है , संभव है आने वाले दशकों में यह मुकाम भी हासिल हो जाए, तब जाकर वैश्वीकरण सही मायनों में प्रकृति के साथ-साथ मनुष्य के लिए भी फलदायक होगा।

4.6.5 पर्यावरण प्रदूषण और समाधान के लिए किए गए वैश्विक प्रयास

जौन एलिया का प्रसिद्ध शेर है -

"अब नहीं कोई बात ख़तरे की

अब सभी को सभी से ख़तरा है "[237]

आर्थिक स्तर पर हमारा समाज जितना भी भेदभाव युक्त हो परंतु प्रकृति के सामने सभी समान है। पर्यावरण प्रदूषण भेद-भाव करना नहीं जानता, इसलिए यह संपूर्ण मानवता के लिए चुनौती है। वायु प्रदूषण, पर्यावरण प्रदूषण के प्रमुख कारणों में से एक है। यह समस्या हमारी दैनंदिन आदतों की वजह से भी बढ़ रही है।

प्रदूषण नकारात्मक विकास का एक पहलू है। इसकी कीमत समाज को चुकानी पड़ेगी। वैश्विक स्तर पर पर्यावरण प्रदूषण को लेकर सभी देशों के हितधारकों की पहली संगठित बैठक व नीतियां 1992 के पृथ्वी सम्मेलन में तय की गई। इसके अंतर्गत एजेंडा 21 की परिकल्पना की गई। इस सम्मेलन के दौरान वैश्विक कार्य योजना को पारित किया गया, जिससे कि प्रदूषण को कम किया जा सके। इस सम्मेलन की नींव स्टॉकहोम सम्मेलन के दौरान रखी गई। 1983 में संयुक्त राष्ट्र ने ब्रुडलैंड आयोग का गठन किया। आयोग की अनुशंसाओं को Our Common Future (1987) हमारा साझा भविष्य, शीर्षक से प्रकाशित किया गया। इसके अंतर्गत सतत वहनीय विकास की आवश्यकता को रेखांकित किया।

पृथ्वी सम्मेलन के उपरांत UNFCCC united nation framework convention on climate change का गठन हुआ। रियो घोषणापत्र को भी जारी किया गया, जिसके अंतर्गत उन सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है, जिससे पर्यावरण संरक्षण और सतत वहनीय विकास के क्षेत्र में राष्ट्र के कर्तव्यों और उत्तरदायित्व को तय किया गया है, हालाँकि यह सब नीतियों के क्रियान्वयन पर निर्भर करता है।

---

[237] https://www.rekhta.org/couplets/ab-nahiin-koii-baat-khatre-kii-jaun-eliya-couplets?lang=hi, 30/09/2020,14:34

भारत के संदर्भ में अगर समाधान की दिशा में उठाए गए कदमों की चर्चा की जाए तो नीतियाँ बनाने के मामले में हम काफी आगे हैं। नदियों को प्रदूषण मुक्त करने के लिए भी कई सारी योजनाओं को मूर्त रूप प्रदान किया गया है। उदाहरण के लिए नमामि गंगे योजना, राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना इत्यादि।

जलवायु परिवर्तन वास्तविकता है, जिसे आप अनदेखा नहीं कर सकते हैं। यह खतरे की घड़ी भी है। पर्यावरण की रक्षा हम सभी के सामूहिक प्रयास से ही हो सकती है। भारतीय संविधान में अनुच्छेद 51A के अंतर्गत उल्लेखित मूल कर्तव्यों में, प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत झील, नदी और वन्य जीव हैं, उसकी रक्षा तथा संवर्धन एवं प्रतिपादन के प्रति दयाभाव रखने की बात का जिक्र किया गया है।

राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान महात्मा गांधी ने स्वच्छता पर काफी जोर दिया था। गांधी जी ऐसे चिंतक थे जिनके चिंतन में पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता मौजूद रही है, हालाँकि उनके लेखनी व भाषणों में उस अर्थ में इस विषय का जिक्र नहीं है जिस अर्थ में इसका प्रयोग होता है। गांधी जी पुनरचक्रीय सिद्धांत PRACTITONER OF RECYCLING DECATES के अभ्यासी थे, इसी विचार को बाद में पश्चिम ने भी अपनाया। गाँधी ने अपने हिन्द स्वराज में उपभोक्तावाद तथा अर्थशास्त्र के विकास मॉडल की काफी आलोचना की है। गांधी प्रखर प्रकृतिवादी थे। एक बार इतिहासकार एडवर्ड थाम्पसन ने भारत में घटते वन्यजीवों के संबंध में महात्मा गांधी जी के सामने अपनी चिंता व्यक्त की, इसके जवाब में गांधी जी ने जो कहा वह अद्भुत था- wildlife is decreasing in the jungles, but it is increasing in the towns .

गांधी के पर्यावरण संबंधी समझ को हम तब तक नहीं समझ सकते जब तक हम यह मानने के लिए तैयार नहीं हो जाते कि गांधी के विचार में पर्यावरण, नीति शास्त्र व राजनीति एक दूसरे से जुड़े हुए थे। उदाहरण के लिए गांधी द्वारा अपनाया जाने वाला मौन व्रत। हिंदू धर्म में मौन व्रत का

सम्माननीय स्थान है। इससे यह कयास बिल्कुल नहीं लगाना चाहिए कि गांधी हिंदू धार्मिकता को लेकर चल रहे थे। बीते कुछ सालों में भारत में साफ-सफाई की तरफ काफ़ी ध्यान दिया गया। स्वच्छ भारत अभियान के माध्यम से गांधी के सपनों को साकार करने की कोशिश की गई है। औद्योगिक क्रांति के उपरांत संग्रह की प्रवृत्ति तेजी से विकसित हुई है। इस वजह से कचड़े का प्रबंधन तो गड़बड़ाया ही साथ ही अनियंत्रित उत्पादन भी होने लगा। गांधी के सहभागी काका कालेलकर की आदत थी कि वे नीम के दातून से दांत साफ करते थे, इसी क्रम में वे पूरी टहनी ही तोड़ लेते थे, गांधी ने इस बात के लिए उन्हें समझाया कि, जितनी जरूरत हो उतना ही दातून तोड़ने को कहा। इससे दो बातें हुई। एक आवश्यकता की पूर्ति तो हुई, साथ ही चीजों का दोहन भी कम हुआ।

भारत में बीते कुछ सालों में वन-आच्छादित क्षेत्रों में वृद्धि हुई है, कई सारी योजनाओं के माध्यम से आबो-हवा को सुधारने की कोशिश की जा रही है। यह बात ध्यान रहे कि स्थिति में सुधार केवल योजनाओं के माध्यम से नहीं लाया जा सकता है, इसके लिए सामुदायिक सहयोग की अपेक्षा रहेगी। यह बात भी ध्यान में रखने की जरूरत है कि अनावश्यकता प्रकृति पर बोझ है।

साथ ही वनों का विनाश पर्यावरणीय समस्या पैदा करने वाले कारणों में से एक प्रमुख कारण है, यह हमारे पर्यावरण में कार्बन डाइ ऑक्साइड की वृद्धि का मूल कारण है, जो हर साल कई प्रकार की प्राकृतिक आपदा पैदा करता है। आज हर वर्ष आपदा की संख्या दिनों दिन बढ़ रही है और हम अपूरणीय क्षति का सामना कर रहे हैं। हमें अपने आप को बचाने के लिए आगे आना होगा और स्थिति के अनियंत्रित होने से पहले अपने पर्यावरण को बचाना होगा तभी हम अपनी भावी पीढ़ी को बचा पाएंगें। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर मदनमोहन बहेती की कविता 'आओ पर्यावरण बचाएं' की राह पर चलना होगा, जिसमें वे कहतें हैं-

"आओ पर्यावरण बचाएं

जबसे भार्या वरण किया है,

और बंधा वैवाहिक बंधन

मस्ती भरे स्वच्छ जीवन में ,

चिंताओं का बढ़ा प्रदूषण

धुल धूसरित हुई हवाएं,

मुश्किल लेना सांस हो गया...

निर्मल,सुन्दर, स्वच्छ बनाएं

आओ,पर्यावरण बचाएं"[238]

अभी वक्त है कि हम समय रहते प्रकृति की चेतावनी को समझें और पर्यावरण का दोहन बंद करें। आज हम प्रदूषित हो रहे पर्यावरण के नुकसान को अच्छी तरह समझ चुके हैं। आज हमें पृथ्वी के जीवन पर मंडराते खतरे अब नजर आने लगे हैं, इसलिए जरूरत है अपने लालच और इच्छाओं से ऊपर उठकर आने वाली पीढ़ी के बारे में सोचना शुरु कर दें। आज समय आ गया कि हम अपनी पिछली गलतियों से सबक लें और उन्हें सुधारने की कोशिश करें। हमें अपने पर्यावरण की सुरक्षा के लिए आज से ही कदम उठाने होंगे वरना कल बहुत देर हो जाएगी। इसके लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सभी देशों को मिलकर सोचना होगा कि हमारे अस्तित्व की इस लड़ाई में समस्त मनुष्यों को मिलकर ही अपने को सुरक्षित बनाना होगा और यह कार्य परस्पर सहयोग से ही सम्भव है। इस लड़ाई में हम सभी को अपने सामर्थ के हिसाब से अपना-अपना कर्तव्य निर्धारित करना है और उसे निभाना भी है, कहीं ऐसा न हो जाये कि स्थिति इतनी भयावह हो जाये कि हम कुछ करने की स्थिति में ही न रहें, इसलिए समय रहते चेत जायें और पर्यावरण के साथ तालमेल बैठा लें, यही मनुष्य जाति के हित में है।

[238] https://hindi.speakingtree.in/blog/content-196216, 30/09/2020,14:45

पंचम अध्याय

हिंदी के ब्लॉग और अन्य विमर्श

हिंदी के ब्लॉग और अन्य विमर्श

5.1 किन्नर विमर्श और ब्लॉग

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर 'ऋषभ उवाच' अपनी पोस्ट 'साहित्य : सृजन और समीक्षा' में लिखते हैं,- "तृतीयलिंगी विमर्श को प्रायः 'किन्नर विमर्श' के रूप में संबोधित किया जाता है। स्मरणीय है कि 'किन्नर' शब्द से यहाँ ऐसे हाशियाकृत समुदाय का बोध होता है जो स्त्री और पुरुष से इतर अथवा तृतीय जेंडर के अंतर्गत परिगणित है। 'किन्नर' शब्द का इस पारिभाषिक अर्थ में प्रयोग नया और आधुनिक है। इसे संस्कृत आदि स्रोत के साथ जोड़कर प्राचीन अर्थ में ग्रहण नहीं किया जा सकता। संस्कृत में 'किन्नर' शब्द का प्रयोग यक्ष, गंधर्व, राक्षस और अप्सरा आदि स्वर्ग वर्ग की योनियों अथवा जातियों के लिए किया जाता था। हिंदी साहित्य में भी यह इसी रूप में गृहीत रहा है। इसके अलावा किन्नौर के निवासियों को भी किन्नर कहे जाने की परंपरा रही है। परंतु जब 'थर्ड जेंडर' के लिए हिंदी में किसी तत्सम/ संस्कृतनिष्ठ शब्द की आवश्यकता पड़ी तो इसे 'हिजड़ा' शब्द के पर्याय के रूप में ग्रहण कर लिया गया क्योंकि हिंदी भाषासमाज में वह एक टैबू/ वर्जित शब्द है। 'किन्नर विमर्श' इस प्रकार उस समुदाय की अपनी अस्मिता को रेखांकित करने के लिए प्रयत्नशील विमर्श है जिसे जेंडर संबंधी किसी विकृति के कारण 'हिजड़ा' कहे जाने का अभिशाप भोगना पड़ता है।"[239]

आज वैश्विक पटल पर मानव अधिकारों की चर्चा ने आंदोलन का रूप ग्रहण कर लिया है, हाशिए के समाज को मुख्यधारा के समाज में लाने की कोशिशें हो रही हैं दलित स्त्री और आदिवासी समाज के लिए जो प्रयास हुए हैं उनका परिणाम आज दिखाई पड़ रहा है, नाम लेने मात्र से ही लज्जित और महसूस करने वाले समाज में आज किन्नर या थर्ड जेंडर पर चर्चा-परिचर्चा, विचार-विमर्श हो रहा है।

---

[239] http://rishabhuvach.blogspot.com/2018/12/blog-post.html,05/07/2020,19:28

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर डॉ. सियाराम लिखते हैं,- "वैश्वीकरण की सहज प्रतिक्रिया स्वरूप अस्तित्व में आये अस्मितामूलक विमर्शों में किन्नर-विमर्श सर्वाधिक नवीन है किन्तु यह विमर्श किन्नर समाज की स्वीकार्यता व अधिकारां के प्रति गम्भीर चिन्तन करने पर बल देता है । कारण कि, किन्नर भी हमारे समान अपनी माँ की कोख से जन्म लेते हैं किन्तु लिंगाधारित-पुरुषवादी सामाजिक व्यवस्था में इन्हें अधिकार विहीन कर पशुवत् जीवन जीने को मजबूर किया गया है । एक ही माँ-बाप से जन्में बच्चों के साथ यदि किसी कारणवश किन्नर बच्चा पैदा हो जाता है तो सब कुछ समान व एक होते हुए भी उसके प्रति प्रेम और सहानुभूति के स्थान पर, उपेक्षा, तिरस्कार और घृणा का व्यवहार किया जाता है ।"[240]

ब्लॉगर डॉ. पुनीत बिसारिया भी अपने ब्लॉग 'किन्नर विमर्श : समाज के परित्यक्त वर्ग की व्यथा कथा' में लिखते हैं,- " किन्नर या हिजड़ों से अभिप्राय उन लोगों से है, जिनके जननांग पूरी तरह विकसित न हो पाए हों अथवा पुरुष होकर भी स्त्रैण स्वभाव के लोग, जिन्हें पुरुषों की जगह स्त्रियों के बीच रहने में सहजता महसूस होती है । वैसे हिजड़ों को चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है,- बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा । वास्तविक हिजड़े तो बुचरा ही होते हैं क्योंकि यह जन्मजात 'न पुरुष न स्त्री' होते हैं, नीलिमा किसी कारणवश स्वयं को हिजड़ा बनने के लिए समर्पित कर देते हैं, 'मनसा' तन के स्थान पर मानसिक तौर पर स्वयं को विपरीत लिंग अथवा अक्सर स्त्रीलिंग के अधिक निकट महसूस करते हैं और हंसा शारीरिक कमी यथा नपुंसकता आदि यौन न्यूनताओं के कारण बने हिजड़े होते हैं । नकली हिजड़ों को अबुआ कहा जाता है । जो वास्तव में पुरुष होते हैं किंतु धन के लोभ में हिजड़े का स्वांग रच लेते हैं । जबरन बनाए गए हिजड़े छिबरा कहलाते हैं, परिवार से रंजिश के कारण इनका लिंगोच्छेदन कर इन्हें हिजड़ा बनाया जाता है ।"[241] किन्नरों के मानवाधिकारों के लिए वैश्विक

---

[240] http://vangmaypatrika.blogspot.com/2019/01/blog-post.html,05/07/2020,19:25

[241] http://drpuneetbisaria । blogspot । com/2016/05/blog-post_31 । html ,21/05/2020,07:35 am

धरातल पर प्रयास किए जा रहे हैं। किन्नरों के लिए समाज में तीसरे लिंग के रूप में उनके अधिकारों की मान्यता दी गई है सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र और सभी राज्य सरकारों को ट्रांस पीपुल लोगों को कानूनी पहचान देने का आदेश दिया है इनकी संख्या की बात करें तो,- "अभी तक देशभर में इनकी निश्चित संख्या कहीं दर्ज नहीं है। हमेशा अनुमान लगाया जाता है। अभी भी कहा जाता रहा है कि अनुमानत: इनकी संख्या देश भर में एक करोड़ है।"[242]

इस संदर्भ में ब्लॉगर डॉ. पुनीत बिसारिया अपने ब्लॉग 'किन्नर विमर्श: समाज के परित्यक्त वर्ग की व्यथा कथा' में लिखते हैं,- "भारत की सन 2011 की जनगणना के अनुसार पूरे भारत में लगभग 4.9 लाख किन्नर हैं जिनमें से एक लाख 37 हजार उत्तर प्रदेश में हैं। इसी जनगणना के मुताबिक सामान्य जनसंख्या में शिक्षित लोगों की संख्या 74 फ़ीसदी है जबकि यही संख्या किन्नरों में महज 46 फ़ीसदी है। इनमें आधे से अधिक नकली स्वांग करने वाले हिजड़े हैं। आश्चर्य की बात यह है कि शेष दो लाख असली हिजड़ों में से भी सिर्फ 400 जन्मजात हिजड़े या बुचरा हैं, शेष हिजड़े स्त्रैण स्वभाव के कारण हिजड़ों में परिगणित किए जाने वाले मनसा या हंसा हिजड़े हैं, और इसमें भी बड़े आश्चर्य की बात यह कि इन दो लाख हिजड़ों में से लगभग सत्तर हजार हिजड़े ऐसे हैं, जिन्हें एक छोटे से ऑपरेशन के बाद लिंग परिवर्तन करने के पश्चात् पुरुष या स्त्री बनाया जा सकता है लेकिन दुःख की बात है कि इस ओर किसी का ध्यान नहीं है।"[243] सदियों पूर्व किन्नर समाज को इज्जत की नजर से देखा जाता था। इस संदर्भ में मुगल साम्राज्य की चर्चा करें तो मुगल साम्राज्य में किन्नर लोग रानियों के हरम में उनकी सुरक्षा किया करते थे परंतु एक ऐसा समय आया कि अपनी पेट की भूख मिटाने के लिए किन्नरों को सड़कों पर भीख मांगने को मजबूर होना पड़ा। इसका सबसे बड़ा कारण शिक्षा का अभाव है क्योंकि उनकी शिक्षा की तरफ किसी का ध्यान नहीं गया। जिन

---

[242]https://www। livehindustan। com/news//article1-story-122153। html, 21/05/2020,08:31am

[243] http://drpuneetbisaria। blogspot। com/2016/05/blog-post_31। html, 21/06/2020,08:31am

किन्नरों ने समाज में शिक्षा अर्जित करने का प्रयास किया तब उनका मजाक बनाया गया फलस्वरूप उन्हें बीच में ही पढ़ाई छोड़नी पड़ी। इसमें एक दो अपवाद जरूर मिलेंगे जो शिक्षा अर्जित करके अफसर भी बने, लेकिन किन्नरों की एक बड़ी आबादी आज भी अनपढ़ ही है। जिसका नतीजा यह हुआ, उनके पास एक ही रास्ता रह गया। वह नाच-गा कर जन्म और शादी ब्याह के मौकों पर नेक, बधाई मांगकर अपना जीवन-बसर करने लगे।

15 अप्रैल 2014 को सुप्रीम कोर्ट ने जब 'नालसा जजमेंट' पास किया जिसके अंतर्गत ट्रांसजेंडर समुदायों को पहली बार 'तीसरे जेंडर' के तौर पर अपनी एक अलग पहचान मिली। सरकार का यह फैसला ट्रांसजेंडर समुदायों को संविधान के मूल अधिकार प्रदान करता है। इस देश में लिंग समानता की दिशा में उठाया गया यह एक महत्वपूर्ण कदम माना जाता है। इस तरह 'नालसा जजमेंट' पास होने के बाद किन्नर समाज की तरफ लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ। इसके बावजूद भी समाज यह बात भली-भांति नहीं जानता कि ट्रांसजेंडर क्या है और हिजड़ा क्या है? ट्रांसजेंडर एक जटिल शब्दावली है जिसको बारीकी से समझना बहुत जरूरी है।

ट्रांसजेंडर, एक व्यक्ति जिस सेक्स में जन्म लेता है उसके विपरीत जब व्यवहार करता है तो वह ट्रांसजेंडर कहलाता है।

ट्रांस महिला, ट्रांस महिला पुरुष रूप में पैदा होती है, लेकिन उसका मस्तिष्क महिला का होता है और वह अपनी पहचान एक महिला के रूप में बनाना चाहती है। ऐसे व्यक्तित्व को हम 'महिला ट्रांसजेंडर' कहते हैं।

ट्रांस पुरुष, ट्रांस पुरुष महिला रूप में पैदा होते है, लेकिन पुरुष के रूप में पहचाना जाते हैं।

हिजड़ा और ट्रांसजेंडर में अंतर, हिजड़ा एक परंपरा है, जो जन्मोत्सव और शादी ब्याह के मौके पर नाच-गा कर नेक मांगते हैं और आशीर्वाद देते हैं, उन्हें हिजड़ा कहा जाता है। इनका

जीवन जीने का तरीका ट्रांसजेंडर से अलग होता है। यह लोग डेरे बनाकर रहते हैं और रोज सुबह अपने घर से निकल जाते हैं और दूसरों के घरों की खुशियों में शामिल होते हैं। इससे जो कमाई होती है उसी से अपना जीवन चलाते हैं। ट्रांसजेंडर को लेकर समाज में अनेक भ्रांतियाँ हैं, जिसमें सबसे बड़ी भ्रांति ट्रांसजेंडर को यौन विकलांग मानना है जबकि यह जरूरी नहीं है कि ट्रांसजेंडर के यौनांग अविकसित हो। मनोवैज्ञानिकों की मानें तो ट्रांसजेंडर होना यौन विकलांगता होना नहीं है। यह एक तरह का एहसास है, जो उनकी जिंदगी जीने के तरीके को उनके पैदाइशी लिंग से अलग बनाता है।

निष्कर्ष रूप में कहें तो- कोई भी व्यक्ति जब जन्म लेता है तब वह केवल एक बच्चा होता है। जिस तरह एक लड़की स्वयं को एक लड़की के रूप में देखना पसंद करती है, उसी तरह जीवन जीना चाहती है। ठीक उसी तरह एक बच्चा जब धीरे-धीरे बड़ा होने लगता है और वह अपने जन्म के लिंग के विपरीत व्यवहार करने लगता है तो वह ट्रांसजेंडर कहलाता है। हिजड़ा समुदाय में गुरु-चेले की परंपरा होती है। एक हिजड़ा किसी दूसरे हिजड़े को अपना गुरु बनाता है तभी उसे हिजड़ा समुदाय में पहचान मिलती है। गुरु अपने चेले को बच्चे की तरह प्यार करता है और हिजड़ा समुदाय में रहना सिखाता है जबकि ट्रांसजेंडर में ऐसी कोई बंदिश नहीं होती हैं।

5.2 वृद्ध विमर्श और हिंदी ब्लॉग

हिंदी साहित्य में दलित-विमर्श, स्त्री-विमर्श, आदिवासी-विमर्श, किन्नर-विमर्श के बाद वृद्ध-विमर्श की चर्चा भी खूब हो रही है। आजकल युवा पीढ़ी की चर्चा जिस तरह जोरों से चल रही है वैसे ही वृद्ध विमर्श की चर्चा करना भी महत्वपूर्ण सवाल बन जाता है। अक्सर वृद्धों या बूढ़ों को लेकर एक तस्वीर बनती है जो कुछ इस प्रकार होती है - जैसे सफेद बाल, झड़े हुए दाँत, शिथिल ऊर्जा और जर्जर शरीर लेकर जीवन-यापन करने वाला व्यक्ति।

वृद्धावस्था पर विचार करते हुए प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखक 'आनातोले' फ्रांस का यह कथन याद आता है जिसमें वे कहते हैं- 'काश! बुढ़ापे के बाद जवानी आती' 'आनातोले' का यह कथन बड़ा ही महत्वपूर्ण और सांकेतिक अर्थ लिए हुए हैं। जवानी वह अवस्था है जहाँ व्यक्ति जोश, उर्जा, शौर्य से भरा होता है और बुढ़ापे में जवानी वाली ऊर्जा शक्ति तो नहीं रहती लेकिन अनुभवों का भंडार संचित रहता है। इस अवस्था में जवानी के दिनों में लिए गए कई गलत निर्णय और कार्यों का एहसास होता है। तब व्यक्ति सोचता है कि यदि बुढ़ापे में जवानी जैसी ताकत और स्फूर्ति मिल जाए तो वह पहले से बेहतर कार्य कर सकता है- यही निष्कर्ष है 'आनातोले' फ्रांस के कथन का।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर -डॉ० मधु सन्धु अपनी पोस्ट– 'कहानी में वृद्ध: सांध्यबेला की त्रासदियां' में वापसी कहानी के हवाले से लिखते हैं,- ''उषा प्रियम्वदा की वापसी वृद्ध पुरुषों का दर्द प्रस्तुत करने वाली प्रथम सशक्त कहानी है। पैंतीस साल परिवार का पोषण करने वाले, स्वयं छोटे-छोटे स्टेशनों पर रहकर उनके लिए शहर में हर सुविधा जुटाने वाले गजाधर बाबू को रिटायरमेंट के बाद कमाने वाले पुत्र से लेकर पढ़ने वाले पुत्र तक, बेटी से लेकर बहू तक, यहाँ तक कि पत्नी भी परिवार का हिस्सा मानने से इन्कार कर देती है। उनके आने से हंसते-खेलते परिवार में शोक की लहर सी दौड़ जाती है। उनके लिए न घर में जगह है, न दिलों में। रोक-टोक तो बर्दाश्त से बाहर है। बड़े बेटे अमर का सिहांसन हिल जाता है। कहता है- बूढ़े आदमी हैं, चुपचाप पड़े रहें, हर चीज मे दखल क्यों देते हैं।''[244] अतः आज के इस दौर में वृद्ध जीवन की यही त्रासदी हमें चारों ओर देखने को मिलती है जबकि इस तस्वीर का दूसरा पक्ष भी है। इसको हम इतिहास के एक उदाहरण के माध्यम से समझते हैं।

इतिहास और युवा पीढ़ी इस बात की साक्षी है कि बूढ़े-बुजुर्गों के अनुभवों और परामर्शों से लाभ उठाने वाली युवा पीढ़ी ही सफल हो पाती है। इसके विपरीत आचरण करने

[244] https://www.rachanakar.org/2007/07/blog-post_10.html,05/07/2020,20:28

वाली पीढ़ी का अहित हो जाता है। इस संदर्भ में महाभारत की चर्चा करें तो एक तरफ भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, विदुर जैसे तपे-तपाए, अनुभव-सिद्ध ज्ञानी थे तो, दूसरी तरफ जवानी के जोश से भरे हुए बरसाती पानी से उफनती नदियों की तरह दुर्योधन, दु:शासन कर्ण आदि जैसे युवकों की जमात थी। वृद्धों-बुजुर्गों की मंडली ने युवा कौरव मंडली को बहुत समझाया कि पांडवों से युद्ध करने में अहित ही अहित है लेकिन दुर्योधन और उसके सहायको ने नहीं माना। परिणाम स्वरूप महाविनाश हुआ। न वृद्ध बचे, न नौजवान बचे, सिर्फ पाँच पांडव और बेशुमार विधवाओं का विलाप।

दूसरी तरफ चंद्रगुप्त की चर्चा करें तो- वृद्ध चाणक्य के साथ मिलकर युवा चंद्रगुप्त ने नंद के दुराचारी शासन का अंत कर दिया। यह एक वृद्ध के अनुभव और साहस की ही देन थी। इतना ही नहीं बीसवीं सदी में लाठी की टेक से चलने वाले एक महात्मा 'महात्मा गांधी' के नेतृत्व में संगठित होकर देश में स्वाधीनता की लड़ाई लड़ी गयी और सफलता भी मिली। इस प्रकार हम देखते हैं कि वृद्ध और युवा का समन्वय एक बेहतर दुनिया की जरुरत है। इसको दूसरे शब्दों में कहें तो वृद्धावस्था परंपरा है तो युवावस्था प्रगति है और हम परम्परा से सार्थक दिशा ग्रहण करके ही प्रगति की राह पर चल सकते हैं। अतः पुराने अनुभवों से बहुत कुछ सार्थक मूल्य ग्रहण करके ही सकारात्मक मूल्य गढ़े जा सकते हैं, जो भविष्य की ज्योति का निर्माण कर सकते हैं।

'वृद्धावस्था' शब्द 'वृद्ध + अवस्था' से मिलकर बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है बढ़ा हुआ, पका हुआ, परिपक्व। अवस्था का अर्थ –हालत , दशा। 'वृद्धावस्था' का अर्थ बुढ़ापा से है। यह अंग्रेजी के old age शब्द का पर्यायवाची है। अतः इस विमर्श का अर्थ है वृद्धावस्था की परिस्थितियों, घटनाओं आदि का चिंतन मनन करना और उसका समाधान निकालना।

आज के इस भागदौड़ भरे जीवन में 'वृद्ध विमर्श' की आवश्यकता बढ़ती जा रही है, क्योंकि आज हम लोग इतने व्यस्त हो गए हैं कि हमारे पास बुजुर्गों के लिए समय ही नहीं रहता है। इसका एक बड़ा कारण संयुक्त परिवार का विघटन है। इसी वजह से हम उनका ध्यान नहीं रख पाते हैं तो दूसरी तरफ उनके अनुभवों का लाभ भी नहीं उठा पाते हैं।

आज के चकाचौंध भरे जीवन की व्यस्तता के कारण हमारे पास पुरानी और नई पीढ़ी में सामंजस्य बैठाने का भी समय नहीं मिल पाता। इतना ही नहीं आजकल वृद्धों को बोझ मानकर वृद्धाश्रमों में छोड़ दिया जाता है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर सुशील कुमार शर्मा अपनी पोस्ट 'वृद्ध लोग : समाज की सामूहिक जिम्मेदारी' में लिखते है,- "कितनी विडंबना है कि पूरे परिवार पर बरगद की तरह छांव फैलाने वाला व्यक्ति वृद्धावस्था में अकेला, असहाय एवं बहिष्कृत जीवन जीता है। जीवनभर अपने मन, कर्म व वचन से रक्षा करने वाला, पौधों से पेड़ बनाने वाला व्यक्ति घर में एक कोने में उपेक्षित पड़ा रहता है या अस्पताल या वृद्धाश्रम में अपनी मौत की प्रतीक्षा करता है।"[245]

इसी कारण युवा वर्ग वृद्धों के गुणों और अनुभव से वंचित रह जाते हैं। परिणामस्वरूप पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के बीच दिन-प्रतिदिन खाई बढ़ती जा रही हैं। इस खाई को पाटने का काम वृद्ध विमर्श ही कर सकता है। अतः वृद्ध विमर्श आज के युग की जरूरत है।

5.3 मीडिया विमर्श और हिंदी ब्लॉग

मीडिया का उद्देश्य सामाजिक घटनाओं को यथातथ्य आम आदमी तक पहुँचाना होता है। वह घटनाओं के तह तक जाकर उसे सीधी-साधी व सरल भाषा में बिना नमक मिर्च लगाए यथाशीघ्र पाठकों तक पहुँचाने का प्रयास करता है जबकि सामान्य लेखक उन घटनाओं को

---

[245] https://hindi.webdunia.com/my-blog/international-day-of-older-116100100040_1.html,05/07/2020,20:28

लेकर अपनी कल्पनाशक्ति का इस्तेमाल करके तथा उसे सजा-सवाँरकर एक नए रूप में प्रस्तुत करता है जिससे पाठक आनंदित होता है तथा कलात्मक ढंग से उस रस का आनंद लेता है। एक घटनाओं को यथाशक्ति ढंग से प्रस्तुत कर देता है और दूसरा घटनाओं में थोड़ा बहुत कल्पना का इस्तेमाल करके अपनी बुद्धि क्षमता के आधार पर उसको विस्तार देता है।

मीडिया भी एक तरह का साहित्य है जिसे जल्दी में लिखा जाने वाला साहित्य कह सकते हैं। इन दोनों में अंतर यह है कि यह साहित्य (मीडिया चिन्तन) सामाजिक घटनाओं से सीधे सम्बद्ध होता है और साहित्य चिंतन सीधा नहीं होता। मीडिया के पात्र वास्तविक होते हैं और साहित्य के पात्र काल्पनिक होते हैं। साहित्य और मीडिया में दूसरा बड़ा अंतर यह है कि साहित्यकार की मौलिक कल्पनाशील अभिव्यक्ति साहित्य है। भले ही बाहरी समाज से उसकी छाया देखने को मिल जाए, अर्थात साहित्यकार जो कल्पना करता है वह उसका बाहरी समाज से मेल हो सकता है यह अलग बात है परंतु मीडिया में जो घटनाएं वर्णित होती हैं, वह यथातथ्य होती हैं उसका काल्पनिकता से कोई संबंध नहीं होता है।

हिंदी भारत की सर्वाधिक बोली व समझी जाने वाली भाषा है जिसका प्रभाव विभिन्न सामाजिक तथा व्यावसायिक क्षेत्रों पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। मीडिया एक ऐसा क्षेत्र है जो सामाजिक भी और व्यासायिक भी है अतः इस पर हिंदी का प्रभाव पड़ना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। इस प्रभाव के कारण जहाँ एक ओर तो मीडिया के प्रभाव तथा व्यवसाय में विस्तार हुआ है तो दूसरी तरफ मीडिया के इस विस्तार ने हिंदी भाषा के विकास को नए आयाम प्रदान किये हैं तथा हिंदी के स्वरूप को निर्धारित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

मीडिया के इन माध्यमों, विशेषकर समाचार पत्रों, विज्ञापन, प्रेसवार्ता तथा आलेख आदि में प्रकाशित किए जाने वाले लेखों के द्वारा हिंदी भाषा को एक नयी गति मिली है।

अमर उजाला पत्र समूह ने अपने यहाँ से आर्थिक दैनिक कारोबार जैसा स्तरीय अखबार हिंदी में निकाला इस तरह हिंदी भाषा का विस्तार दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है।

आज यह स्थिति है कि अधिकतर समाचार पत्र हिंदी में सफलता अर्जित कर रहे हैं अर्थात समाचार पत्रों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है और इसके साथ-साथ हिंदी भाषा का भी विकास और विस्तार हो रहा है। इस तरह के विशिष्ट प्रकल्प हिंदी को न केवल तमाम व्यासायिक समूहों के मध्य लोकप्रिय बनाते हैं अपितु हिंदी भाषा में विभिन्न व्यवसायों के अनुरूप शब्दावली के विकास में भी योगदान दे रहें हैं।

मीडिया के द्वारा प्रयुक्त हिन्दी तथा साहित्यिक हिन्दी का प्रमुख अंतर यह है कि साहित्यिक हिंदी, साहित्य के विद्यार्थियों के लिए तथा विद्वत समाज के लिए तो बोधगम्य होती है किन्तु सामान्य भाषा- भाषी तथा गैर हिंदी भाषी व्यक्ति के लिए साहित्यिक हिंदी को समझना सरल नहीं होता है। किन्तु विज्ञापन की हिंदी सबके लिए सरल तथा बोधगम्य है। यही कारण है कि विज्ञापन की हिंदी ने जहाँ एक ओर हिंदी भाषा को गैर हिंदी भाषियों तथा सामान्य जन के मध्य लोकप्रिय बनाया है वहीं हिन्दी में नयी शब्दावली को बढाकर हिंदी को एक ऐसा रूप प्रदान किया है जो कि सर्वग्राह्य तथा सर्वसम्मत है।

मीडिया विमर्श के भाषिक पहलू के अनंतर दूसरा तथा महत्वपूर्ण पहलू विचार तथा समाज होता है। किसी भी समाज में मीडिया का यह दायित्त्व होता है कि वह वैचारिक स्वतंत्रता को सुनिश्चित करे तथा समाज की छोटी सी छोटी समस्याओं को समाज के समक्ष प्रस्तुत करके समस्या के समाधान का प्रयत्न करें किन्तु यह कार्य इतना सरल नहीं है।

गौरतलब है कि मीडिया के आरंभिक दौर में अनेक बाधाएं एवं समस्याएं उत्पन्न हुई हैं। सभी देशों में वहाँ की तत्कालीन सरकारों ने मीडिया और समाचार पत्रों की स्वतंत्रता को नियंत्रित करने का प्रयास किया और लगभग समस्त देशों में वह वर्ग जिसका संबंध शासन तंत्र

से था और अपने स्वार्थ के कारण सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक ढांचे को अपने ढंग से चलाना चाहते थे उन लोगों ने समाचार पत्रों पर आक्रमण किए, क्योंकि समाचार पत्र दलित तथा शोषित वर्गों के हितों की रक्षा करना चाहता था, इसीलिए उस पर बंदिशे लगने लगीं लेकिन इन तमाम बंदिशों को पार करता हुआ समाचार पत्र आगे बढ़ता गया और अपने दायित्व का निर्वाह करता गया।

इस सन्दर्भ में प्रसिद्ध हिंदी कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा का कथन प्रासंगिक है कि पत्रकारिता एक रचनाशील विधा है इसके बगैर समाज को बदलना संभव नहीं है। अतः पत्रकारों को अपने दायित्व और कर्तव्यों का निर्वाह निष्ठापूर्वक करना चाहिए क्योंकि उन्हीं के पैरों के छालों से इतिहास लिखा जाएगा। यद्यपि इस कथन में उन्होंने पत्रकारिता शब्द का प्रयोग किया है जो मीडिया के एक पक्ष को दर्शाता है क्योंकि उनके समय में मीडिया जगत के अन्य विकल्प उतने विकसित नहीं हो पाए थे, उस युग में पत्र लेखन ही मीडिया का प्रतिनिधित्त्व करता था किन्तु वर्तमान में मीडिया के स्वरूप को देखते हुए जब हम उनके कथन का चिंतन करते है तो यह कथन आज के सम्पूर्ण मीडिया जगत पर बखूबी देखा जा सकता है।

हम देखते हैं कि जहाँ-जहाँ मीडिया ने अपने कर्तव्य का निर्वहन किया है वहाँ समाज की दशा और दिशा दोनों में परिवर्तन आया है। चाहे कोई 'वाइट कालर' व्यक्ति हो या 'अन्य' कोई अपराधी सभी को अपने अपराध को मीडिया के द्वारा उजागर होने का भय अवश्य बना रहता है।

तमाम बंदिशों तथा समस्याओं के बावजूद अपने पथ पर डिगे रहने का ही परिणाम है कि आज मीडिया का स्थान समाज में लोगों के 'अधिकार रक्षक' के रूप में स्थापित हुआ है। जब कोई भी व्यक्ति न्यायालय पुलिस तथा अन्य सरकारी तंत्रों के द्वारा न्याय से वंचित कर दिया जाता है तब वह अंतिम उपाय के रूप में मीडिया का सहारा अवश्य लेता है यहाँ तक की

बीते दशकों में हमनें देखा कि सरकार को भी जनता तक पहुँचने के लिए तथा उसकी समस्याओं का समाधान करने के लिए मीडिया का सहारा लेना पड़ा। उदाहरण के तौर पर भारत सरकार के पूर्व रेल मंत्री श्री सुरेश प्रभु तथा विदेश मंत्री माननीय सुषमा स्वराज जी ने ट्वीटर को माध्यम बनाकर लोगों की समस्याओं का समाधान करके मीडिया की उपयोगिता का एक सार्थक तथा सशक्त उदहारण प्रस्तुत कर एक आदर्श स्थापित किया।

इस तरह हम देखते है कि मानव समाज की विकास यात्रा में मीडिया का बड़ा योगदान रहा है। इसी भांति अनेक संकट मानव समाज के समक्ष हैं तथा विश्व आज ऐसे ऐतिहासिक युग से गुजर रहा है जो विनाशकारी है। भूमंडल के इस विशाल रंगमंच पर भारत को अपना दायित्व सफलता से निभाना है जो एक सशक्त तथा दायित्वपूर्ण भूमिका के बिना सम्भव नहीं है।

मीडिया का मुख्य दायित्व है कि देश में फैली तमाम समस्याओं के उन्मूलन के लिए अभियान चलाए तथा उनकी समस्याओं को दूर करने के लिए सरकार द्वारा निर्मित नीतियों तथा योजनाओं को जनता तक पहुँचायें और जनता की भावनाओं को प्रकाशित करके सरकार तक पहुँचाए ताकि सरकार जनता की भावनाओं के अनुरूप सरकारी तथा प्रशासनिक नीतियों का निर्धारण कर सके। इसके साथ ही उन योजनाओं के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं के लिए सरकार को जागरूक करें ताकि सरकार की योजनाएं सिर्फ कागजी दिखावा बनकर न रह जाएं।

जैसा कि विदित है आज़ादी के अनंतर सरकार ने जनता के कल्याण के लिए तमाम योजनाओं का निर्माण किया लेकिन सही क्रियान्वयन के अभाव में उन योजनाओं ने जनता तक पहुँचने से पूर्व ही दम तोड़ दिया। अतः मीडिया तथा सरकार दोनों का सार्थक गठजोड़ जनता के कल्याण के लिए परम आवश्यक है।

वर्तमान में हमने देखा कि जन-धन खाता योजना, आयुष्मान भारत योजना , सुकन्या समृद्धि योजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना जैसी तमाम योजनाएं मीडिया के सक्रिय सहयोग के द्वारा ही जनता तक पहुँच पायीं। हालाँकि मीडिया की इन तमास सफलताओं के बावजूद हमें यह ध्यान रखना चाहिए की चारों ओर प्रकाश करने वाले दीपक के तले अँधेरा अवश्य रह जाता है। ठीक इसी भांति मीडिया की सफलता के चकाचौंध के तले भी एक अंधकारमय पहलू है जो कि मीडिया के समालोचनात्मक चिन्तन के लिए विवश करता है। एक ओर तो हम देखते हैं कि जहाँ मीडिया ने हिंदी भाषा को सरल बनाया है उसका प्रचार-प्रसार किया है किन्तु दूसरी ओर आवश्यकता से अधिक सरलता ने तथा अन्य भाषाओं के शब्दों की सरलता ने हिंदी के मौलिक स्वरूप को क्षति भी पहुँचाई है।

आज़ादी के पूर्व स्वराज्य की आकांक्षा तथा अपनी भाषा के गौरवबोध के कारण जनता, लेखक, पत्रकार एक शुद्ध तथा परिष्कृत रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करते थे तथा इस प्रयास को अपना गौरव मानते थे जबकि आज़ादी के अनंतर स्थिति ऐसी नहीं रही। आज अंग्रेज़ी अखबारों की नक़ल तथा अपने व्यसाय को प्रमुखता देते हुए मीडिया जगत ने भाषा की प्रस्तुति जैसे महत्त्वपूर्ण विषय को उपेक्षित कर दिया है।

परिणाम स्वरूप भाषा भी अशुद्ध और नीरस होती जा रही है। समाचार पत्रों के सहकारी संपादक तो शीर्षक देना ही भूल गए हैं। पहले समाचार पत्रों में शीर्षक ऐसा होता था कि पूरी कथा नीचे तक समझ में आ जाती थी आगे उसमें क्या लिखा गया है यानी लिफाफा देखते ही लोग ख़त का मजमून भाप लेते थे। पर अब तो कहीं-कहीं लिफाफे पर ही सारा मजमून दिखा दिया जाता है। मीडिया में पहले ऐसा नहीं था पहले यह महान दायित्व एक बड़े मिशन का हिस्सा था जिसके बारे में अकबर इलाहाबादी ने कहा है,-

“खींचो न कमानों को न तलवार निकालो

जब तोप मुकाबिल हो तो अखबार निकालो"[246]

परंतु आज पुरानी और नई व्यवस्था में बहुत अंतर हो गया है आज का मीडिया पहले की भांति जिम्मेदार नहीं रहा है । इस सन्दर्भ में ब्लॉगर जगदीश्वर चतुर्वेदी अपनी पोस्ट 'मीडिया का नया सच' में लिखते हैं,- "हिन्दी का मीडिया बाजार के लिहाज से बड़ा है, रचनात्मकता और गुणवत्ता के लिहाज से अभी भी अविकसित है। मीडिया का मुनाफा बढ़ा है सामाजिक जिम्मेदारी घटी है । बड़ा मीडिया छोटी खबर, छोटे को बड़ा और बड़े को छोटा बना रहा है ।"[247] वर्तमान में मीडिया की जिम्मेदारी - पूर्ण व्यवहार में कमी आयी है आज ख़बरों के केंद्र में सामाजिक दायित्त्व का भाव न होकर धन तथा सत्ता की प्रधानता हो गयी है। धन तथा सत्ता के केंद्र में आ जाने से सामाजिक दायित्त्व के साथ-साथ ख़बरों का मौलिक स्वरूप भी प्रभावित हुआ है अब ख़बरों में रचनात्मकता तथा सर्जनात्मकता दिखाई नहीं देती है। रचनात्मकता, कलात्मकता एवं मौलिकता खबर की प्रस्तुतीकरण के महत्त्वपूर्ण आयाम है किन्तु आज मौलिकता केवल फर्जी खबर को खोजने में बची है तथा रचनात्मकता और कलात्मकता के माध्यम से खबरों का कृत्रिम श्रृंगार करके व्यक्तिगत स्वार्थों को पूर्ण किया जाता है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर जगदीश्वर चतुर्वेदी अपनी पोस्ट 'मीडिया का नया सच' में लिखते हैं,- "आज हम इलैक्ट्रोनिक मीडिया के युग में हैं । इलैक्ट्रोनिक मीडिया और बहुजातीयता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। प्रेस और इलैक्ट्रोनिक मीडिया के संदर्भ में अंतर है । दोनों सामाजिक तौर पर अव्यवस्था पैदा करते हैं । नए युग का नारा है 'मेरा जूता है जापानी ,ये पतलून इंग्लिस्तानी,सर पर लाल टोपी रूसी फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी ।' यानी

---

246 https://www.rekhta.org/couplets/khiincho-na-kamaanon-ko-na-talvaar-nikaalo-akbar-allahabadi-couplets?lang=hi,24/07/2020,17:41

247 http://jagadishwarchaturvedi.blogspot.com/search/label/%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%A1%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE%20%E0%A4%AC%E0%A4%BE%E0%A4%9C%E0%A4%BE%E0%A4%B0,12/08/2020,12:44

सर्जनात्मकता और सम्मिश्रण का युग है। यह बहुजातीय रचनात्मकता का युग है। इसका पहले वाली सर्जनात्मकता से अंतर है। यही नए मीडिया का मंत्र है।"[248]

आज का पत्रकार लोकतंत्र की उस परिभाषा को शायद भूल गया है जिसमें यह कहा गया है कि 'जनता का जनता द्वारा और जनता के लिए' की लोकतांत्रिक परिभाषा को तभी सार्थक बना पायेगा जब सचमुच जनता को यह अधिकार हो कि वह सरकार के प्रत्येक कार्य और कदम पर नजर रखे और उसके गुण दोषों का विश्लेषण करे, परन्तु हमने कभी ऐसा करने का प्रयास नहीं किया। यह बात सच है कि पत्रकार भी एक साधारण व्यक्ति है, उसकी भी अपनी कमजोरियाँ हैं अपनी क्षमताएं व सीमाएं हैं उसे भी घर चलाना है परिवार का पालन पोषण करना है आदि।

मीडिया की इस बिगड़ती हुई स्थिति का दूसरा कारण यह भी है कि हमें अपने अधिकार तो पता हैं लेकिन अपने दायित्व भूल जाने के कारण जनता की बदहाली हो रही है, तथा पत्रकारों की लाचारी भी इसमें अहम योगदान निभा रही है। पत्रकारों की लाचारी का एक बड़ा कारण हिंदी पाठकों का व्यवहार भी है।

वर्तमान समय में मीडिया पर नज़र डालें तो हिंदी न्यूज़ चैनलों और हिंदी समाचार पत्रों को पत्र का मूल्य कम रखने के लिए और अपनी आय प्राप्त करने के लिए विज्ञापनों पर निर्भर रहना पड़ता है क्योंकि पाठक न्यूनतम मूल्य में ही पत्र को लेना चाहते हैं और फ्री में ही न्यूज़ चैनेल का भी आनंद उठाना चाहते हैं। हिंदी पाठकों की इस प्रवृत्ति से मुक्त होकर माखनलाल चतुर्वेदी जी के शब्दों में कहें तो मुफ्त में पढ़ने की पद्धति हिंदी से अधिक किसी भी भाषा में नहीं है। रोटी, कपड़ा, शराब और

[248] http://jagadishwarchaturvedi.blogspot.com/search/label/%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%A1%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE%20%E0%A4%AC%E0%A4%BE%E0%A4%9C%E0%A4%BE%E0%A4%B0, 12/08/2020,12:49

शौक जैसी चीजों का मूल्य तो वह रखते हैं पर ज्ञान और विज्ञान जैसे प्रसाधन का मूल्य चुकाने को तैयार नहीं। हिंदी का यही सबसे बड़ा दुर्भाग्य है।

हिन्दी की ही भांति हिंदी मीडिया के सन्दर्भ में भी उनका यह कथन पूर्णतया प्रासंगिक हैं। इसलिए जहाँ एक ओर आज के वैज्ञानिक दौर की बात करें तो नई-नई खोजें हो रही हैं उनके बारे में जनता को जानकारी देने का तथा सरकार की नई नई योजनाओं की जानकारी आम जन तक पहुँचाने का महान दायित्व मीडिया पर है, साथ ही जनता का भी यह दायित्त्व बनता है कि वह मीडिया के प्रति प्रोत्साहित करने वाले व्यवहार के द्वारा मीडिया को मजबूत करने का कर्तव्य निभाएं। दोनों के परस्पर सहयोग से सभी वर्गों को खासकर दलित शोषित वर्ग का कल्याण होगा और हमारे भारत वर्ष को विश्व शक्ति बनने में देर नहीं लगेगी।

इस सन्दर्भ में गांधी जी ने कहा था कि 'प्रजातंत्र का अर्थ मैं यह समझता हूँ कि इसमें नीचे-से-नीचे और ऊँचे-से-ऊँचे आदमी को आगे बढ़ने का समान अवसर मिले। यह लक्ष्य बिना मीडिया तथा जनता के सहयोग के सम्भव नहीं है।'

षष्ठम अध्याय

हिंदी ब्लॉग : चुनौतियाँ एवं संभावनाएं

हिंदी ब्लॉग : चुनौतियाँ एवं संभावनाएं

6.1 मुख्यधारा की पत्रकारिता और ब्लॉग

6.2 ब्लॉग की क्षमता

6.3 हिंदी ब्लॉगिंग की भविष्य में संभावनाएं

6.4 ब्लॉग पत्रकारिता या वैकल्पिक मीडिया के रूप में एक चुनौती

6.5 हिंदी फॉण्ट की समस्या

6.6 ब्लॉग पर मौजूद सामग्री की विश्वसनीयता

6.7 इंटरनेट साक्षरता

6.8 भाषायी कौशल

6.9 हिंदी टाइपिंग

6.10 हिंदी ब्लॉगिंग की भाषा

6.0 हिंदी ब्लॉग : चुनौतियाँ एवं संभावनाए

मीडिया का एक महत्वपूर्ण मंच जिसे ब्लग कहा जाता है। ऑनलाइन डायरी के रूप में उभर कर सामने आया है। ब्लॉग ने आमजन से लेकर खासजन तक सभी को अपने भावों, विचारों, संवेदनाओं को समाज के सामने रखने का भरपूर अवसर दिया है।

यह एक ऐसा मंच है, जहाँ अपने विचारों को साझा करने के साथ-साथ त्वरित सहमति या असहमति भी प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि ब्लॉगिंग की दुनिया पूरी तरह स्वतंत्र और आत्मनिर्भर दुनिया है जिसको संचालित करने के लिए न प्रकाशक और संपादक, न रिपोर्टर की जरूरत है बल्कि जरूरत है, तो एक इंटरनेट और कंप्यूटर की। जहाँ हम बेबाकी से ब्लॉग पर अपने विचारों को साझा कर सकते हैं।

ब्लॉग में हम अपने विचारों को बिना किसी सेंसरशिप के कह सकते हैं और दूसरे के विचारों से अवगत होने के साथ-साथ अपने विचारों से मिली प्रतिक्रिया के माध्यम से हम बेहतर सीख भी प्राप्त कर सकते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि ब्लॉगिंग में आम आदमी को भी मौका मिलता है। वह भी लेख – आलेख आदि के माध्यम से वैश्विक स्तर पर अपनी पहुँच बना पाता है।

अतः इसमें कोई संदेह नहीं है कि अभिव्यक्ति की ऐसी आजादी, अन्यत्र दुर्लभ है चाहे वह प्रिंट मीडिया के अखबार और जर्नल्स हो या इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के टी.वी. रेडियो आदि। हिंदी ब्लॉगिंग के विषयों की पड़ताल करें तो इसमें गंभीर साहित्य, कविता, कहानी, उपन्यास, दोहा ,गजल, नवगीत, लोकगीत, आत्मकथा तथा पुस्तक समीक्षा आदि ब्लॉग पर मौजूद हैं।

ब्लॉग पर पोस्ट की जा रही विभिन्न प्रकार के विषयों को लेकर कोई वाद-विवाद नहीं है क्योंकि एक ब्लॉगर अपनी रचना को कहीं भी, कभी भी, किसी भी समय, अपने शब्दों में पिरो सकता है। वह अपने मन मुताबिक रूप दे सकता है, ब्लॉग में इस बात की पूर्ण आजादी है।

जब हम अखबार पढ़ते हैं या न्यूज़ चैनल देखते हैं तो उसमें दी गई जानकारी के आधार पर कोई जिज्ञासा या और गहन जानकारी प्राप्त करनी हो तो वहाँ इसका विकल्प ना के बराबर होता है जैसे -भारत चीन सीमा विवाद के बारे में समाचार पत्रों या न्यूज़ चैनलों ने जो जानकारी हमें दी हम उसे ही जान पाते हैं अगर उससे ज्यादा जानने की इच्छा है तो यह जानकारी हमें ब्लॉग जैसे विस्तृत तथा प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध कराने वाले सोशल मीडिया समूहों पर आसानी से मिल सकती है जिसे पढ़कर हम गहन जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

ब्लॉग में किसी तरह की प्रायोजित विचारधारा नहीं मिलती बल्कि सभी विचारों को बराबर अवसर मिलता है ,ऐसे में एक स्वस्थ आलोचना को पूर्ण अवसर मिलता है। जहाँ पाठक विभिन्न पहलुओं पर संपूर्णता में विचार कर सकता है।

एक स्वस्थ आलोचना ही स्वस्थ समाज का निर्माण करती है। इसका अभाव पाठक के जिज्ञासु मन की हत्या कर देता है। इस संदर्भ में ब्लॉगर जय कुमार झा अपने ब्लॉग के लेख 'समाज निर्माण' में ब्लागिंग और उसकी रचनात्मकता का योगदान में लिखते हैं,- "इस देश में मीडिया के नाम पर सिर्फ प्रायोजित समाचार ही रह गए हैं, किसी भी घटना का मीडिया द्वारा निरंतर विश्लेषण कर असल गुनाहगारों को सजा दिलवाने वाली पत्रकारिता का अंत हो चुका है और जन-जन की आवाज वाला मीडिया भ्रष्ट -

मंत्रियों और उनके धन पशु उद्योगपतियों की दुकान बन कर रह गई है, जिससे देश में शर्मनाक स्तर के भ्रष्टाचार की वजह से भयंकर अराजकता और कुव्यवस्था का आलम है तथा व्यवस्था अब सामाजिक सरोकारों से व आम लोगों की समस्याओं को दूर करने के दायित्व से दूर हो गई है।”[249]

ब्लॉग में ऐसे प्रतिष्ठित लेखक और ब्लॉगर हैं, जिन्हें बेहतर लेखन क्षमता के बावजूद भी राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक आदि कारणों से मुख्यधारा की पत्रकारिता में जगह नहीं मिल पाती है ऐसे लोगों को अपने भावों, विचारों को व्यक्त करने के लिए ब्लॉग एक मंच मुहैया कराता है। आजकल तो मुख्यधारा की पत्रकारिता भी ब्लॉग में लिखे गए लेखों-आलेखों को अपने अखबार की सुर्खियों में जगह देने लगी है। अपने समाचार की पुष्टि के लिए कभी-कभी ब्लॉग पर पोस्ट की गई ख़बर भी उसके लिए कारगर साबित होती हैं।

आजकल ब्लॉग अपने दायरे को निरंतर बढ़ाता जा रहा है। आज हाशिए पर रह रहे दलित आदिवासी, नारी, अल्पसंख्यक व इसी तरह के अन्य वंचित तबके भी ब्लॉग पर अपनी अभिव्यक्ति बेबाकी से देने लगे हैं। वे अपनी समस्याओं के खिलाफ प्रतिरोध और अधिकार की बात कर रहे हैं, जो कि एक सुखद पहल है।

इतना ही नहीं ब्लॉग पर न केवल समाज विशेष की बल्कि पूरे देश की सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक व धार्मिक समस्याओं पर बहस हो रही है तो दूसरी तरफ

[249]अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात(संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, जयकुमार झा का लेख – ‘समाज-निर्माण में ब्लॉगिंग और उसकी रचनात्मकता का योगदान’, हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या-195

देश में बढ़ती बेरोजगारी, भुखमरी, गरीबी, बीमारी, शिक्षा, जीवन मूल्य, सांप्रदायिकता, हिंसा, भ्रष्टाचार , आनर किलिंग जैसे विभिन्न मुद्दों को ब्लॉग में जगह दी जा रही है।

6.1 मुख्यधारा की पत्रकारिता और ब्लॉग

ब्लॉगिंग करने वाले ब्लॉगर भी प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से भाई-भतीजावाद, सांप्रदायिकता युद्ध एवं राष्ट्रीय - अंतरराष्ट्रीय एकता, विश्व शांति तथा विभिन्न विभागों में होने वाले भ्रष्टाचार एवं घोटालों , जाति प्रथा , वर्तमान में होने वाले आर्थिक बदलाव, विस्थापन, लिंगभेद, घरेलू हिंसा, भ्रूण हत्या, स्त्री शिक्षा ,बलात्कार, विधवा स्त्री, थर्ड जेंडर जैसे विभिन्न मुद्दों पर लिख रहे हैं। मुख्यधारा की पत्रकारिता में भी उपरोक्त दिए गए विषयों पर गंभीरता से लिखा जा रहा है लेकिन ब्लॉग की तुलना में कम ही लिखा जा रहा है और लेखन की धार भी उतनी पैनी नहीं है जितनी ब्लॉग लेखन की है।

हिंदी ब्लॉग में मौजूद सामग्री बात करें तो यहाँ पर काव्यात्मक अभिव्यक्ति अधिक देखने को मिलती है। इसके अलावा गद्य की विधाओं पर भी लेखन कार्य बखूबी हो रहा है। हास्य एवं व्यंग्य को बहुत पहचान मिल रही है। स्वतंत्र मंच होने के कारण ब्लॉग में नित नए-नए आयाम देखने को मिल रहे हैं। साहित्य के विविध विषयों में निरंतर लेखन कार्य किया जा रहा है। हिंदी ब्लॉग पर कविता ,गजल, शायरी आदि की बात करें तो वह मुख्यधारा के साहित्य के समक्ष खुद को खड़ा करता है। इस संदर्भ में ब्लॉगर राकेश कुमार सिंह अपने लेख हिंदी चिकारी नई चिट्ठाकारी : एक नयी चाल में लिखते हैं,-

"अंतरजाल पर ज्यादातर चिट्ठे साहित्य-साधना में लीन नजर आते हैं । उनमें भी भांति-भांति की कविताएं करते ब्लॉगों संख्या खासतौर से ज्यादा है।"[250]

6.2 ब्लॉग की क्षमता

प्रिंट मीडिया की अपनी एक निश्चित सीमा होती है। उसी में ख़बर, फोटो, आलेख, आदि सामग्री को अधिक या कम करके छापना होता है, जबकि इसके विपरीत ब्लॉग लेखन में इन समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता है। उसमें हर विषय के अनुसार सामग्री को कितना भी बड़ा कर सकते हैं। साथ ही साथ चित्र, एनिमेशन जैसे विभिन्न प्रस्तुतीकरण के माध्यमों का प्रयोग कर विषय की सामग्री को रोचक तथा सुंदर ढंग से प्रस्तुत कर सकते हैं।

इसकी क्षमता की चर्चा के सन्दर्भ में ब्लॉगर सनी साहू लिखते हैं,- "वास्तव में अगर देखा जाये तो हिंदी ब्लॉग शुरू करने का यही सही समय है क्योंकि पहले इंटरनेट पर हिंदी कंटेंट बहुत ही कम मात्रा में उपलब्ध था पर अब एक तरफ हिंदी यूजर की संख्या भी बढ़ रही है और इंटरनेट पर हिंदी ब्लॉग की संख्या भी। अब गूगल एडसेंस भी हिंदी भाषा को सपोर्ट करता है इसलिए आज के समय में हिंदी ब्लॉग शुरू करना एक अच्छा विकल्प है।"[251]

---

[250]डॉ. अनिता मन्ना/ डॉ.मनीष मिश्रा,(संपा.) वेब मीडिया और अभिव्यक्ति के खतरे, राकेश कुमार सिंह का लेख – हिंदी चिट्ठाकारी : एक और नई चाल ? , हिंदी-युग्म, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2011, पृष्ठ संख्या–267

[251] https://hi.quora.com/2020-%E0%A4%AE%E0%A5%87%E0%A4%82-, 19/07/2020,11:20

6.3 हिंदी ब्लॉगिंग की भविष्य में संभावनाएँ

ब्लॉग तकनीकी दुनिया का वह क्षेत्र है जहाँ तमाम सम्भावनाएँ और चुनौतियाँ व्याप्त है। हम चुनौतियों को अंगीकार करके जितना कार्य करेंगे उतना ही ब्लॉग रूपी कामधेनु का दोहन कर पाएंगे। वास्तव में ब्लॉग की चुनौतियों को समस्या के रूप में देखना उचित नहीं है अपितु इन्हें तकनीकी की दुनिया के मील के पत्थरों की भांति स्वीकार कर आगे बढ़ने की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। इन मील के पत्थर रूपी चुनौतियों को हम निम्नलिखित रुप से संभावनाओं के रूप में विश्लेषित तथा परिवर्तित कर सकते हैं।

ब्लॉग की प्रथम चुनौती है विषय की प्रामाणिकता। ब्लॉग सभी को अभिव्यक्ति की आजादी प्रदान करता है, लेकिन यह आजादी तभी सार्थक है जब इसका प्रामाणिकता तथा जिम्मेदारी के साथ प्रयोग किया जाए।

'जिम्मेदारी के साथ प्रयोग' ब्लाग लेखन तथा सोशल मीडिया का भविष्य तय करने वाला महत्त्वपूर्ण बिंदु है। लेखों की विषयवस्तु को जिम्मेदारी तथा जानकारी के साथ प्रस्तुत करने से ब्लाग की विश्वनीयता विकसित होगी जो इसके अधिकाधिक तथा अधिकारिक प्रयोग के लिए प्रोत्साहित करेगा। इसके विपरीत यदि लेखक जिम्मेदारी पूर्णता से नहीं लिखेंगे तो ब्लॉग की विश्वनीयता घटेगी। बीते कुछ समय में ऐसे ही गैर जिम्मेदार लेखकों की संख्या में वृद्धि हुई जिन्होंने व्यक्तिगत स्वार्थों के कारण सोशल मीडिया का दुरपयोग किया। इस तरह के लोगों ने अनुचित, अप्रमाणिक तथा विद्वेष फैलाने वाली सामगी का प्रचार किया जिसके कारण सरकार को सोशल मीडिया पर प्रतिबन्ध जैसे अनुचित नियमों का प्रावधान करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

इस सन्दर्भ में अनुच्छेद 66A का उल्लेख प्रासंगिक है। धारा 66A के अंतर्गत,- "कोई शख्स जो कंम्प्यूटर या फिर कम्युनिकेशन डिवाइस के जरिए सन्देश भेजता है जैसे- 1) कोई भी ऐसी सूचना जो आपत्तिजनक हो या फिर जिसका मकसद चरित्र हनन का हो। 2) कोई भी सूचना जो झूठी है, पर इलेक्टॉनिक डिवाइसेज के जरिए उस सूचना का इस्तेमाल किसी शख्स को परेशान करने, असुविधा पहुँचाने, खतरा पैदा करने, अपमान करने व चोट पहुँचाने के लिए किया जाए। 3) कोई भी इलेक्ट्रॉनिक मेल या इलेक्ट्रॉनिक मैसेज, जिसके जरिए किसी को व्यर्थ परेशान करने या उसके लिए समस्याएं बढ़ाने के लिए किया जाए। तो ऐसा करने वाले शख्स को जेल भेजा जाएगा। दोषी को दो-तीन साल की सजा हो सकती है साथ में जुर्माना भी लगाया जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति ऐसा करते हुए पाया जाता है तो पुलिस उसे 66A के तहत गिरफ्तार कर उसे कोर्ट में पेश कर सकती है. इसके साथ ही उस पर संबंधित मामले में उपयुक्त अन्य धाराएं जोड़ कर भी मुकदमा चला सकती है।"[252]

इस कानून का प्रयोग कई बार हुआ है। खासतौर पर इंटरनेट पर आलोचनात्मक व विपरीत राजनीतिक विचारधारा के पोस्ट के पोस्ट करने के सन्दर्भ में कइयों को गिरफ्तार किया गया है,- "हाल ही में उत्तर प्रदेश में 11वीं क्लास के एक छात्र को इसलिए गिरफ्तार कर लिया गया क्योंकि उसने सोशल मीडिया पर एक पोस्ट में सांप्रदायिक वारदातों को आजम खान से जोड़कर बताया था। आपको बता दें कि आईटी एक्ट को 2000 में पास किया गया था। पर उस वक्त विवादास्पद धारा 66(A) को शामिल नहीं किया गया था। 2008 में इस एक्ट में संशोधन करके धारा 66(A) को जोड़ा गया जो फरवरी 2009 में

[252] https://aajtak.intoday.in/story/what-does-section-66a-of-it-act-say-1-804822.html, 19/07/2020,11:20

लागू हो गया। यह धारा इलेक्टॉनिक डिवाइसेज पर आपत्तिजनक कंटेट पोस्ट करने के संबंध में है। इसके तहत दोषियों को तीन साल की जेल या 5 लाख रुपये का जुर्माना या फिर दोनों का प्रावधान है।"[253]

इस धारा के सन्दर्भ में डिजी केबल के मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ के प्रमुख और पुरस्कृत ब्लॉगर प्रकाश हिन्दुस्तानी लिखतें हैं,- "आईटी एक्ट की धारा 66A का रद्द होना आजादी की गरिमा को बढ़ाने वाला कदम है। इस धारा को रद्द करने के सुप्रीम कोर्ट फैसले से अभिव्यक्ति की आजादी को बनाए रखने में मदद मिलेगी, इसमें कोई दो मत नहीं है; लेकिन कई लोग समझते हैं कि इससे उन्हें असीमित अधिकार मिल जाएंगे, ऐसा नहीं हैं। सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट कर दिया कि वह अभिव्यक्ति की आज़ादी के पक्ष में है; स्वच्छंदता के पक्ष नहीं।"[254]

प्रभासाक्षी डाट कॉम के समूह संपादक बालेन्दु शर्मा दाधीच का इस संबंध में मानना है कि,- "आईटी एक्ट की धारा 66 ए पर सुप्रीम कोर्ट का यह मत उचित है कि यह धारा भारतीय संविधान में निहित अभिव्यक्ति के अधिकार का उल्लंघन करती है। इसमें आपराधिक कृत्यों को सही ढंग से परिभाषित नहीं किया गया है और 'नाराजगी पैदा करने वाले', 'असुविधाजनक' और 'बेहद अपमानजनक' कन्टेन्ट के प्रयोग पर गिरफ्तारी का प्रावधान है। अब ये तीनों शब्द ऐसे हैं कि इन्हें छोटी से छोटी घटना पर भी लागू किया जा सकता है। तब पुलिस और प्रशासन को किसी भी व्यक्ति को मनचाहे ढंग से गिरफ्तार करने का अधिकार मिल जाता है। शाहीन ढाडा और रेणु का मामला ऐसा ही है जहाँ रेणु

---

[253] https://aajtak.intoday.in/story/what-does-section-66a-of-it-act-say-1-804822.html, 19/07/2020,11:20

[254] https://hindi.webdunia.com/national-hindi-news/it-act-article-66-a-115032500099_1.html,19/07/2020,11:20

को मात्र शाहीन की एक टिप्पणी को लाइक करने के लिए गिरफ्तार कर लिया गया था। इस तरह के प्रावधान अन्यायपूर्ण तो हैं ही, वे इस माध्यम के प्रति हमारी व्यवस्था की नासमझी भी उजागर कर देते हैं।"[255]

आकाशवाणी दिल्ली में समाचार वाचक चंद्रिका जोशी मानती हैं,- "इसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही पहलू हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म बहुत ही व्यापक है अत: इस पर कहीं विराम भी होना चाहिए। निश्चित ही आजादी जरूरी है, लेकिन हमें उसकी सीमा भी निर्धारित करनी होगी। हमें संवेदनशील होना होगा। चूंकि अभिव्यक्ति के मौलिक आधार का हनन होता है, इसलिए सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला अच्छा है। हमारे देश में विभिन्न संप्रदायों के लोग रहते हैं, अत: यह भी ध्यान रखना होगा कि किसी की भावनाओं को ठेस न पहुंचे, क्योंकि हर व्यक्ति पर लगाम नहीं लगाई जा सकती। पुरानी पीढ़ी की बात करें तो वह काफी पढ़ती लिखती है, मगर युवा पीढ़ी इसके उलट सुनी सुनाई बातों पर ज्यादा प्रतिक्रिया देती है। हालांकि जागरूक लोगों के लिए यह बहुत ही अच्छा है, मगर हमें निगाह भी रखनी होगी कि किसी की भावनाएं आहत न हों। हमारा मकसद देश का विकास है। अत: छोटी छोटी बातों से विवाद उत्पन्न हो, यह ठीक नहीं होगा।"[256]

अतः उपर्युक्त बातों का ध्यान रखते हुए यदि ब्लॉग का लेखक वर्ग स्वयं इस जिम्मेदारी को अंगीकार करके यथासंभव सामग्री को प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत करने का कर्तव्य निभाएं तो ब्लॉग अन्य अभिव्यक्ति के माध्यमों की अपेक्षा ज्यादा प्रामाणिक

---

[255] https://hindi.webdunia.com/national-hindi-news/it-act-article-66-a-115032500099_1.html,19/07/2020,11:20

[256] https://hindi.webdunia.com/national-hindi-news/it-act-article-66-a-115032500099_1.html,19/07/2020,11:20

तकनीकी माध्यम के रूप में स्थापित हो सकता है। जिससे ब्लॉग न केवल अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनकर उभरेगा अपितु एक विश्वसनीय माध्यम का अधिकार भी प्राप्त कर सकेगा। इसकी विश्वसनीयता के बढ़ने से तीन प्रकार की संभावनाएं पुष्ट होंगी- शैक्षिक संभावना, आर्थिक संभावना, सामाजिक संभावना।

शैक्षिक सम्भावना का तात्पर्य है कि शैक्षिक कार्यों- विशेष रूप से शोध कार्यों के लिए ब्लॉग का प्रयोग हो। ब्लॉग में प्रस्तुत सामग्री की प्रामाणिकता होने से प्रामाणिक स्रोत के रूप में ब्लॉग को सहजता से उद्धृत किया जा सकता है जो कि सर्वमान्य भी होगा। आर्थिक संभावना से तात्पर्य विश्वसनीय सामग्री के स्वरूप प्राप्त कर लेने पर ब्लॉग के अध्ययन तथा प्रामाणिक प्रयोग की गतिविधियां तेजी से बढ़ेंगी जिससे मांग तथा पूर्ति के अर्थ शास्त्रीय नियम के अनुरूप ब्लॉग भी प्रतियोगिता के तमाम संभावित दौरों से गुजरेगा जिसमें विज्ञापन से लेकर मुद्रीकरण तक के तमाम व्यावसायिक कार्य मूर्त रूप ले लेंगे। इस प्रकार जो ब्लॉग केवल अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में सीमित है वह आर्थिक सशक्तिकरण का माध्यम भी बन जाएगा तमाम छात्र छात्राएं जो अध्ययन काल में आर्थिक समस्याओं से त्रस्त होते हैं उन्हें अभिव्यक्ति के साथ-साथ आर्थिक निर्भरता का मार्ग भी मिल जाएगा।

तीसरी और संभावना है- सामाजिक संभावना चूँकि मुख्यधारा की मीडिया में समाज के सभी वर्गों तथा सभी विषयों को स्थान नहीं मिल पाता है, जिसके तमाम राजनीतिक तथा सामाजिक कारण है जिन कारणों की चर्चा यहाँ अपेक्षित नहीं है। ब्लॉग उन सभी विषयों तथा वर्गों का समुचित स्थान प्राप्त करेगा। रही बात मुख्यधारा के मीडिया की तो, यह चंद पैसों के लिए धनिकों के आगे नतमस्तक होकर झूठ का प्रचार

करने वाले से ब्लॉग मीडिया कई गुना अच्छा है। क्योंकि यह खबर को व्यक्ति के विचार के रूप में प्रस्तुत करता है। कम से कम एक व्यक्ति तो उस सूचना के लिए जिम्मेदारी स्वीकार करता है।

अतः ब्लॉग उन सभी उपेक्षित विषयों तथा वर्गों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम होगा जो मुख्यधारा में किन्हीं भी कारणों से वंचित रह जाते हैं। इसके अतिरिक्त वे तमाम शैक्षिक संभावनाएं जो प्रामाणिकता के बने बनाए झूठे पैमानों में फिट नहीं बैठ पाती हैं, उन्हें भी अभिव्यक्ति का अवसर मिलेगा। उदाहरण के तौर पर रामायण का उदाहरण देकर जब भारतीय समाज विमान की बात करता था तब वे बातें सिर्फ और सिर्फ कल्पनाएं मानी जाती थीं किंतु जब वे ही तथाकथित कल्पनाएं पश्चिम के आलोक में साकार हो गई तो कल्पनाएं प्रामाणिकता के ढांचे में ढल गई। इसी भांति ब्लॉग नए तथा उर्वर विचारों की उपजाऊ भूमि है। जिस पर भविष्य के तमाम शोधकर्ता, वैज्ञानिक तथा विचारक जन्म लेंगे।

हमारा समाज बौद्धिक तथा शैक्षिक रूप से प्रबुद्ध है। वह स्वयं ही उनके विचारों का प्रमाणीकरण कर लेगा। इसलिए ब्लॉग की अभिव्यक्त आजादी को तमाम बंधनों से मुक्त कर उन्मुक्त पंछी की भांति विचरण करने देना ही तमाम संभावनाओं को जन्म देना है। ब्लॉग की संभावनाओं का महत्वपूर्ण बिंदु है हिंदी भाषा का तकनीकी विकास होना। जब हिंदी को राजभाषा बनाने का प्रश्न आया तो हिंदी पर यह आरोप लगाया गया कि उसमें तकनीकी शब्दावली को अभिव्यक्त करने की क्षमता का अभाव है।

आज ब्लॉग के माध्यम से हम देख सकते हैं कि हिंदी न केवल साहित्यिक और सामाजिक अपितु तकनीकी विषयों को भी अभिव्यक्त करने में समर्थ है। ब्लॉगों में ऐसे

भी लोग हैं जो विज्ञान तथा पर्यावरण जैसे विषयों को भी प्रस्तुत करते हैं। इस तरह के विषयों से युक्त ब्लॉगों की जितनी अधिकता होगी तकनीकी रूप से हिंदी भाषा की दावेदारी और प्रबल होती जाएगी।

इन तकनीकी विषयों के अतिरिक्त तकनीकी का दूसरा पक्ष भाषा की अभिव्यक्ति का होता है। पहले जहाँ हिंदी भाषा के लेखन में रोमन लिपि का प्रयोग करना पड़ता था। वहीं आज हिंदी को देवनागरी में सरलता से लिखा जाने लगा है। लिपि के अनंतर फाँट की समस्या आई जिसके समाधान के लिए यूनिकोड की लेखन पद्धति भी आयी। इस प्रकार अगर हम देखें तो रोमन लिपि में लेखन से आरंभ करके यूनिकोड लेखन तक की यात्रा हिंदी लेखन के तकनीकी स्वरूप के विकास की गाथा है और जिसमें ब्लॉग एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है।

यद्यपि हम देखते हैं कि हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की अभिव्यक्ति करने में अभी तमाम चुनौतियाँ हैं किंतु यह चुनौतियाँ ही तमाम तकनीकी विकास को मार्ग प्रदान करेंगी और यह तभी संभव होगा जब ब्लॉग लेखन जैसा तकनीकी लेखन गंगा की अबाध गति से निरंतर गंगा की अविरल धारा के समान बहता रहेगा। ब्लॉग लेखन की अबाध गति न केवल भाषा के तकनीकी विकास अपितु सामान्य जन के तकनीकी विकास में भी सहायक होगी। ब्लॉग के उत्तम तथा प्रामाणिक लेखों से, अध्ययनशील सभी वर्गों में विभिन्न विषयों तथा तकनीकी प्रयोगों के प्रति जागरूकता होगी जिससे हम तकनीकी साक्षरता के साथ-साथ तकनीकी एवं इंटरनेट की शिक्षा का लक्ष्य भी प्राप्त कर सकते हैं।

6.4 ब्लॉग पत्रकारिता या वैकल्पिक मीडिया के रूप में एक चुनौती

ब्लॉग पत्रकारिता और मीडिया देखने में परस्पर विरोधी जान पड़ते हैं, लेकिन यदि हम सूक्ष्मता से देखें तो ब्लॉग पत्रकारिता , मीडिया का विकल्प हो या न हो किन्तु उसकी कमी को अवश्य पूरा करता है । मुख्यधारा का मीडिया बड़े-बड़े उद्योगपतियों, राजनीतिज्ञों के द्वारा संचालित होते हैं, जिनका उद्देश्य अपने स्वामियों को लाभ पहुँचाना तथा सस्ती लोकप्रियता के माध्यम से पैसा कमाना और टीआरपी बढ़ाना होता है । वहाँ सूचना का महत्त्व उसकी लोकप्रियता से होता है न की आवश्यकता से । जैसे सैफ अली खान के पुत्र 'तैमूर' की सूचनाओं का प्रसारण करना आवश्यक नहीं है लेकिन लोकप्रियता के लिए महत्वपूर्ण है । जिस कारण से समाज की जरूरी समस्याओं को मुख्यधारा में स्थान नहीं मिल पाता है ।

अतः ब्लॉग पत्रकारिता इस तरह की कमियों को पूरा करती है तथा प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार देती है कि वह अपने तथा अपने समाज से संबंधित महत्वपूर्ण मुद्दों को अभिव्यक्त कर सके । यद्यपि इस अभिव्यक्ति की स्वीकृति एक बहुत बड़ी चुनौती है क्योंकि व्यक्तिगत मुद्दे आवश्यक हैं या नहीं इसका निर्धारण आसान नहीं होता है ।

6.5 हिंदी फॉण्ट की समस्या

भाषा की अभिव्यक्ति में फॉण्ट का चयन किसी चुनौती से कम नहीं है । तकनीकी हिंदी के विकास के साथ-साथ वर्तमान में हिंदी लेखन के लिए तमाम फॉण्ट उपलब्ध है, जिसके कारण पाठकों के समक्ष समस्या उत्पन्न होती है कि वह किस फॉण्ट का चयन करें । यद्यपि अंग्रेजी भाषा के लेखन के लिए भी कई फॉण्ट उपलब्ध हैं लेकिन वहाँ फॉण्ट के

विभिन्न रूप, लेखन की आकृति को प्रभावित करते हैं ना की भाषा की अभिव्यक्ति को। जबकि हिंदी में फॉण्ट भाषा की आकृति के साथ-साथ भाषा की अभिव्यक्ति को भी प्रभावित करते हैं। जैसे हिंदी भाषा में प्रयुक्त होने वाले संयुक्ताक्षर का लेखन एक चुनौती है। इसमें हस्तलेखों में संयुक्ताक्षरों की आकृति भिन्न होती है और फॉन्ट लेखन में अलग आकृति होती है। जैसे हस्तलेखन में- शृंगार,विद्यालय को इस रूप में लिखते है, जबकि फॉण्ट लेखन में श्रृंगार, विद्यालय इस रूप में लिखे जाते हैं।

दूसरी समस्या कॉमन फॉण्ट की आती है जिसके समाधान के लिए यूनिकोड तकनीकी का प्रयोग किया जाता है किंतु यूनिकोड में टाइपिंग रोमन लिपि में करनी होती है, जिसके कारण से न केवल हिंदी भाषा के बल्कि अन्य भारतीय भाषाओं के लेखन में समस्याएं आती हैं।

यद्यपि यूनिकोड ने विभिन्न फॉण्ट तथा कंप्यूटर के अनुरूप पढ़ने में आने वाली समस्याओं का काफी हद तक समाधान किया है, जिसके कारण से लेखन में यूनिकोड एक लोकप्रिय माध्यम है, किंतु हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को भलीभाँति अभिव्यक्त करने में पूर्ण रूप से सफल नहीं कहा जा सकता है। इस सन्दर्भ में हम कुछ महत्वपूर्ण फॉण्ट पर विचार करें तो देवनागरी के फॉण्ट दो प्रकार के हैं। एक तो पुराने लिगेसी नॉन-यूनिकोड फॉण्ट दूसरे यूनिकोड फॉण्ट।

यूनिकोड फॉण्ट विण्डोज़ का डिफॉल्ट हिन्दी फॉण्ट मंगल होता है। इसके अलावा विण्डोज़ विस्टा/७ में अपराजिता, कोकिला तथा उत्साह नामक फॉण्ट सम्मिलित हैं। इसके अलावा विण्डोज़ के ऍरियल यूनिकोड ऍमऍस नामक फॉण्ट में हिन्दी सहित संसार

की सभी यूनिकोडित भाषा लिपियों के वर्ण-चिह्न शामिल हैं। कुछ प्रचलित हिन्दी फॉण्टों का विवरण निम्नलिखित है।

'मंगल' यह विण्डोज़ 2000 के जमाने से विण्डोज़ प्रचालन तन्त्र का डिफॉल्ट फॉण्ट है। यह सेंस सेरिफ है इसलिये स्क्रीन रीडिंग हेतु उत्तम है यानि स्क्रीन पर इसमें पाठ सुपठनीय होता है लेकिन प्रिंट लेने, ग्राफिक्स कार्य या पीडीऍफ़ बनाने के लिये उपयुक्त नहीं है क्योंकि इन कार्यों में इसका रूप बदसूरत दिखता है। Arial Unicode MS माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस के साथ इंस्टॉल होने के कारण लगभग हर विण्डोज़ कम्प्यूटर में मिल जाता है। कोई और फॉण्ट न होने पर उपर्युक्त प्रिंट/ग्राफिक्स सम्बन्धी कार्यों के लिये मंगल की जगह इसे प्रयोग कर सकते हैं।

विण्डोज़ 7, 8 तथा 10 में आपको अपराजिता (बैनर या लेख के मुख्य शीर्षक आदि के लिये उपयुक्त, सामान्य पाठ के लिये नहीं), कोकिला (दिखने में कुछ हद तक चाणक्य जैसा) तथा उत्साह (दिखने में Krutidev 010 जैसा) आदि फॉण्ट इनबिल्ट मिलेंगे। इनमें शीर्षक के लिये अपराजिता, सामान्य पाठ के लिये कोकिला तथा ज्यादा बारीक टैक्स्ट के लिये उत्साह उपयुक्त है।

'संस्कृत 2003' संस्कृत पाठ के लिये संस्कृत 2003 फॉण्ट श्रेष्ठ है। इसका प्रिंट बड़ा ही सुन्दर आता है लेकिन फॉण्ट साइज ज्यादा छोटा हो तो स्क्रीन पर पढ़ने में थोड़ी दिक्कत होती है क्योंकि अक्षर मोटे होते हैं। sanskritdocuments.org साइट संस्कृत टैक्स्ट प्रदर्शन हेतु इसका उपयोग करती है। संस्कृत की मोटे अक्षरों में छपाई के लिये यह एक बेहतरीन विकल्प है। पहले यह एकमात्र फॉण्ट था जिसमें सर्वाधिक देवनागरी

संयुक्ताक्षर एवं वर्णखण्ड (ग्लिफ्स) शामिल थे, हालाँकि इसमें अभी यूनिकोड में जुड़े नवीनतम वैदिक चिह्न शामिल नहीं किये गये हैं।

'सिद्धान्त' संस्कृत के लिये सिद्धान्त नामक फॉण्ट भी उल्लेखनीय है क्योंकि यह एकमात्र फॉण्ट है जिसमें यूनिकोड कूटबद्ध सर्वाधिक देवनागरी वर्ण (वैदिक स्वर चिह्नों समेत) सम्मिलित हैं। यदि आपको वैदिक टैक्स्ट में काम करना है तो यह सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प माना जाता है।

6.6 ब्लॉग पर मौजूद सामग्री की विश्वसनीयता

ब्लॉग तथा अन्य सोशल मीडिया, समाचार पत्र तथा अन्य प्रिंट मीडिया आदि अभिव्यक्ति के माध्यमों से प्राप्त होने वाले सूचनाओं में विश्वसनीयता एक महत्वपूर्ण चुनौती है। इन सबके माध्यम से एक ओर जहाँ अभिव्यक्ति सरल हुई है, वही अभिव्यक्ति भ्रांत तथा आपराधिक भी हुई है। विभिन्न आपराधिक तत्वों के द्वारा झूठी, गलत तथा भड़काऊ सामग्री को प्रस्तुत कर सामाजिक संघटन तथा सामाजिक समरसता को भंग करने के तमाम प्रयास भी देखने में आते हैं।

यद्यपि सरकार के द्वारा सेंसरशिप तथा साइबर कानून के द्वारा इस समस्या के समाधान का प्रयास किया गया है तथापि सोशल मीडिया और ब्लॉग जो प्रिंट मीडिया की अपेक्षा पाठकों के पास तीव्र गति से पहुँच ते हैं इनका कभी-कभी दुष्परिणाम यह होता है कि इनके कारण से गलत सूचनाएं तथा अफवाहें कार्यवाही होने के पूर्व ही हजारों की संख्या में लोगों के पास पहुँच जाती हैं, जिसका नियंत्रण कर पाना बहुत मुश्किल हो जाता है।

चूँकि 'ब्लॉग लेखन' अभिव्यक्ति को स्वतंत्रता प्रदान करता है जिसके कारण से 'व्यक्ति मन' के किसी भी तरह के विचारों को व्यक्त करने में स्वतंत्र है। यदि वहीं संपादक समाचार पत्र में लिखना चाहता है तो वहाँ एक संपादक मंडल है, परिशीलन समिति है, जिसके परीक्षण के बाद ही वह सामग्री को प्रकाशित कर पाएगा। किंतु ब्लॉग में व्यक्ति अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए पूर्ण रूप से स्वतंत्र है अतः अश्लील, अशोभनीय, समाज के लिए हानिकारक सामग्री के प्रकाशन पर नियंत्रण कर पाना सरल नहीं हो पाता है।

6.7 इंटरनेट साक्षरता

वर्तमान में दूरसंचार की क्रांति के कारण आज भारत की अधिकांश आबादी के पास कंप्यूटर आदि यंत्रों के प्रयोग संबंधी शिक्षा का विकास हुआ है तथा इन यंत्रों की उपलब्धता भी पहले की अपेक्षा अधिक हो गई है। जिन लोगों के पास कंप्यूटर खरीदने का सामर्थ्य नहीं है वह भी स्मार्टफोन के माध्यम से सोशल मीडिया तथा ब्लॉग का प्रयोग कर लेते हैं। यद्यपि पाश्चात्य देशों के मुकाबले में यह बहुत कम है किंतु बीते दशकों की अपेक्षा यह प्रगति उल्लेखनीय है। लेकिन इंटरनेट की साक्षरता और इंटरनेट की शिक्षा दोनों में अंतर है। जैसा कि हमें ज्ञात है इंटरनेट के माध्यम से तमाम तरह की सामग्री उपलब्ध हो जाती है। उस सामग्री में सही सामग्री का चयन एक बड़ी चुनौती है। गूगल करके कुछ भी अन्वेषण करना एक आम बात है, लेकिन बुद्धिमत्ता से अपने लिए उपयोगी तथा आवश्यक सामग्री का चयन करना इतना सरल नहीं है।

यद्यपि भारत में इंटरनेट की साक्षरता अधिक दिखाई देती है किंतु इस साक्षरता का अधिक भाग फेसबुक, व्हाट्सएप, इंस्टाग्राम,ट्विटर आदि माध्यमों में दिखाई पड़ता है।

जबकि विदेशों में यह साक्षरता शैक्षिक और तकनीकी प्रयोगों में अधिक है। यही कारण है कि हमारे देश में इन साधनों के माध्यम से उचित अभिव्यक्ति के स्थान पर अनुचित अभिव्यक्ति को प्रश्रय मिल रहा है। जैसे 'ब्लू व्हेल गेम' का जिक्र करें तो इस गेम में बच्चों को एक टॉस्क दिया जाता है जिसे उन्हें पूरा करना होता है किसी कारण वश यदि बच्चे टास्क पूरा नहीं कर पाते है तो कुंठा , हताशा , निराशा के शिकार हो जाते हैं इतना ही नहीं वे आत्महत्या भी कर लेते हैं। ऐसे कई उदाहारण हमें देखने को मिल रहें हैं। अतः न केवल इंटरनेट की साक्षरता अपितु समुचित शिक्षा ब्लॉग लेखन की अभिव्यक्ति में एक महत्वपूर्ण चुनौती है।

6.8 भाषाई कौशल

ब्लॉग का पाठक स्वतंत्र है। इसको पढ़ने वालों में उच्च शिक्षा प्राप्त पाठक भी हैं, सामान्य पाठक भी हैं और अशिक्षित पाठक भी हैं। अतः उनके अनुरूप विषय तथा भाषा दोनों की अभिव्यक्ति ब्लॉगर के लिए अपने आप में एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। यदि ब्लॉग की भाषा पाठक के मनोविज्ञान तथा मानसिक स्तर के अनुरूप नहीं होगी तो ब्लॉग लेखन की अभिव्यक्ति भी साहित्य लेखन की भांति सीमित रह जाएगी।

इस संदर्भ में ब्लॉगर उमेश चतुर्वेदी अपनी पोस्ट 'हिंदी-ब्लॉगिंग की चुनौतियाँ' में लिखते हैं कि,- "हिंदी में ज्यादातर ब्लॉगर अपनी वैचारिक भूख और कसक को अभिव्यक्त करने आए तो हैं, लेकिन ज्यादातर का भाषाई संस्कार बेहद कमजोर है। इसने ब्लॉगिंग के स्वाद को बेहद कड़वा बनाया है। ब्लॉगर यह क्यों भूल जाते हैं कि केवल तथ्यों का खुलासा ही ब्लॉगिंग की सफलता के लिए जरूरी नहीं है, बल्कि भाषाई

चमत्कार भी उतना ही आवश्यक है। भाषाई चमत्कार भी कई बार रचनाधर्मिता को पढ़ने के लिए मजबूर करते हैं।"[257]

अतः समस्त पाठक वर्ग तक पहुँचने के अपने चुनौतीपूर्ण कार्य को ब्लॉग तभी पूरा कर पाएगा जब वह सबका ख्याल रखेगा। इसलिए ब्लॉग की भाषा ऐसी होनी चाहिए जिसको झाड़ू चलाने वाले से लेकर पेन चलाने वाले तक, सभी को समझ में आ जाये तभी ब्लॉग जन-जन तक पहुँच बना पाएगा।

6.9 हिंदी टाइपिंग

ब्लॉगिंग के आरंभिक दौर में ब्लॉगों में 'हिंदी' रोमन लिपि के माध्यम से लिखी जाती थी जो कि उपलब्ध तकनीक के हिसाब से सरल थी किंतु ब्लॉग लेखन में हिंदी की लोकप्रियता के कारण धीरे-धीरे रोमन लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी के स्थान पर देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी के प्रति लोगों में चेतना जागृत हुई। उस चेतना ने लोगों में हिंदी को देवनागरी लिपि में लिखने का आग्रह किया, जिसके परिणाम स्वरूप चाणक्य, कोकिला, मंगल, कृतिदेव जैसे विविध फॉण्टों का विकास हुआ। जिनके माध्यम से न केवल सामग्री के प्रस्तुतीकरण में सरलता तथा सुंदरता का विकास हुआ। साथ ही अंतरजाल पर हिंदी के तकनीकी लेखन में वृद्धि हुई।

वर्तमान में यूनिकोड, वॉइस टाइपिंग जैसे तमाम लेखन की तकनीकी उपलब्ध है जो ब्लॉग लेखन को सरल तथा सहज रूप में प्रस्तुत करने में सहायक है। हिंदी टाइपिंग आज के दौर में उतना ही सरल है जितना की अंग्रेजी। इसके लिए न तो आपको किसी विशेष

---

[257] अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात(संपा.) - हिंदी ब्लॉगिंग अभियक्ति की नई क्रांति, उमेश चतुर्वेदी का लेख – 'हिंदी ब्लॉगिंग की चुनौतियाँ ', हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण - 2011, पृष्ठ संख्या-227

की बोर्ड की जरूरत है और न ही ज्यादा तकनीकी ज्ञान चाहिए। आपको बस गूगल द्वारा उपलब्ध साधनों का इस्तेमाल करना है जिसकी तैयारी आप चंद मिनटों में ही कर सकते हैं।

इस सन्दर्भ में typing in hindi की बात करें तो यह तकनीक लिप्यान्तरण (Transliteration) पर आधारित है। आपको अंग्रेजी में ही हिंदी शब्द लिखने है जो इस tool के मदद से स्वतः देवनागरी में बदल जाएगा। उदाहरण के तौर पर अगर आप 'amit' लिखते हैं तो यह अपने-आप 'अमित' लिखा जाएगा (वर्तनी के अन्य विकल्प भी आपको मिलते रहेंगे)। हिंदी में टाइप करने के मुख्यतः 3 विकल्प है पहला विकल्प : 'Google Input Tools Online' सर्वप्रथम Google Input Tools Online पर जाएँ। फिर अपनी पसंद के भाषा का चयन करें। फिर टाइप करना आरंभ करें। सभी अक्षर और शब्द स्वतः देवनागरी में बदल जाया करेंगे। टाइप हो जाने के बाद अब आप कॉपी-पेस्ट कर इसे कहीं भी लगा सकते हैं।

'google input tool online hindi' यह विकल्प उस स्थिति के लिए है जब आप किसी अन्य कंप्यूटर पर हैं और कुछ इनस्टॉल नहीं कर सकते अथवा अस्थायी कार्य करने के लिए ज्यादातर इसका प्रयोग किया जाता है। दूसरा विकल्प : ब्राउज़र एक्स्टेंशन (सिर्फ क्रोम के लिए) इसमें 1. सर्वप्रथम Google Input Tools Chrome Extension पर जाएँ। 2. 'Add to Chrome' बटन दबाएँ। google hindi typing chrome extension 3. डाउनलोड होने के बाद यह स्वतः इनस्टॉल हो जाएगा और ब्राउज़र के ऊपरी-दाहिने कोने में आपको एक नया icon दिखाई देगा। google chrome extension hindi 4. उस आइकॉन को क्लिक करने से आपको भाषाएँ चुनने

को मिलेगी। उसके चुनाव के बाद तीर के निशान दबाकर अपनी भाषाएं सुनिश्चित कर लें। आप चाहे तो एक बार में कई भाषाओँ का चयन सकते हैं। यह प्रक्रिया आपको बस एक बार करनी है। choose hindi language for typing 5. अब जब कभी हिंदी में टाइप करना पड़े तो उस आइकॉन को दबाकर अपनी भाषा चुन लें और इसके बाद आप हिंदी टाइपिंग कर सकते हैं।

'chrome extention hindi option' उपरोक्त दोनों विकल्पों की सबसे बड़ी चुनौती यह है कि आपका इन्टरनेट कनेक्शन काम कर रहा होना चाहिए। लिप्यांतरण तथा वर्तनी के सुझाव भी आपके इन्टरनेट स्पीड पर ही आधारित है। यहाँ दिया गया तीसरा विकल्प सबसे अच्छा है जो एक बार इनस्टॉल हो जाने के बाद बिना इन्टरनेट के भी काम करता है (offline mode)। इसकी दूसरी बड़ी खूबी यह है कि यह किसी भी इनपुट फील्ड में बखूबी कार्य करता है। जैसे आपका वर्ड प्रोसेसर, विंडोज़ text fields इत्यादि।

तीसरा विकल्प : Google Input Tools on Windows यह सबसे बेहतर विकल्प है जो आपको टाइपिंग की पूर्ण स्वंत्रता देता है। 1. सर्वप्रथम इस लिंक पर जाएँ Google Input Tools on Windows 2. अपनी भाषा चुन लेने के बाद डाउनलोड बटन दबाएँ। google hindi input method tool 3. डाउनलोड हो जाने के बाद उस फाइल को खोलें। आपके Windows Version पर आधारित पॉपअप मेसेज आने पर उसे 'हाँ' कर दें। windows installation message hindi tool 4. अब शेष फाइलों के डाउनलोड हो जाने के पश्चात् स्वतः इनस्टॉल हो जाएगा। इनस्टॉल होने का समय आपके इन्टरनेट की गति पर आधारित है। 'Installation Complete' मेसेज आ जाने

पर प्रक्रिया समाप्त !installation google hindi tool 5. पूरी प्रक्रिया समाप्त हो के बाद जहाँ टाइप करना चाहते हैं वहाँ कर्सर (cursor) ले जाकर अब Alt+Shift दबाइए।

आपके स्क्रीन के निचले-दाहिने भाग में एक छोटा टूलबार नज़र आएगा जो इस बात का सूचक है कि अब आप हिंदी में टाइप कर सकते हैं। टाइप करते ही सभी अक्षर और शब्द स्वतः देवनागरी में बदल जाया करेंगे। दोबारा डिफ़ॉल्ट (अंग्रेजी) भाषा में जाने के लिए फिर से Alt+Shift का प्रयोग किया जाता है।

उपर्युक्त सेटिंग इंस्टाल करने के बाद आप अपने कंप्यूटर से हिंदी में टाइपिंग के लिए पूर्णतः सक्षम हो जाते हैं और इस विधि से आप Facebook, Twitter, Google Search, Email, Windows या अन्य किसी जगह जहाँ text input की सुविधा है, हिंदी में लेखन कार्य कर सकते हैं।

6.10 हिंदी ब्लॉगिंग की भाषा

किसी भी विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण तथा उसकी भाषा-शैली के निर्धारण में तीन तत्वों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। पहला लेखक के ज्ञान का स्तर दूसरा पाठक के ज्ञान का स्तर तीसरा समाज की आवश्यकता। आरंभ में जो ब्लॉग लिखे गए उसमें लेखक की अपनी अभिव्यक्ति प्रधान थी। इसी कारण ब्लॉग की भाषा पर लेखक के स्तर का प्रभाव अधिक था। यदि लेखक तकनीकी या विज्ञान से सम्बंधित होता था तो उसकी भाषा शैली तकनीकी और विज्ञान से सम्बंधित होती थी और यदि लेखक मानविकी के विषयों से संबंधित होता था तो उसमें साहित्य, सिनेमा, कला-जगत से

संबंधित शब्दावली आ जाती थी। दूसरा जब ब्लॉग लोकप्रिय होने लगा तब उसमें लेखक प्रधान न होकर पाठक प्रधान होने लगा।

अर्थात एक बड़ा पाठक वर्ग जिस तरह की भाषा समझ सकता था उस तरह की भाषा का प्रयोग होने लगा। उदाहरण के तौर पर 'ताऊ डाट इन' ब्लाग में हरियाणवी भाषा के पाठकों को ध्यान में रखते हुए हरियाणवी अंचल में प्रचलित कहावतों, लोकोक्तियों तथा प्रचलित शब्दों का खूब प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के तौर पर एक पोस्ट 'अरै सत्यानाशी कोरोना तू ताऊ के घर क्यूंकर आया?' का कुछ अंश देखिये,- "जैसे ही कोरोना के चलते मोदीजी ने लोक डाऊन की घोषणा की, ताऊ की बांछे खिल गई। अब 3 सप्ताह का पूरा आराम, ना जल्दी उठना, ना आफिस जाना और ना ही घर का कोई सामान लेने बाजार जाना... वाह, यह आराम तो पृथ्वी पर शायद वर्तमान काल के मनुष्यों के अलावा किसी ने ही भोगा होगा अब तक। ताऊ का दिल बाग बाग हो रहा था तभी ताई की आवाज आई - सुणै सै के? ताई बोली - ईब कल तैं झाड़ू पौंछे वाली, रोटी बनाने वाली कोई नही आएगी।"[258]

ऐसे ही एक दूसरी पोस्ट 'मोदी जी को भगत ताऊ का खुला खत' में ब्लॉगर लिखते हैं,- "हाल यह है कि इतने दिनों से काम धंधे बन्द कर घर में बैठकर खाते हुए सब जमा पूंजी खत्म हो गयी है अब क्या करें? आपने 20 लाख करोड़ का राहत पैकेज जब घोषित किया तो मन प्रसन्न हो गया और यक़ीन मानिए उस रात बिना नींद की गोली खाये ही मस्त नींद आयी। पर अगले दिन जब बहन निर्मला सीतारमण जी ने जलेबी सी उतारना शुरू की और 5 दिन तक उतारती ही रही तो समझ आ गया की इन जलेबियों में

[258]http://taau.taau.in/2020/04/blog-post.html,06/07/2020,07:33

चाशनी नहीं है ।" यहाँ हम देखते है की किस तरह से ग्रामीण अंचल के शब्दों, मुहावरों और लोकोक्तियों का सुन्दर प्रयोग हुआ है ।

तीसरा बिन्दु समाज के अनुरूपता की बात करें तो समाज से तात्पर्य हमारा यह है कि ऐसे ब्लॉग जो सामाजिक समस्याओं पर केंद्रित होते हैं यहाँ न तो लेखक महत्वपूर्ण है ना ही पाठक महत्वपूर्ण है । अपितु सामाजिक व्यवस्था महत्वपूर्ण है । जैसे समाज में प्रचलित लिंगभेद, दहेज-प्रथा, भ्रूण-हत्या, गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी, अंधविश्वास आदि समस्याओं को केंद्रित करके लिखे जाने वाले ब्लॉग भाषा की दृष्टि से सरल शब्दावली तथा ऐसी शब्दावली का प्रयोग करते हैं जिसके माध्यम से समाज में व्याप्त कुरूपता को यथार्थ रूप में अभिव्यक्ति मिल सके और उसके खिलाफ जनजागृति विकसित हो सके ।

इस सन्दर्भ में गोपाल प्रधान के ब्लॉग 'औपनिवेशिक भारत में कम्युनिस्ट आंदोलन' का उदहारण देखिए,- "2020 में कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस से अली रज़ा की किताब 'रेवोल्यूशनरी पास्ट्स: कम्युनिस्ट इंटरनेशनलिज्म इन कोलोनियल इंडिया' का प्रकाशन हुआ । लेखक को एक मुखबिर की ओर से फ़रार क्रांतिकारी की गतिविधियों की रोज-ब-रोज की रिपोर्ट किसी पुराने संग्रहालय में देखने को मिली । रिपोर्ट अविश्वसनीय थी । बरसों से वह आदमी फ़रार था । पुलिस कुत्तों की तरह सूंघती फिर रही थी, राजनीतिक साथियों ने धोखा दिया था और परिवारी लोग नापसंद करते थे । इसके बावजूद उसे अपनी जीत का भरोसा था ।"[259] यहाँ हम देखते है की ब्लॉगर का ध्यान

[259]http://gopalpradhan.blogspot.com/,06/07/2020,07:35

भाषा की सरलता पर नहीं है बल्कि समस्या को पूर्णता में यथार्थ ढंग से व्यक्त करने में लगा हुआ है।

उपसंहार

हिंदी जगत के लिए ब्लॉगिंग एक नया विषय है। ब्लॉग इंटरनेट पर उपलब्ध एक स्वतंत्र ई-पत्रिका की तरह है, जिसमें रोज हर घंटे कुछ न कुछ लिखा जाता है। इसमें ब्लॉगर ही संपादक, प्रकाशक, एडिटर सब कुछ होता है। वह चाहे तो कोई पोस्ट हटा सकता है, चाहे तो कोई पोस्ट जोड़ सकता है।

ब्लॉग के लिए हिंदी में 'चिट्ठा' शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह व्यक्तिगत या विशेष व्यक्ति समूहों से सम्बद्ध होता है जिसमें व्यक्तिगत और सामूहिक जाल पृष्ठ होते हैं। इन्हें दैनंदिन डायरी की तरह लिखा जाता है। सामान्य रूप से ब्लॉग को परिभाषित करें तो ब्लॉग एक वेबसाइट है, जहाँ आप अपने विचारों को लेखों और चित्रों के माध्यम से इंटरनेट पर प्रकाशित कर सकते हैं। ब्लॉग पर आप किसी भी प्रकार के लेख लिख सकते हैं जो आपके जीवन से जुड़ा हो भी सकता है या नहीं भी, आप बिल्कुल स्वतंत्र हैं। किसी को अच्छा लगेगा तो वह आपका लेख पढ़ेगा और अच्छा नहीं लगेगा तो नहीं पढ़ेगा, आगे बढ़ जाएगा। यहाँ (ब्लॉग लेखन में) ना ही कोई लिखने के लिए मजबूर है और ना ही पढ़ने के लिए। अतः ब्लॉग लेखन पूर्णतया स्वतंत्र लेखन है।

'ब्लॉग' लिखने वालों को ब्लॉगर कहा जाता है और 'ब्लॉग' रखने की प्रक्रिया को ब्लॉगिंग कहते हैं। आजकल इंटरनेट पर 'ब्लॉग' और 'ब्लॉगरों' की संख्या में दिनोंदिन वृद्धि होती जा रही है जिससे ब्लॉगिंग की लोकप्रियता का अंदाजा लगाया जा सकता है। आज के तकनीकी युग में ब्लॉग संचार का एक सशक्त और सर्वसुलभ सकारात्मक माध्यम बनकर इंटरनेट पर उभर रहा है। ब्लॉग में ऐसी सुविधा है कि हम उसमें अपने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक सभी तरह के विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। साथ ही साथ हम अपने पत्र, विज्ञापन व ज्ञान का भी आदान-प्रदान कर सकते हैं।

ब्लॉग के माध्यम से स्थानीय गतिविधियों का प्रचार-प्रसार भी बड़े ही प्रभावशाली ढंग से किया जा रहा है, मसलन इसमें किसी भी स्थानीय समस्या को रोचक ढंग से उठाया जाता है जिससे आमजन का ध्यान इस इन समस्याओं की ओर आकृष्ट हो रहा है।

अतः ब्लॉगर वही काम कर रहा है जो काम पत्रकारिता कर रही थी बल्कि इसमें एक बड़ा लाभ यह है कि पत्रकारिता में संपादक की कैंची चल जाती थी लेकिन ब्लॉग में ऐसा कुछ नहीं है। आज जहाँ एक ओर पेड-न्यूज़ का कारोबार है तो दूसरी और बड़ी-बड़ी प्रचार एजेंसियां हैं जो किसी खास व्यक्ति की छवि आम जनता में बनाने और बिगाड़ने का कारोबार कर रही हैं। ऐसे दौर में आम जनमानस को ब्लॉग की बहुत जरूरत है। इसे और ज्यादा लोकप्रिय करने का कार्य मीडिया बखूबी कर सकता है। इसे सरल व सुविधाजनक बनाने का कार्य बड़ी-बड़ी कंपनियां भी कर सकती हैं, जिससे बच्चे से लेकर बूढ़े तक सभी आसानी से ब्लागिंग कर सकते हैं।

ब्लॉग के संदर्भ में फेसबुक और ट्विटर की बात करें तो, यह कहा जा सकता है कि फेसबुक और ट्विटर का जो निचोड़ होता है उसे हम ब्लॉग रूपी गोलक में सहेज कर रखते हैं। फेसबुक और ट्विटर की अपेक्षा ब्लॉग में पोस्ट रखने के कई फायदे होते हैं। जैसे आपको अपनी कोई पोस्ट खोजनी है तो फेसबुक और ट्विटर पर पोस्ट खोजने में आपको समय लगेगा लेकिन ब्लॉग में सहज रूप में आप अपना पोस्ट किया हुआ खोज सकते हैं। फेसबुक और ट्विटर के बरक्स ब्लॉगिंग की बात करें तो फेसबुक और ट्विटर से ब्लॉगिंग को कोई खतरा नहीं है। फेसबुक और ट्विटर पर हम ज्यादा लिखते हैं लेकिन उसमें जो सबसे अच्छा होता है, उसको हम ब्लॉग रूपी गोलक में सजाकर रखते हैं। ब्लॉग पर लिखी गई सामग्री की बात करे तो ब्लॉग की आलोचना तो होती है लेकिन ब्लॉग में स्तरीय लेखन भी होता है। इसमें संपादक के न रहने से कबाड़ से लेकर कंचन तक सभी चीजें शामिल रहती हैं। यही ब्लॉग की कमजोरी भी है

और ताकत भी। अब पाठक पर निर्भर करता है कि ब्लॉग में गोते लगाकर वह क्या चुनता है? पत्थर या मोती।

ब्लॉग की सबसे बड़ी ताकत यह है कि ब्लॉग में पाठकों की प्रतिक्रिया त्वरित गति से मिलती रहती है फलस्वरूप हम पाठक की विषय के प्रति रुचि का अंदाजा आसानी से लगा सकते हैं।

आजकल 'जियो फोन' और 'जियो इंटरनेट' जैसे अनेक संसाधनों की सुलभता की वजह से एक तरह से सूचना क्रांति का नया दौर शुरू हुआ है जिसकी वजह से बड़े ही सहज रूप में आम आदमी से लेकर विशेष आदमी के पास इंटरनेट और स्मार्टफोन की सुविधा उपलब्ध हो गई है। परिणाम यह हुआ है कि लगभग सभी के हाथ में एक स्मार्टफोन आसानी से मिल ही जाता है और जिसके हाथ में स्मार्टफोन है उसके हाथ में ब्लॉगिंग का संपूर्ण साहित्य मौजूद है बस एक क्लिक की दूरी तय करनी है।

इस एक क्लिक की दूरी तय करके हम अपने देश और विदेश में चल रही सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों की जानकारी नियमित रूप से प्राप्त कर सकते हैं और अपनी राय, टिप्पणी (ब्लॉग पोस्ट के माध्यम से) दे सकते हैं। यह कार्य ब्लॉगिंग जैसी विधा के माध्यम से ही संभव हो पाया है। इस माध्यम की वजह से बड़े सहज रूप में हम अपनी बात एक दूसरे तक पहुँचा सकते हैं हालांकि अपनी बात दूसरों तक पहुँचाने के लिए हमारे पास कई तरह के माध्यम मौजूद हैं जैसे पत्र-पत्रिकाएं, आर्टिकल, पुस्तकें आदि, लेकिन इन सब माध्यमों की तुलना में ब्लॉगिंग सबसे ताकतवर विधा है।

हिंदी में दो तरह के ब्लॉगर हैं - साहित्यिक ब्लॉगर और गैर साहित्यिक ब्लॉगर। प्रिंटमाध्यम में सक्रिय साहित्यकार ब्लॉग लेखन भी करते हैं, उन्हें ही यहाँ साहित्यिक ब्लॉगर

कहा जा रहा है। गैरसाहित्यिक ब्लॉगर वे हैं जो इस तरह साहित्य की रचना-प्रक्रिया से नहीं जुड़े हैं और ब्लॉग लेखन कर रहे हैं।

ब्लॉगिंग की संरचना की पड़ताल करें तो दो तरह के ब्लॉग लेखन के बारे में पता चलता है- सामूहिक ब्लॉग और व्यक्तिगत ब्लॉग। व्यक्तिगत ब्लॉग पर एक व्यक्ति लेखन कार्य करता है, जबकि सामूहिक ब्लॉग पर अनेक व्यक्तियों द्वारा लेखन कार्य किया जाता है। आरंभिक दौर में हिंदी ब्लॉगरों की कमी के कारण सामूहिक ब्लॉग बनाए गए और चिट्ठा चर्चा का प्रचार-प्रसार इसके माध्यम से किया जाता रहा। इसमें एक ही साथ कई ब्लॉगर अपने लेख प्रकाशित करते थे, जिससे एक ही साथ पाठक को विविध विषयों की जानकारी मिलती रहती है। सामूहिक ब्लॉग में एक माडरेटर होता है जिसकी अनुमति से अन्य ब्लॉगर अपना ब्लॉग पोस्ट करते हैं। सामूहिक ब्लॉग में 'नारद', 'अक्षर ग्राम नेटवर्क', 'चिट्ठाजगत डॉट इन', 'तरकश डॉट कॉम', 'परिकल्पना डॉट कॉम', 'ब्लॉगसेतु', 'सर्वज्ञ विकी', 'हमारी वाणी', 'ब्लॉग प्रहरी', आदि इंटरनेट पर मिलते हैं। ये ऐसे मंच हैं जहाँ विभिन्न प्रकार के ब्लॉगों का समुच्चय मिलता है, इन्हें ब्लॉग एग्रीगेटर भी कहा जाता है।

व्यक्तिगत ब्लॉग में नौ दो ग्यारह, एकोअहम्, समाजवादी जनपरिषद्, ताऊ डॉट इन, लोकरंग ब्लॉग, शब्दों का सफ़र, खेत खलिहान ब्लॉग, दालान ब्लॉग, साईंब्लॉग, चक्रधर का चकल्लस, मनोज वाजपेयी का ब्लॉग प्रमुख हैं। **'नौ दो ग्यारह'** आलोक कुमार का ब्लॉग है। इसे हिंदी का पहला ब्लॉग माना जाता है। यह ब्लॉग 21 अप्रैल 2003 को प्रकाश में आया। यह दिन हिंदी चिट्ठाकारी के लिए ऐतिहासिक माना जाता है, क्योंकि लगभग एकदर्जन से अधिक वेबसाइट्स ने इस बात की पुष्टि की है कि 'नौ दो ग्यारह' हिंदी का पहला ब्लॉग है।

ताऊ डॉट इन ब्लॉग पीसी रामपुरिया का है। इसमें हास्य व्यंग्य की अनोखी धारा प्रवाहित करने वाली बातें लिखी गई हैं। इस ब्लॉग की अपनी एक अलग पहचान है। इसमें

हरियाणवी शैली में कई पोस्ट प्रस्तुत की गई है। जिसके कारण इसकी लोकप्रियता में खूब वृद्धि हुई है।

खेत खलिहान ब्लॉग में ब्लॉगर ने ग्रामीण संस्कृति को मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास किया है। कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत की दो-तिहाई आबादी गांव में निवास करती हैं। अतः लोक संस्कृति और ग्रामीण चेतना को समझे बगैर भारतीय संस्कृति को समझना संभव नहीं है। इस ब्लॉग में खेती के प्रत्येक पहलू पर बारीकी से नजर रखी गई है। हिंदी भाषा के क्षेत्र में इस ब्लॉग में ग्रामीण चेतना और ग्रामीण समस्याओं को बखूबी उठाया गया है। 'खेत खलिहान' के माध्यम से मध्यप्रदेश के गांव तक ही नहीं अपितु पंजाब के इलाकों में भी किसानों को होने वाली समस्याओं यथा अन्न उत्पादन, कीटनाशकों के दुष्प्रभाव, जल नियोजन आदि को ब्लॉगर ने प्रमुख स्थान दिया है।

दालान ब्लॉग नोएडा निवासी 'रंजन ऋतुराज' सिंह का है। यह ब्लॉग चिट्ठी पत्री का संग्रह जान पड़ता है। इस ब्लॉग में ग्रामीण विषयों पर बात तो की गई है साथ ही साथ भारतीय संस्कृति को जीवंत रखने वाले विशेष पर्व जैसे होली, छठ पूजा को भी खास तरजीह दी गई है।

तीसरा खंभा ब्लॉग दिनेशराय द्विवेदी का है। इस ब्लॉग में न्याय प्रणाली की विडंबना को उठाया गया है। स्वतंत्रता के 73 वर्ष बाद भी न्याय पाना आम आदमी के लिए बड़ी जद्दोजहद का विषय है। अदालतों के चक्कर लगाकर और वकीलों की फीस चुकाते-चुकाते एक आम आदमी अपनी सारी जमा पूंजी गंवा देता है। इस ब्लॉग के माध्यम से ब्लॉगर ने पारिवारिक विषयों संपत्ति विभाजन, भूमि स्वामित्व, अंतरजातीय विवाह, यातायात संबंधी मानहानि आदि विषयों पर भी अपनी लेखनी चलाई है।

आदिवासी जगत ब्लॉग हरिराम मीणा का बड़ा ही महत्वपूर्ण ब्लॉग है। इस ब्लॉग में आदिवासी जनजीवन से जुड़ी हुई विभिन्न समस्याओं को उठाया गया है। आदिवासी

अनादिकाल से जल, जंगल, जमीन की लड़ाई लड़ रहे हैं। इस लड़ाई को जनमानस के सम्मुख लाने में आदिवासी जगत एक सार्थक कदम है। इस ब्लॉग के माध्यम से हरिराम मीणा ने उनकी चुनौतियों अधिकारों तथा मुख्यधारा में लाने वाले तमाम मुद्दों को उठाने का प्रयास किया है। हरिराम मीणा ने आदिवासी समाज के संदर्भ में फैली तमाम भ्रांतियों को भी निरस्त करने का प्रयास किया है। जिससे उनका जीवन सहज रुप से चला।

चक्रधर का चकल्लस ब्लॉग हिंदी के श्रेष्ठ व्यंग्यकार कवि अशोक चक्रधर का है। **मनोज वाजपेयी** मनोज वाजपेयी का ब्लॉग है। वे हिंदी के अत्यंत महत्वपूर्ण ब्लॉगर हैं। ब्लॉग की दुनिया में मनोज वाजपेयी का बड़ा नाम है यह प्रयोग धर्मी अभिनेता हैं। उनकी पहचान देश-विदेश में एक मंझे हुए अभिनेता के रूप में है। इनके ब्लॉग लेखन में जीवन की कड़वी सच्चाइयाँ जगह पाती हैं

सामूहिक ब्लॉग ब्लॉग का निर्माण सार्वजनिक व सामूहिक महत्व के विषयों पर ब्लॉगर्स को अपनी राय रचनाओं के माध्यम से एक ही ब्लॉग रूपी मंच पर प्रस्तुत करने के उद्देश्य किया जाता है। अर्थात इसमें ब्लॉग स्वामी स्वयं भी ब्लॉग व्यवस्थापक की भूमिका निभाता है और अन्य किसी ब्लॉगर को व्यवस्थापक के रूप में नियुक्त भी कर सकता है। इस तरह ब्लॉग पर ब्लॉग स्वामी अन्य ब्लॉगर्स को योगदान हेतु ब्लॉग लिंक भेज कर ब्लॉग में शामिल होने हेतु आमंत्रित लिंक पर क्लिक करने को कहता है। यह लिंक अन्य ब्लॉगर्स को अपने ईमेल में प्राप्त होता है। इस ब्लॉग के माध्यम से अन्य ब्लॉगर्स योगदानकर्ता के रूप में सामूहिक ब्लॉग से जुड़ जाता है और यह ब्लॉग उसके डैशबोर्ड पर दिखाई देने लगता है। योगदानकर्ता के रूप में जुड़े ब्लॉगर सामूहिक ब्लॉग पर समय-समय पर (जिस विशिष्ट विषय के आधार पर ब्लॉग का निर्माण किया गया है) स्वयं ब्लॉग पोस्ट प्रकाशित कर सकता है।

आज हिंदी ब्लॉग जगत में सामूहिक ब्लॉग की भरमार है। इसमें कुछ साहित्यिक उद्देश्य से सृजित किये गए हैं तो कुछ अन्य ब्लॉग भी हैं जैसे चर्चामंच, मोहल्ला, कबाड़खाना, भड़ास आदि हैं इसी प्रकार नारी को केंद्र में रखकर भी अनेकों सामूहिक ब्लॉग का निर्माण किया गया है जिनमें भारतीय 'नारी', 'चोखेर बाली', ब्लॉग का महत्वपूर्ण स्थान है।

कबाड़खाना अशोक पांडेय का एक सामूहिक ब्लॉग है। यह ब्लॉग भारत के आम उपभोक्ता को आईना दिखाने का काम करता है। इसके बारे में कहा जाता है कि इस कबाड़खाने में सबके लिए कुछ न कुछ मिल ही जाता है। सभी अपने काम की कोई न कोई सामग्री ढूंढ ही लेते हैं। समसामयिक विषयों के अलावा इस कबाड़खाने में साहित्यिक संस्मरण, कविता, कहानी, उपन्यास तथा कुछ कविताओं की प्रसिद्ध पंक्तियों को पोस्ट किया गया है और उन रचनाकारों के जीवन संघर्ष की कुछ प्रेरणादायक जीवनानुभवों को व्यक्त किया गया है।

नारी ब्लॉग एक सामुदायिक ब्लॉग है जिसकी सदस्य नारियां ही हैं। यह एक सम्मिलित प्रयास है जिसके माध्यम से स्त्रियां अपनी बात समाज तक पहुँचा रही हैं। नारी ब्लॉग पर केवल महिलाएं ही लिख सकती हैं। **चोखेरबाली** एक कम्युनिटी ब्लॉग है। यह ब्लॉग भी नारी ब्लॉग की तरह है। जिसमें अंतर सिर्फ इतना है कि यहाँ नारी संबंधी विचार कोई भी लिख सकता है। इस ब्लॉग के माध्यम से समाज में नारियों को कमतर आंकने की मानसिकता को बदलने का उपक्रम किया गया है। **भड़ास** भी एक सामूहिक ब्लॉग है। इसमें बड़े ही सहज, सरल वह बिंदास ढंग से आप अपनी बात कह सकते हैं। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें गंभीर से गंभीर विषयों को भी बड़े ही सहज और सरल ढंग से व्यक्त करने का प्रयास किया जाता है। इसके पोस्टों में कहीं गंभीरता दिखती है तो कहीं मौज-मस्ती दिखती है। कहीं गंभीर विषयों पर चर्चा दिखती है तो कही रंगीन मिज़ाज वाली मस्ती दिखती है। दरसल इस ब्लॉग की टैगलाइन ही है 'अगर कोई बात गले में अटक गई हो तो उगल दीजिए, मन हल्का हो जाएगा'

अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में ब्लॉगिंग ने हिंदी भाषा को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया हुआ है। इसने हिंदी के नए लेखको को भी जन्म दिया है तथा ब्लॉगिंग के माध्यम से संपूर्ण विश्व में हिंदी के लेखकों और पाठकों के बीच एक आत्मीय संबंध स्थापित किया है। इस तरह वेब की दुनिया से जुड़कर हिंदी एक नई चाल में ढल रही है। जहाँ हिंदी भाषा के विविध रूप जैसे- आंचलिक भाषाओं से लेकर स्थापित भाषाओं के अनेक रूप हिंदी ब्लॉगर ने विश्व के सामने रखे हैं, जिसका परिणाम यह है कि आज हिंदी ब्लॉगर अपने अंचल से निकल कर देश में ही नहीं बल्कि अंतरराष्ट्रीय मंच पर भी अपनी जगह बना रहा हैं। इस तरह राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी के प्रचार-प्रसार का जो काम सरकारी संस्थाएं करती हैं उन कार्यों को भी ब्लॉगर बखूबी अंजाम दे रहा है। हिंदी ब्लॉगिंग के माध्यम से प्राचीन एवं लुप्त हो रही रचनाओं को पुनः संरक्षित करने का कार्य भी ब्लॉगर कर रहे हैं जिससे हमें अतीत की झलक वर्तमान में भी दिखाई दे रही है।

निष्कर्ष रूप में कहें तो ब्लॉग ने हर प्रतिभाशाली लेखक को अपनी बातें सबके सामने रखने का स्पेस प्रदान किया है। अपनी बातों को सबके सामने रखने का माध्यम मिलना उन लोगों के लिए बड़ी महत्वपूर्ण बात है जो सामाजिक या राजनीतिक व्यवस्था की कमियों से क्षुब्ध होकर उसके पर्दाफ़ाश या परिहार के उपकरणों को अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम से सबके सामने लाने के लिए प्रकाशकों के दफ्तर के चक्कर काटते रहते थे और प्रकाशक उन्हें मौका नहीं देते थे। अतः हाशिए के लोगों की आवाज बनने के कारण ब्लॉग का स्थान अभिव्यक्ति के माध्यमों में महत्वपूर्ण हो जाता है, प्रकाशकों द्वारा हाशिए पर धकेले जा रहे लेखकों को अभिव्यक्ति का माध्यम उपलब्ध कराने के कारण तो यह महत्वपूर्ण है ही।

सामाजिक सरोकारों के विषयों को अक्सर विमर्श के ज़रिए उठाया जाता है। ब्लॉग विमर्श का एक अच्छा माध्यम बनकर उभरा है। लिखे हुए पर पाठकों की प्रतिक्रिया के लिए स्थान होने के कारण इसकी प्रकृति और भी विमर्शपरक हो जाती है। आज ब्लॉग के माध्यम से

हाशियागत समाज के लोगों की समस्याओं को विमर्श के ज़रिए उठाया जा रहा है। लगभग सभी उत्तर आधुनिक विमर्शों पर ब्लॉग के माध्यम से बात हो रही है, चाहे वह स्त्री-विमर्श हो या दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श हो या किन्नर विमर्श अथवा कोई अन्य विमर्श। इन सामाजिक सरोकारों से जुड़े हुए मुद्दों पर शोषितों या शोषण के खिलाफ लिखने बोलने वालों के मन में इनके परिहार के संबंध में जो एक बेचैनी होती है, उसे अभिव्यक्त करने का एक सशक्त और सरल माध्यम ब्लॉग है।

विषय की दृष्टि से भी ब्लॉग लेखन ने विशेष प्रगति की है। आज ब्लॉग के माध्यम से विभिन्न समकालीन विमर्शों जैसे स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, साम्प्रदायिकता, पर्यावरण विमर्श के साथ-साथ किन्नर विमर्श, वृद्ध विमर्श, मीडिया विमर्श मुख्य धारा की चर्चा का केंद्र बिंदु बने हुए हैं अपितु इन विमर्शों को ब्लॉग ने नई गति प्रदान की हैं।

इस सन्दर्भ में पर्यावरण विमर्श की बात करें तो- पर्यारण आज के समय का सबसे ज्वलंत और गंभीर मुद्दा है। पूरी दुनिया इसके दुष्परिणाम को भोग रही है। हालत यह है कि एक कोरोना महामारी ने पूरी दुनिया में कहर बरपा दिया है। इस बीमारी ने मनुष्य के तमाम विकास को धराशायी करते हुए मानव जाति को एक कठिन चुनौती दी है। मनुष्य जीवन को संकट में डाल दिया है। आज विश्व की हालत यह है कि कोरोना महामारी का कोई सटीक इलाज अभी तक मनुष्य के पास नहीं। इसका इलाज कब संभव हो पायेगा यह तो समय ही बतायेगा लेकिन पर्यावरण की क्षति के वजह से ही इस तरह की बीमारीयों में वृद्धि हो रही है, इस बात को इनकार नहीं किया जा सकता है।

विकास यदि पर्यावरण को क्षति पहुंचाकर होगा तो ऐसे विकास का कोई मतलब नहीं है जो मनुष्य के अस्तित्व को ही संकट में डाल दे। मानव समाज के लिए विकास तो आवश्यक है लेकिन पर्यावरण का संरक्षण भी हमारी ही जिम्मेदारी है। बेतहासा विकास की अंधी दौड़ में हम

विकास तो कर रहें है लेकिन हम यह भूल जा रहें है कि इसकी कीमत हमें और आने वाली पीड़ियों को चुकानी पड़ेगी। इस विषय पर हिंदी ब्लॉगरों ने अपने ब्लॉगों में गम्भीर विचार – विमर्श करने का प्रयास किया है तथा मानव समाज को और देश की सरकारों का ध्यान भी इस और आकृष्ट करने का प्रयास किया है।

विमर्श साहित्य स्तर का हो अथवा ब्लॉग स्तर का उसका स्वरूप तथा समस्याएं सामान ही होती हैं किन्तु ब्लॉग एक तकनीकी विधा है इसलिए तकनीकी समस्याएं तथा तकनीकी लाभ भी विमर्श का हिस्सा बन जाते हैं चूँकि यह समय तकनीक का है। अतः तकनीकी की कसौटी पर विमर्शों को कसना आवश्यक है और इस कसौटी पर खरे उतरते हुए विमर्शों की प्रस्तुति में ब्लॉग ने अप्रतिम सहयोग दिया हैं तथा सामाजिक समस्याओं एवं विमर्श में लोगों की भागीदारी को बढ़ाया है। जहाँ एक ओर साहित्य के माध्यम से विमर्श विद्वानों तथा शैक्षिक जगत तक ही सीमित ही रह जाता है जबकि ब्लॉग के माध्यम से विमर्श उस सामान्य व्यक्ति तक भी पहुँचता है जो साहित्यिक जगत से अनभिज्ञ हैं साहित्य में प्रचलित विमर्शों की सीमा को पार करते हुए ब्लॉग में किन्नर-विमर्श को भी महत्वपूर्ण स्थान देने का प्रयास किया गया है।

वैश्वीकरण की सहज प्रतिक्रिया स्वरूप अस्तित्व में आये अस्मितामूलक विमर्शों में किन्नर-विमर्श सर्वाधिक नवीन है किन्तु यह विमर्श किन्नर समाज की स्वीकार्यता व अधिकारों के प्रति गम्भीर चिन्तन करने पर बल देता है। कारण कि, किन्नर भी हमारे समान अपनी माँ की कोख से जन्म लेते हैं किन्तु लिंगाधारित-पुरुषवादी सामाजिक व्यवस्था में इन्हें अधिकार विहीन कर पशुवत् जीवन जीने को मजबूर किया गया है। एक ही माँ-बाप से जन्में बच्चों के साथ यदि किसी कारणवश किन्नर बच्चा पैदा हो जाता है तो सब कुछ समान व एक होते हुए भी उसके प्रति प्रेम और सहानुभूति के स्थान पर, उपेक्षा, तिरस्कार और घृणा का व्यवहार किया जाता है। सदियों पूर्व किन्नर समाज को इज्जत की नजर से देखा जाता था।

इस संदर्भ में मुगल साम्राज्य की चर्चा करें तो मुगल साम्राज्य में किन्नर लोग रानियों के हरम में उनकी सुरक्षा किया करते थे परंतु एक ऐसा समय आया कि अपनी पेट की भूख मिटाने के लिए किन्नरों को सड़कों पर भीख मांगने को मजबूर होना पड़ा। इसका सबसे बड़ा कारण शिक्षा का अभाव है क्योंकि उनकी शिक्षा की तरफ किसी का ध्यान नहीं गया। जिन किन्नरों ने समाज में शिक्षा अर्जित करने का प्रयास किया उनका मजाक बनाया गया फलस्वरूप उन्हें बीच में ही पढ़ाई छोड़नी पड़ी। इसमें एक दो अपवाद जरूर मिलेंगे जो शिक्षा अर्जित करके अफसर भी बने, लेकिन किन्नरों की एक बड़ी आबादी आज भी अनपढ़ ही है। जिसका नतीजा यह हुआ, उनके पास एक ही रास्ता रह गया। वह नाच-गा कर जन्म और शादी ब्याह के मौकों पर नेक, बधाई मांगकर अपना जीवन-बसर करने लगे।

आज के इस भागदौड़ भरे जीवन में **'वृद्ध विमर्श'** की आवश्यकता बढ़ती जा रही है, क्योंकि आज हम लोग इतने व्यस्त हो गए हैं कि हमारे पास बुजुर्गों के लिए समय ही नहीं रहता है। इसका एक बड़ा कारण संयुक्त परिवार का विघटन है। इसी वजह से हम उनका ध्यान नहीं रख पाते हैं तो दूसरी तरफ उनके अनुभवों का लाभ भी नहीं उठा पाते हैं। आज के चकाचौंध भरे जीवन की व्यस्तता के कारण हमारे पास पुरानी और नई पीढ़ी में सामंजस्य बैठाने का भी समय नहीं मिल पाता। इतना ही नहीं आजकल वृद्धों को बोझ मानकर वृद्धा आश्रमों में छोड़ दिया जाता है। कितनी विडंबना है कि पूरे परिवार पर बरगद की तरह छांव फैलाने वाला व्यक्ति वृद्धावस्था में अकेला, असहाय एवं बहिष्कृत जीवन जीता है। जीवनभर अपने मन, कर्म व वचन से रक्षा करने वाला, पौधों से पेड़ बनाने वाला व्यक्ति घर में एक कोने में उपेक्षित पड़ा रहता है या अस्पताल या वृद्धाश्रम में अपनी मौत की प्रतीक्षा करता है। इसी कारण युवा वर्ग वृद्धों के गुणों और अनुभव से वंचित रह जाते हैं। परिणामस्वरूप पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के बीच

दिन-प्रतिदिन खाई बढ़ती जा रही हैं। इस खाई को पाटने का काम वृद्ध विमर्श ही कर सकता है। अतः वृद्ध विमर्श आज के युग की जरूरत है।

वर्तमान में **मीडिया** की जिम्मेदारी - पूर्ण व्यवहार में कमी आयी है आज ख़बरों के केंद्र में सामाजिक दायित्त्व का भाव खण्डित होकरके धन तथा सत्ता की प्रधानता हो गयी है । धन तथा सत्ता के केंद्र में आ जाने से सामाजिक दायित्त्व के साथ-साथ ख़बरों का मौलिक स्वरूप भी प्रभावित हुआ है अब ख़बरों में रचनात्मकता तथा सर्जनात्मकता दिखाई नहीं देती है । रचनात्मकता, कलात्मकता एवं मौलिकता खबर की प्रस्तुतीकरण के महत्त्वपूर्ण आयाम है किन्तु आज मौलिकता केवल फर्जी खबर को खोजने में बची है तथा रचनात्मकता और कलात्मकता के माध्यम से खबरों का कृत्रिम श्रृंगार करके व्यक्तिगत स्वार्थों को पूर्ण किया जाता है।

आज हम इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के युग में हैं । इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और बहुजातीयता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं । प्रेस और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के संदर्भ में अंतर है । दोनों सामाजिक तौर पर अव्यवस्था पैदा करते हैं । नए युग का नारा है " मेरा जूता है जापानी, ये पतलून इंग्लिस्तानी, सर पर लाल टोपी रूसी फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी ।" यानी सर्जनात्मकता और सम्मिश्रण का युग है । यह बहुजातीय रचनात्मकता का युग है । इसका पहले वाली सर्जनात्मकता से अंतर है। यही नए मीडिया का मंत्र है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ब्लॉग ने अभिव्यक्ति का दायरा विस्तृत करते हुए देश-दुनिया के तमाम पहलुओं पर विचार की प्रक्रिया को अपनाया है और हर प्रतिभाशाली लेखकों को खुला मंच प्रदान किया है, जिसकी वजह से तमाम विषयों में विभिन्न प्रकार के मुद्दों के साथ – साथ, भाषा के विभिन्न रूपों में भी साहित्य समृद्ध हो रहा है । दूसरी तरफ हिंदी भाषा का राष्ट्रभाषा के रूप में दायरा बढ़ाने और देश-विदेश में प्रचार-प्रसार करने में ब्लॉग महत्त्वपूर्ण

योगदान दे रहा है। इस प्रकार ब्लॉग ने समकालीन विमर्श के ज़रिए समाज के हाशियागत लोगों की समस्याओं और उनके अधिकारों की लड़ाई को अभिव्यक्ति के हर माध्यमों में मुखर रूप से अपनी अभिव्यक्ति दर्ज़ कराने का प्रयास कर रहा है। इस प्रकार हम देखें तो ब्लॉग समकालीन विमर्शों को अभिव्यक्ति करने के एक सशक्त माध्यम बनकर उभर रहा हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

आधार सामग्री

1.http://9211.blogspot.com

2.http://adiwasidarsan.blogspot.com/p/blog-page_88.html

3.http://akoham.blogspot.com

4.http://ashokchakradhar.blogspot.com/

5.http://bhartiynari.blogspot.com/2019/11/Indian-women-underrated.html

6.http://daalaan.blogspot.com/2010/11/blog

7.http://dalitmukti.blogspot.com/

8.http://drpuneetbisaria । blogspot । com/2016/05/blog-post_31 । html

9.http://drpuneetbisaria । blogspot । com/2016/05/blog-post_31 । html

10.http://feminist-poems-articles.blogspot.com/2009/04/blog-post_12.html

11.http://feminist-poems-articles.blogspot.com/2009/04/blog-post_12.html

12.http://feminist-poems-articles.blogspot.com/2013/02/blog-post.html

13.http://ghughutibasuti.blogspot.com/2007/09/blog-post_07.html

14.http://ghughutibasuti.blogspot.com/2009/06/blog-post_26.html

15.http://gsmeena.blogspot.com/2013/02/blog-post.html

16.http://harirammeena.blogspot.com/

17.http://indianscifiarvind.blogspot.com

18.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/

19.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_13.html

20.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_13.html

21.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_30.html

22.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/07/blog-post_3932.html

23.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_06.html

24.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_06.html

25.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_13.html

26.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/09/blog-post_27.html

27.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/02/blog-post_16.html

28.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/04/blog-post_10.html

29.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/04/blog-post_10.html

30.http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2011/05/blog-post_22.html

31.http://jagadishwarchaturvedi.blogspot.com/

32.http://jantakapaksh.blogspot.com/2012/12/blog-post_31.html

33.http://jantakapaksh.blogspot.com/2012/12/blog-post_31.html,

34.http://kbharti53.blogspot.com/

35.http://kbharti53.blogspot.com/2015/09/blog-post.html?m=1

36.http://manojbajpayee.itzmyblog.com/

37.http://rishabhuvach.blogspot.com/2018/12/blog-post.html

38.http://sandoftheeye.blogspot.com/

39.http://sandoftheeye.blogspot.com/2010/04/blog-post_17.html

40.http://sandoftheeye.blogspot.com/2010/04/blog-post_17.html

41.http://taau.taau.in/2017/07/blog-post_18.html

42.http://vangmaypatrika.blogspot.com/2019/01/blog-post.html

43.http://www.abhivyakti-hindi.org

44.https://adivasihunkar.blogspot.com

45.https://adivasihunkar.blogspot.com/

46.https://bhadas.blogspot.com/2007/01/blog-post.html

47.https://hindi.webdunia.com/my-blog/

48.https://jaykharte.blogspot.com/2018/03/blog-post_26.html

49.https://khet-khlihan.blogspot.com/

50.https://loksanghars.wordpress.com

51.https://www । livehindustan । com/news//article1-story-122153 । html,

52.https://www.rachanakar.org/2007/07/blog-post_10.html

53. https://www.facebook.com/notes/gk

54.https://www।pravakta।com/communal-riots-in-indian-politics

55.https://gyanpradayani।blogspot।com/2018/02/blog-post_64।html,

56.https://www।rachanakar।org/2016/07/blog-post_51।html,

57.https://www।aajtak।in/india/story/bhagat-singhs-views-on-communalism--221915-2014-09-28,

58.https://hindi.speakingtree.in/blog/

59.https://www.rekhta.org/couplets/ab-nahiin-koii-baat-khatre-kii-jaun-eliya-couplets?lang=hi,

60.https://hindi.indiawaterportal.org/content/anaupama-maisara-kahaan-gayaa-usae-dhauundhao/content-type-page/66722

61.teesarakhamba.com/

62.www.britannica.com

63.हिंदी ब्लॉगिंग अभिव्यक्ति की नई क्रांति,संपादक;अविनाश वाचस्पति,रविन्द्र प्रभात,हिंदी साहित्य निकेतन, विजनौर, प्रथम संस्करण:2011

64.मीडिया समग्र (भाग-10) ब्लॉग संस्कृति तमाशबीनों की दुनिया, जगदीश्वर चतुर्वेदी, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2013

65.हिंदी ब्लॉगिंग का इतिहास, रवीन्द्र प्रभात, प्रकाशक, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ.प्र.), प्रथम संस्करण:2011

सहायक-ग्रन्थ सूची

1. हिंदी आधुनिकता एक पुनर्विचार खंड-3, संपादक; अभय कुमार दुबे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2014
2. हिंदी ब्लांगिंग स्वरूप,व्याप्ति और सम्भावनाएं, संपादक; डॉ. मनीष कुमार मिश्रा,युवा साहित्य चेतना मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2011
3. वेब मीडिया और अभिव्यक्ति के खतरे,संपादक; डॉ. अनिता मन्ना/ डॉ.मनीष मिश्रा,हिंदी-युग्म,नई दिल्ली,प्रथम संस्करण:2011
4. संवेद वाराणसी,संपादक;कमला प्रसाद मिश्र,इलाहाबाद,अंक 15-16,संयुक्तांक,वर्ष 2012
5. हंस' मासिक हिंदी पत्रिका, संपादक संजय सहाय, सितंबर 2018, अंक:2, अक्षर प्रकाशन, नयी दिल्ली
6. AmstelGanga.org/ब्लॉग लेखन और चिट्ठा लेखन
7. रामचंद्र शुक्ल संचयन, सं. नामवर सिंह,साहित्य अकादेमी प्रकाशन,प्रथम संस्करण:1988
8. हिंदी साहित्य का इतिहास,आचार्य रामचंद्र शुक्ल,मालिक एंड कंपनी,जयपुर,प्रथम संस्करण:2009
9. डॉ.अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2009
10. राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2011
11. अनामिका, मन मांझने की जरुरत, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2006

12.प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2003

13.स्त्री : उपेक्षिता, सीमोन द बोउवार, द सेकंड सेक्स का हिंदी रूपांतरण, प्रभा खेतान, प्रकाशक : हिंदी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, संस्करण : 2002

14.पूर्व संस्कृताचार्य बी.एस.रावत (सम्पा) मनुस्मृतिः, पण्डित रामेश्वर भट्टकृतया 'सरला'- भाषा टीकया समलंकृता , तृतीय अध्याय ,श्लोक संख्या -56 ,सम्यक प्रकशन ,नई दिल्ली ,प्रथम सम्यक संस्करण : 2015

15.संस्कृत-हिंदी कोश, वामन शिवराम आप्टे, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पुनर्मुद्रण: दिल्ली,1996

16.आलोचना से आगे, सुधीश पचौरी, राधाकृष्ण प्रकाशन , नई दिल्ली , संस्करण : 2000

17.तुलसीराम, (2012), 'प्रगतिशील आन्दोलन और दलित विमर्श'; नया पथ, वर्ष:16:अंक 1, जनवरी-जून (संयुक्तांक)

18.ओमप्रकाश वाल्मीकि , दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण (2001)

19.मैनेजर पाण्डेय, अनभै सांचा, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, संस्करण : 2012

20.रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण : 2016

21.देवेन्द्र चौबे, आधुनिक साहित्य में दलित विमर्श, ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली , संस्करण 2005

22.हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली, संस्करण:2006

23.ओमप्रकाश वाल्मीकि , मुख्यधारा और दलित साहित्य , सामयिक प्रकाशन , नई दिल्ली , संस्करण : 2014

24.कंवल भारती, दलित विमर्श की भूमिका, अमन प्रकाशन, कानपुर, संस्करण 2013

25.नारी शोषण : आईने और आयाम, आशारानी व्होरा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 1982

26.रमणिका गुप्ता (संपा.), युद्धरत आम आदमी (त्रैमासिक) , अंक – 90 , जनवरी – मार्च – 2008 रमणिका फाउन्डेशन, नई दिल्ली

27.रमणिका गुप्ता , आदिवासी अस्मिता का संकट, सामयिक प्रकाशन ,नई दिल्ली , संस्करण : 2013

28.गंगा सहाय मीणा (संपा.) ,आदिवासी साहित्य विमर्श , अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड , नई दिल्ली , संस्करण 2014

29.रमणिका गुप्ता, आदिवासी लेखन : एक उभरती चेतना, सामयिक प्रकाशन,नई दिल्ली, संस्करण : 2013

30.हरिराम मीणा , आदिवासी दुनिया, नेशल बुक ट्रस्ट , नई दिल्ली , संस्करण 2013

31.रमणिका गुप्ता (संपा .) , आदिवासी : विकास से विस्थापन, राधाकृष्ण प्रकाशन , नई दिल्ली , संस्करण : 2010

32.बाबा साहेब डॉक्टर अंबेडकर, संपूर्ण वांग्मय, खंड -1,(भारत में जातीप्रथा-उन्मूलन , भाषायी प्रान्तों पर विचार , रानाडे गाँधी और जिन्ना), डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार , नई दिल्ली ,संस्करण 2013

परिशिष्ट

UGC Approved Journal No – 40957
(IIJIF) Impact Factor- 4.172
Regd. No. : 1687-2006-2007 ISSN 0974 - 7648

JIGYASA

AN INTERDISCIPLINARY PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Chief Editor : ***Indukant Dixit***

Executive Editor : ***Shashi Bhushan Poddar***

Editor
Reeta Yadav

Volume 12	May 2019	No. V

Published by
PODDAR FOUNDATION
Taranagar Colony
Chhittupur, BHU, Varanasi
www.jigyasabhu.blogspot.com
www.jigyasabhu.com
E-mail : jigyasabhu@gmail.com
Mob. 9415390515, 0542 2366370

- **सविनय अवज्ञा आंदोलन में बिहार के दलितों की भूमिका** 1159-1164
  डॉ. राजीव रंजन, पी-एच. डी., नेट (यूजीसी) इतिहास, पटना विश्वविद्यालय, पटना
- **महाकाव्यों में अलंकृत शैली का स्वरूप** 1165-1166
  डॉ. दिव्या त्रिपाठी, एम.ए. पी.एच.डी., पूर्व शोध छात्रा, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।
- **स्वाधीनता के बाद हिंदी कहानी की विकास यात्रा** 1167-1174
  डॉ. विवेक कुमार जायसवाल, सीनियर लेक्चरर, सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ इण्डियन लैंग्वेजेज एण्ड सोसायटी (इनलान्सो), वाराणसी, भारत
- **आध्यात्म और मनोविज्ञान** 1175-1181
  डॉ. वाचस्पति दुबे, असिस्टेन्ट प्रोफेसर, मनोविज्ञान विभाग, जगतपुर पी.जी. कॉलेज, जगतपुर, वाराणसी
- **बिहार में सविनय अवज्ञा आन्दोलन और राजेन्द्र प्रसाद की भूमिका : एक अध्ययन** 1182-1189
  अखिलेश कुमार, शोध-छात्र, राजनीति विज्ञान, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।
- **नेपाल का नवीन संवैधानिक समस्या एवं गत्यवरोध** 1190-1196
  हिंमाशु मिश्र, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, कालिकाधाम पीजी कालेज, सेवापुरी, वाराणसी
- **पर्यावरण संरक्षण में भारतीय दर्शन का योगदान** 1197-1202
  मयंक भारती, शोध छात्र, दर्शनशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।
- **स्त्री विमर्श और हिन्दी का ब्लाग लेखन** 1203-1206
  हिमान्शु राय, शोधार्थी, पी-एच.डी. हिन्दी हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय
- **निर्धन और वंचित समाज के शिक्षा में डॉ. भीमराव आम्बेडकर के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता** 1207-1211
  सूर्य प्रताप सिंह, शोध छात्र, शिक्षा संकाय, महात्मा गाँधी काशी वद्यापीठ वाराणसी, उ.प्र.
  प्रो. अरविन्द कमार पाण्डेय, विभागाध्यक्ष-शिक्षा संकाय, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ वाराणसी, उ.प्र.

स्त्री विमर्श और हिन्दी का ब्लाग लेखन

हिमान्शु राय *

विमर्श से अभिप्राय वाद-विवाद, चर्चा-परिचर्चा तथा बहस से है। किसी भी मुद्दे को लेकर उसके समस्त पहलुओं पर गंभीरता से जाँच पड़ताल करना तथा उसके एक-एक बिंदु पर गौर करते हुए अपने विचार रखना, अपना मत प्रस्तुत करना है। विमर्श का अर्थ जीवंत बहस भी माना जाता है। इसके अंतर्गत किसी भी समस्या या स्थिति को एक कोण से न देखकर उसके विभिन्न पक्षों पर विचार किया जाता है। इसके कई रूप हमें देखने को मिलते हैं। जैसे देखने वाले या विचार करने वाले की मानसिकता क्या है? दृष्टि क्या है? संस्कार क्या है? और उसकी वैचारिक प्रतिबद्धता क्या है? इन सभी बिंदुओं पर विस्तार से जाँच पड़ताल कर समझने का प्रयास किया जाता है और यह जाँच पड़ताल समस्या या मुद्दे को सार्थक दिशा देने (विस्तार देने) के उद्देश्य से किया जाता है।

विमर्श के अंतर्गत किसी भी समस्या की गहन पड़ताल करके उसके गुण-दोषों को उजागर करके वास्तविक तथ्य का पता लगाकर अपनी सलाह या विचार व्यक्त करने का प्रयास किया जाता है। विचार और चिंतन का यह रूप जब दलित विषयक प्रश्नों से, आदिवासी विषयक प्रश्नों, नारी विषयक प्रश्नों से जुड़ते हैं तो क्रमशः दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, स्त्री विमर्श कहलाते हैं।

स्त्री विमर्श पर जब भी विचार-विमर्श किया जाता है तो कई सवाल खड़े होते हैं। स्त्री कौन है? स्त्री पैदा होती है ? स्त्री बनाई जाती है ? स्त्री दमित है, शोषित है, उत्पीड़ित है ? अथवा प्रताड़नाओं के अधिकार को साथ लेकर आने वाली स्त्री है ? या फिर समाज में चले आ रहे हैं परंपरागत नियमों, पितृसत्तात्मक व्यवस्था, सामाजिक व्यवस्था और संस्कृति का बोझ ढोने वाली मशीन ही स्त्री है ? दरअसल यह सवाल इसलिए भी उठता है क्योंकि स्त्री यह बोझ शताब्दी-दर-शताब्दी वहन करती चली आ रही है।

वैदिक काल से लेकर वर्तमान काल तक नारी अनेक वर्जनाओं का शिकार होती रही है। हर समाज में नारी की स्थिति दोयम दर्जे की रही है, जबकि स्त्री और पुरुष समाज निर्माण के दो आवश्यक अंग हैं। यह दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। ये दोनों समाज रूपी रथ के वो पहिए हैं जिनके बगैर रथ का चलना सम्भव नहीं है अर्थात् एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, इसके बावजूद समाज संचालन में एक को पूरी छूट और दूसरे पर तमाम वर्जनाएं क्यों ? यह वर्जनायें स्त्री जीवन में गतिरोध और कुंठा का भाव भर देती हैं। स्त्री और पुरुष सृष्टि के निर्माता और संचालक तत्त्व हैं जिनके बगैर सृष्टि की रचना संभव नहीं।

दुनिया की आधी आबादी नारी की है , जिसे नर की आत्मा भी कहा जाता रहा है। जिसके बगैर नर का जीवन अधूरा माना जाता है नारी के बगैर संसार का

* शोधार्थी, पी-एच.डी. हिन्दी हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय

चलना असम्भव है। क्योंकि संसार को चलाने के लिए संतान की जरुरत होती है और संतान उत्पत्ति के लिए पत्नी की आवश्यकता पड़ती है। इसके बाद भी नारी को एक वस्तु बना दिया गया है। यही हमारे समाज की विडम्बना है। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर 'रंजू भाटिया' अपनी पोस्ट 'वैदिक काल से अब तक नारी की यात्रा ..' में लिखती हैं कि – "वही नारी जो वैदिक युग में देवी थी धीरे-धीरे अपने पद से नीचे खिसकने लगी मध्यकाल में जब सामन्तवादी युग आया तो दुर्बल लोगों का शोषण किया जाने लगा उसके लिए जंगली कानून बने और उसी कानून में नारी भी आ गयी। नारी जाति को सामूहिक रूप से ही पतित अनधिकारी बताया गया उसी विचारधारा ने नारी के मूल अधिकारों पर प्रतिबंध लगा कर पुरुष को हर जगह बेहतर बना कर उसको इतना शक्तिहीन, विद्याहीन, साहसहीन कर दिया कि नारी समाज के लिए तो क्या उपयोगी सिद्ध होती अपनी आत्मरक्षा के लिए भी पुरूष पर निर्भर हो गई।"[1]

पितृप्रधान समाज ने स्त्रियों की मानसिकता को अपने अनुरुप बना लिया है। पुरुष द्वारा बनाए गए कानून-कायदे का वह कभी विरोध नहीं कर पायी, हालाँकि समाज में समय-समय पर स्त्रियों की परिस्थितियों में सुधार करने के लिए अनेक प्रयास किए गए। उनकी सुरक्षा के कड़े इंतजाम किए गए हैं लेकिन पुरुष अपनी मानसिकता में बदलाव नहीं कर पाए। इस के संदर्भ में राजेंद्र यादव लिखते हैं कि - "सामंती व्यवस्था में नारी सिर्फ एक वस्तु है, संभोग और संतान की इच्छा पूरी करने वाली मादा। यहाँ सेवा, उपयोग और वफादारी के बदले पुरुष नारी को उसी तरह सजाता, सुरक्षा देता और उसकी जिम्मेदारी लेता है जैसे अपने हाथियों, घोड़ों और बैलों को सजाता, संवारता और संरक्षण देता है।"[2]

इस सन्दर्भ में राजेंद्र यादव का मानना है कि युगों से स्त्री के प्रति एक अलग नजरिया समाज में देखने को मिलता है, उनके अनुसार हमारे समाज की यह विडंबना है की नारी के प्रति श्रद्धा का भाव जगाकर उसे देवी के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया जाता है। स्त्री के दूसरे रूप को दबाया जाता रहा है। वे आगे लिखते हैं कि - "आदमी ने यह मान लिया है कि औरत शरीर है, सेक्स है, वहीं से उसकी स्वतंत्रता की चेतना और स्वच्छंद व्यवहार पैदा होते हैं। इसलिए वह हर तरह से उसके सेक्स को नियंत्रित करना चाहता है।"[3]

स्त्रियों ने पुरुष प्रधान रूढ़िवादिता को तोड़ने के लिए तथा अपनी दयनीय दासता से मुक्ति के लिए समय-समय पर कई आंदोलन किये जिनमें स्त्रियों ने बढ़-चढ़कर सहयोग किया और समाज में व्याप्त विसंगतिपूर्ण व्यवस्था ढहाने का प्रयास किया। इस सन्दर्भ में अनामिका लिखती हैं कि – "दोषी पुरुष नहीं, वह पितृसत्तात्मक व्यवस्था है जो जन्म से लेकर मृत्यु तक पुरुषों को लगातार एक ही पाठ पढ़ाती है कि स्त्रियाँ उनसे हीनतर हैं, उनके भोग का साधन मात्र। आंदोलन की सार्थकता इसमें है कि वह वहाँ–वहाँ उंगली रखें जहाँ - जहाँ मानदंड दोहरे हैं, विरूपण, प्रक्षेपण, विलोपन के तिहरे षड्यंत्र स्त्री के खिलाफ लगातार कारगर हैं जिनसे निस्तार मिलना ही चाहिए और सारा संघर्ष इसी बात का है।"[4]

स्त्रीवादी समर्थक लेखिकाओं ने इस लिंग केंद्रित वर्चस्व, प्रभुत्व को चुनौती दी है, पितृसत्तात्मक नैतिकता को तोड़ने का प्रयास किया है और उन प्रतिमानो की पड़ताल कर

उन्हें विश्लेषित करने का प्रयास किया है, जो स्त्री विरोधी तथा लिंग विरोधी हैं । इस सन्दर्भ में प्रभा खेतान का मानना है कि स्त्रियों पर तिरस्कार का प्रभाव उनके यौन जीवन पर भी पड़ा है जिसके परिणाम स्वरूप स्त्रियों की मानसिकता को भी पुरुष ने अपनी अवधारणा (पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था) के अनुकूल निर्मित किया है। इस सन्दर्भ में प्रभा खेतान लिखती हैं - "पुरुषोचित प्रतिमान के आधार पर स्त्री यौनिकता की अवधारणा निर्धारित की गई । स्त्री के यौन-भाव को निष्क्रिय माना गया । स्त्री 'काम' को केवल देह के अंग विशेष तक ही सीमित कर दिया गया । संभोग के साथ एक बड़ी प्राचीन पितृसत्तात्मक अवधारणा जुड़ी रही है । ... पुरुष 'सम्भोग से समाधि की ओर' जाता है, मगर स्त्री को केवल माध्यम ही बने रहना है ।"[5]

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर सुमन जिंदल का मानना है कि - भारतीय समाज में स्त्री को एक सेक्स ऑब्जेक्ट्स के रूप में देखा जाता रहा है । इतना ही नहीं एक और विद्रूप सोच 'स्त्रियों की वर्जिनिटी को महिमामंडित' करने की रही है । लेकिन पुरुष के लिए ऐसी कोई भी सोच समाज में नहीं रही है । धीरे-धीरे जब इस बात का एहसास स्त्री को होने लगा तो उसने इस प्रथा के खिलाफ विद्रोह करना शुरू किया ।

इस सन्दर्भ में ब्लॉग लेखिका शालिनी कौशिक अपना मत व्यक्त करते हुये कहती हैं कि 'नारी सशक्तिकरण' का सीधा संबंध है कि नारी और पुरुष इस दुनिया में बराबर हैं और ये बराबरी उन्हें प्रकृति से मिली है । इसी विषय को और अधिक स्पष्ट करते हुये ब्लॉगर अपनी एक पोस्ट 'नारी सशक्तिकरण की समर्थक नारियॉं किसी की ऑंख की किरकिरी नहीं बनना चाहती हैं' पोस्ट में लिखती हैं कि "नारी सशक्तिकरण या वूमन एम्पावरमेन्ट के तहत कोई भी नारी किसी भी पुरूष से कुछ नहीं चाहती और ना समाज से कुछ चाहती है क्योंकि वह अस्वीकार करती है की पुरूष उसका 'मालिक' है । ये कोई चुनौती नहीं है, और ये कोई सत्ता की उथल पुथल भी नहीं है ये 'एक जाग्रति है' की नारी और पुरुष दोनो इंसान हैं और दोनों समान अधिकार रखते हैं समाज में"[6] अतः इनमें से एक को उपेक्षित कर देना समाज की गति को अवरुद्ध करना है ।

पितृसत्ता की मान्यताओं और निर्मित मानदंडों से संघर्ष करके ही स्त्री अपने लक्ष्य को पा सकती हैं । स्त्रीवाद का सामाजिक संघर्ष इसीलिए पितृसत्ता के खिलाफ रहा है । इस संदर्भ में वे आगे लिखती हैं - "पितृसत्ता एक सामाजिक घटना है, हजारों साल से चली आई ऐसी व्यवस्था है, जिसमें स्त्री की अधीनस्थता सर्वविदित है । पितृसत्ता ने स्त्री को अपने ज्ञान की वस्तु बनाया । उसे साधन के रूप में प्रयुक्त किया - उसके नाम, रूप, जाति, गोत्र सब अपने संदर्भ में परिभाषित किए। स्त्री का यह अमानवीयकरण दलित के अमानवीयकरण से कहीं ज्यादा सूक्ष्म है, क्योंकि दलित पुरुष भी तो पितृ-व्यवस्था सत्ता का सदस्य है और पुरुषोचित अहंकार के कारण स्त्री के शोषण और उत्पीड़न से वह भी बाज नहीं आता ।"[7]

अतः स्त्री समर्थक लेखिकाओं का मानना है कि स्त्रियाँ समाज में किसी के सर की बोझ नहीं है। क्योंकि वह स्त्री और पुरुष को अलग मानती है इसलिए उनकी भूमिका को अलग रूपों में देखती हैं। वह पुरुष को मालिक नहीं मानती हैं, वे अपने घर को अपना कर्म युद्ध मानती हैं । इस सन्दर्भ में ब्लॉगर अपनी एक पोस्ट ' नारी सशक्तिकरण

की समर्थक नारियाँ किसी की आँख की किरकिरी नहीं बनना चाहती हैं' में लिखती हैं - "नारी सशक्तिकरण की समर्थक महिला चाहती हैं की समाज में ये सोच हो की जो पुरूष के लिये सही, वही नारी के लिये सही है। 'नारी सशक्तिकरण' के लिये जो भी अभियान चलाये जा रहे हैं, वह ना तो पुरूष विरोधी हैं और ना ही नारी समर्थक। वह सारे अभियान केवल मूलभूत अधिकारों को दुबारा से 'बराबरी' मे बांटने का प्रयास हैं।"[8]

अतः भारत में स्त्री मुक्ति एक सामाजिक स्थिति है कोई नारा नहीं है। इस तरह हम देखते है कि समाज में जो परिवर्तन होते हैं वह सामाजिक विसंगतियों में सुधार और बौद्धिक स्तर के विकास से ही संभव होते हैं। आज की स्त्री के बारे में बात करें तो वह अपनी जरूरतों को महसूस करती है और उनको पूरा करने में अपना ध्यान लगाती है। समानता के अधिकारों के लिए वह अपने अस्तित्व को एक नया रूप दे रही है। वह पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलना चाह रही है।

सन्दर्भ :

1. http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_30.html रंजू भाटिया at 06/02/2019, 08:26:00 AM
2. राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2011, पृ. 21
3. राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण : 2011, पृ. 15
4. प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2003, पृ. 11.
5. प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2003, पृ. 144.
6. http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_13.html **6/11/2019 09:20:00 AM**
7. प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2003, पृ. 39
8. http://indianwomanhasarrived.blogspot.com/2008/06/blog-post_13.html **6/01/2019 09:20:00 AM**

***

UGC Approved Journal No – 49297
(IIJIF) Impact Factor - 3.262

Regd. No. : 1687-2006-2007

ISSN 2231-4113

Śodha Pravāha

(A Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal)

Editor : S. B. Poddar

VOL. 8

ISSUE II

FEBRUARY 2018

Chief Editor : S. K. Tiwari

Academic Staff College
Banaras Hindu University,
Varanasi-221005, INDIA
www.sodhapravaha.com

E-mail : sodhapravaha@gmail.com www.sodhapravaha.blogspot.com

- प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों के बेहतर ढंग से भूमिका निर्वहन करने में विद्यालयीय समाज कार्य की संभावनाएं — 897-900
  डॉ. अभिषेक भारद्वाज, प्रवक्ता समाज कार्य
- धर्म चिंतन : जैन एवं बौद्ध दर्शन विशेष — 901-902
  अभिषेक सिंह, पूर्व छात्र, (स्नातकोतर), राजनीतिज्ञ विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
- श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में समत्व योग — 903-905
  डॉ. मनीष कुमार त्रिपाठी, सहायक अध्यापक, राजकीय क्वीस इण्टर कॉलेज, वाराणसी
- सत्ता के साथ अमीरों का गठजोड़ की दस्तावेज है, वारेन हेस्टिंग्स का साँड़ — 906-914
  भुवाल यादव, शोध छात्र, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
- कठगुलाब की मनोवैज्ञानिक समीक्षा — 915-919
  चन्द्रनाथ निषाद, शोध छात्र, अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय, हैदराबाद
- अजन्ता एवं बाघ के भित्ति-चित्रों पर प्रभाविता एवं लयात्मकताः एक दृष्टिकोण — 920-923
  डॉ. रूपम सिन्हा, स्वतंत्र चित्रकार
- संस्कृत वाङ्मय में प्रकृति चित्रण — 924-925
  डॉ. दिव्या त्रिपाठी, एम.ए., पी.एच.डी., पूर्व शोध छात्रा, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।
- भारत-नेपाल समकालीन सम्बन्ध — 926-930
  हिंमाशु मिश्र, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, कालिकाधाम पीजी कालेज, सेवापुरी, वाराणसी
- मुंशी प्रेमचंद के उपन्यासों में किसान चेतना — 931-934
  करुणा पीटर, अध्यापिका
- संवैधानिक अधिकार एवं महिलाओं की संज्ञानात्मक जागरुकता : एक अध्ययन — 935-939
  डॉ. श्वेता सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, श्री अ.क.पी.जी. कालेज, वाराणसी।
- राष्ट्रवादी राजनीतिक प्रक्रिया, रचनात्मक कार्य और राजेन्द्र प्रसाद की भूमिका : एक अवलोकन — 940-945
  अखिलेश कुमार, शोध-छात्र, राजनीति विज्ञान, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- आदिवासी अस्तित्व और हिंदी का ब्लॉग लेखन — 946-948
  हिमान्शु राय, शोधार्थी, पीएचडी हिन्दी ([illegible] हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय

आदिवासी अस्तित्व और हिंदी का ब्लॉग लेखन

हिमान्शु राय *

आदिवासी कौन है? इस संबंध में अभी तक स्पष्टता नहीं बन पाई है। समाजशास्त्रियों एवं साहित्यकारों द्वारा हुए आदिवासी लेखन में कई स्तरों पर अंतर्विरोध दिखाई पड़ता है। इस संदर्भ में हम 'आदिवासी' शब्द पर विचार करें तो विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार की परिभाषाएं दी हैं परन्तु आदिवासी समाज की कोई भी पूर्णरूपेण परिभाषा अभी तक प्रचलित नहीं हो पाई है। हालाँकि समय–समय पर आदिवासी की विभिन्न परिभाषाएं दी गई हैं, परन्तु यह परिभाषाएं केवल विशेष परिस्थिति की ही हैं जो किसी जनजाति विशेष के लिए ही उपयुक्त सिद्ध होती हैं। एक जनजातीय समाज दूसरे जनजाति समाज से भिन्न होता है, इसलिए सामाजिक, राजनीतिक, भाषिक तथा जनसंख्या के आधार पर इनकी विशेषताएं भी अलग अलग होती हैं।

आदिवासी वह समुदाय है जो भारतवर्ष का सबसे प्राचीन समुदाय रहा है। जिसे सभ्यता के विकास के साथ–साथ समाज और सत्ता से दूर किया जाता रहा है। इस वजह से मुख्यधारा के समाज से उनका समाज और जीवन अलग रूप में विकसित होता रहा है। ऐसे में आदिवासी समुदाय को जानना समझना और व्याख्यायित करना अत्यंत आवश्यक बन जाता है। हिंदी के 'आदिवासी दर्शन' पोस्ट में ब्लॉगर लिखते हैं– "आदिवासी कोई जाति या कोई धर्म नहीं है, आदिवासी उन जातियों का समूह है, जो भारत में अनादिकाल से वास कर रहे है, जैसे कि मुंडा, हो, गरासिया, भील, भिलाला इत्यादि। आदिमजाति के समूह को 'आदिवासी' कहा जाता है।" इस तरह हर देश में वहाँ के आदिवासियों को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है।

इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं : "आदिवासी शब्द अंग्रेजी के **Aboriginal** (आदिम), **Indigenous** (मूलवासी) के पर्याय के रूप में मान्य और स्वीकृत है। आदिवासी शब्द अपने आप में इस अर्थ को व्यक्त करता है कि – देश विशेष का प्राचीनतम, आदिम या मूलनिवासी। 'आदिवासी' अपनी भाषिक विशिष्टता, संस्कृति, प्रजाति एवं प्रकृति आधारित धर्म के कारण समाज की मुख्यधारा से अलग होता है। यही इसकी विशिष्टता भी है और अन्य समाजों से इसके अलगाव का कारण भी।"

आदिवासियों की अपनी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था होती है जो इस समुदाय को मुख्यधारा के समाज से अलग करती है। उन्हें जानना है तो उनकी संस्कृति को जानना और समझना होगा। आदिवासी संस्कृति की अपनी विशिष्ट पहचान है। इसके अंतर्गत जाति समानता, लिंग समानता, सहभागिता, संयोगिता, सामूहिकता, भाईचारा एवं प्रकृति से गहरा लगाव है। ये प्रकृति प्रेमी हैं, जो अन्य संस्कृतियों से आदिवासी को अलग करती हैं। आदिवासी संस्कृति सरल एवं साधारण जीवन पर बल देती है। प्रकृति के साथ चलती है, प्रकृति की सहयोगी होती है।

प्रकृति के अस्तित्व पर ही आदिवासियों का जीवन निर्भर करता है। इस पूंजीवादी दौर में प्रकृति ही सबसे ज्यादा उपेक्षित है। जिस कारण आदिवासियों का संकट भी बढ़ता ही जा रहा है। ऐसे में आदिवासियों के अस्तित्व का प्रश्न बहुत जरूरी बन गया है। आदिवासी साहित्य, आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व को संपूर्णता में देखे जाने का समर्थक है। इस संदर्भ में हरिराम मीणा लिखते हैं – "जब आदिवासी अस्मिता को परिभाषित किया जाता है तो समग्र संस्कृति को केंद्र में रखना होगा जिसमें भाषा, धर्म, मिथक, प्रथाएँ, जीवन–शैली, खान–पान, वेशभूषा, गणचिन्ह, सौंदर्यबोध निषेध, आवास, परंपरागत ज्ञान, मानवेतर प्राणी जगत व प्रकृति तत्वों से सम्बन्ध, स्वायत्तता, जीवनयापन, पर्वोत्सव, किम्वदंतियां, मुहावरे, गल्प, गीत–संगीत, स्त्री–पुरुष संबंध, परिवार–समाज व बस्तियों की दशा आदि से संबंधित बहुत सारी बातें विमर्श के केंद्र में शामिल होंगी।" आदिवासी अस्मिता पर विचार करते हुए

---

* शोधार्थी, पीएचडी हिन्दी [illegible] हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय

उपरोक्त सभी चीजों पर गंभीरता से ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके अभाव में हम आदिवासी अस्मिता को संपूर्णता में नहीं समझ सकते हैं।

आदिवासी संस्कृति में प्रकृति के नियम के अंतर्गत संग्रह की अपेक्षा त्याग, प्रतिशोध की अपेक्षा दया, क्षमा आदि को विशेष महत्व दिया जाता है क्योंकि आदिवासी समाज की जरूरतें बिल्कुल सरल, सहज व सामान्य तथा सीमित हैं। किसी भी वस्तु का एकत्रीकरण इनकी संस्कृति में नहीं है, इनके यहाँ प्रकृति पूजा का विशेष महत्व है। इनके पूजा स्थल कोई इमारत या भवन नहीं होते बल्कि खुला आकाश होता है, जहाँ कभी भी पूजा–पाठ कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में ब्लॉगर अपनी पोस्ट 'आदिवासी दर्शन' में लिखते हैं– "आदिवासी संस्कृति, सभ्यता और व्यवहार सभी धर्मों से बढ़कर है, पहले खुद को समझो बाद में अपने आदिवासी होने पे गर्व करो, जब तक आप आदिवासी क्या है? यह समझेंगे ही नहीं तब तक आप अपने आप में 'गर्व' नहीं कर सकोगे क्योंकि आपकी नजर में आदिवासी अर्थ जैसे फिल्मों में दिखाते हैं वैसा हिप–हिप–हुर्रे, झिंगालाला हो हो, अधनंगे, चोर–लूटेरे, जंगली, इंसान को खाने वाला ही है, मैं खुद को आदिवासी होने पर गर्व करता हूं, क्योंकि ...हम इस देश के मालिक हैं और सदियों से इस देश में निवास करते हैं, आदिवासी का अर्थ ही किसी भौगोलिक स्थान पे अनादिकाल से निवास करना है और मैं वो आदिवासी हूँ जो भारत में सदियों से रह रहा हूँ, भारत देश का मालिक हूँ।"

अतः आदिवासी संस्कृति और प्रकृति के बीच एक गहरा एवं आत्मीय रिश्ता होता है। यही कारण है कि प्रकृति प्रदत्त वृक्षों को आदिवासियों ने अपने जीवन से जोड़ लिया है जबकि सभ्य कहे जाने वाले और विकसित संस्कृति वाले समाज से प्रकृति का संबंध संघर्षमूलक रहा है। इसलिए वहाँ प्रकृति का दोहन, विनाश या आजकल जो संरक्षण का विचार आया है वह महज भौतिक उपयोगिता स्तर का है। वर्तमान युग में प्रकृति से इनका संबंध सिर्फ वैज्ञानिक विकास, औद्योगिक विकास और वाणिज्यिक विकास तक ही सीमित नजर आता है।

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर लिखते हैं : "आदिवासी की चिंता जल, जंगल, जमीन, भाषा और संस्कृति की है जो आदिवासी अस्मिता के लिए आवश्यक है। दोस्तों इसलिए आदिवासियों की संस्कृति और सभ्यता महान थी, महान है, और महान रहेगी। बस इसे समझने की जरुरत है। धरती को बचाने के लिए आज नहीं, तो कल आदिवासियों के रास्ते पर आना ही होगा, क्योंकि लालच पर आधारित अर्थव्यवस्था को जारी रखने से दुनिया नहीं बचेगी। आदिवासियों जैसा प्रकृति के साथ जीना, सह अस्तित्व को स्वीकार करना, भेदभाव को खत्म करना व सभी के अधिकारों की रक्षा करना होगा।"

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर **Dr. Ajay Kharte (Jay Kharte)** लिखते हैं – "भारत की आजादी के उपरांत नये आर्थिक नीतियों के तहत विश्व स्तर पर बनने वाले खुले बाजार की नीतियों ने भारत के आदिवासियों की सामाजिक, सांस्कृतिक अस्तित्व की सुरक्षा की एक बड़ी समस्या खड़ी कर दी है। देशी–विदेशी व्यावसायिक कम्पनियों के बड़े पैमाने पर आदिवासी क्षेत्रों में पूँजी निवेश के कारण संविधान के अस्तित्व का ही संकट खड़ा हो रहा है। आदिवासियों की जीविका का प्रमुख स्रोत जल, जंगल और जमीन की सुरक्षा के लिये बनाये गये संवैधानिक प्रावधानों की उपेक्षा के कारण आदिवासियों के हाथो से बड़े पैमाने पर जमीन और जंगल पर मालिकाना हक निकलता जा रहा है। इतना ही नहीं इनके क्षेत्रों मे विकास के नाम पर उनकी जमीन छीन कर उन्हें विस्थापित किया गया जिसके कारण उन्हें अपनी रोजी रोटी के लिये पलायन झेलना पड़ रहा है।"

इस सन्दर्भ में ब्लॉगर लिखती हैं : "हमें मजबूती के साथ सरकार को बताना होगा कि हम पहले आदिवासी हैं, बाद में भी आदिवासी हैं और आखिरी में भी आदिवासी हैं, हम आदिवासी ही भारत देश के प्रथम निवासी और संरक्षक हैं। हमें अपनी आदिवासी पहचान की मज़बूत दावेदारी करने के साथ–साथ अपनी भाषा एवं संस्कृति को भी बचाना होगा।"

निष्कर्ष रूप में कहें तो आदिवासियों की उपस्थिति कथित मुख्यधारा के समाज के साथ उसके साहित्य में नगण्य रही है, जबकि आदिवासी हमारे व्यापक समाज के ही अभिन्न अंग है इसलिए उनके अस्तित्व के बगैर समाज का स्वाभाविक विकास नहीं हो सकता। आदिवासी विमर्श, साहित्य के

साथ–साथ समाज को भी प्रभावित करने का काम करता है। कई आदिवासी समुदायों की भाषा और संस्कृति लुप्त होने की कगार पर है। अतः कोई भी देश अपनी विविधता में ही सर्वश्रेष्ठ तरीके से जीवित रह सकता है। एक देश के तौर पर हमारे दायित्व को गंभीर तरीके से बोध कराने का काम आदिवासी विमर्श कर सकता है। इसलिए आदिवासी भाषाओं का संरक्षण और संवर्धन हम सबकी जिम्मेदारी है तभी हमारे देश की संस्कृति और ज्यादा विशिष्ट और समृद्ध होगी।

सन्दर्भ :

1. http://adiwasidarsan-blogspot-com/p/blog&page_88-html] date& 04/09/2020] time& 06:07
2. रमणिका गुप्ता, युद्धरत आम आदमी (त्रैमासिक), अंक– 90, जनवरी– मार्च, 2008, पृ. 81.
3. http://adiwasidarsan-blogspot-com/p/blog&page_88-html] date& 04/09/2020] time& 06:30
4. https://jaykharte-blogspot-com/2018/03/blog&post_26-html] 19/04/2020]time 09:10
5. हरिराम मीणा, आदिवासी दुनिया, पृ. 170.
6. https://jaykharte-blogspot-com/2018/03/blog&post_26-html] 17/04/2020] 04:32p-m-
7. https://adivasihunkar-blogspot-com/search/label/%E0%A4%9C%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%A8]17/04/2020]04:42p-m-
8. हरिराम मीणा, आदिवासी दुनिया, नेशल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, संस्करण 2013
9. रमणिका गुप्ता (संपा.), आदिवासी : विकास से विस्थापन, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2010

***

तमसो मा ज्योतिर्गमय

बद्रुका वाणिज्य एवं कला महाविद्यालय

NAAC - पुन:प्रत्यायित, काचीगुड़ा, हैदराबाद

एवं

हिन्दी हैं हम विश्व मैत्री मंच, हैदराबाद

के संयुक्त तत्वावधान में

दो दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी संगोष्ठी - दिनांक 14-15 दिसम्बर 2018

विषय : हिन्दी भाषा, साहित्य एवं भारतीय संस्कृतिः वैश्विक परिदृश्य

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि सुश्री / श्री / श्रीमती / डॉ. / प्रो. ...हिमांशु राय...

दिनांक ...14-15 दिसंबर 2018......... को हिन्दी भाषा, साहित्य एवं भारतीय संस्कृतिः वैश्विक परिदृश्य विषय पर आयोजित दो दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी संगोष्ठी में सत्राध्यक्ष / आलेख - प्रस्तोता / सत्र-संचालक / प्रतिभागी के रूप में भाग लिया।

डॉ. डी. विद्याधर	श्री राजेश अग्रवाल	डॉ. के. सोमेश्वर राव
संगोष्ठी संयोजक	संगोष्ठी निदेशक	प्राचार्य

सत्यमेव जयते

पंजीकरण सं./ Regn. No. ....

भारत सरकार / GOVERNMENT OF INDIA

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
Commission for Scientific and Technical Terminology

मानव संसाधन विकास मंत्रालय / Ministry of Human Resource Development

उच्चतर शिक्षा विभाग / Department of Higher Education

वैतशआ

Digital India

सहभागिता प्रमाण-पत्र / CERTIFICATE OF PARTICIPATION

श्री/सुश्री/डॉ./प्रो. / Mr./Ms./Dr./Prof.

हिमांशु राय

राष्ट्रीय कार्यशाला/संगोष्ठी का शीर्षक / Title of the National Workshop/Seminar

पत्रकारिता के विकास में हिन्दी की भूमिका एवं तकनीकी शब्दावली का महत्व

स्थान / Venue

हैदराबाद विश्वविद्यालय

अवधि / Duration

5-6 अप्रैल 2018

व्याख्यान का शीर्षक / The title of the lecture

हिन्दी पत्रकारिता एवं हिन्दी के ब्लॉग्स

[signature]

प्रभारी अधिकारी/Officer-in-charge

[signature]

प्रोफेसर अवनीश कुमार/Professor Avanish Kumar

अध्यक्ष / Chairman

दिनांक / Date: 06.4.2018

पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066 / West Block 7, Ramakrishnapuram, New Delhi - 110066